
THE

MUHOORTA CHINTAMANI

OF

Rama Daivajnya

WITH

Hindi Commentary of Pyarey Lal Misra.

EDITED BY

Pt. SITARAM BHATTA

PUBLISHED BY

CHHANNOO LAL GYANCHAND

SANSKRIT PUSTAKALAY,

Kachourigali.

BENARES CITY.

First Edition] 1939 [*Price 1 Rupee*



श्रीदैवज्ञरामविरचितः—

मुहूर्तचिन्तामणिः।

पं० प्यारेलालमिश्रकृतअन्वय-भाषाटीकासहितः।

पं० सीतारामभट्टेन संशोधितः

पं० छन्नूलाल-ज्ञानचन्द

संस्कृत-पुस्तकालय, कचौड़ीगली

बनारस सिटी।

इत्यनेन प्रकाशितः।

प्रथमावृत्तिः } सम्वत् १९९६ { मूल्यं रूप्यकैकम्

प्रकाशक–
पं० छन्नूलाल–ज्ञानचन्द
संस्कृत–पुस्तकालय, कचौड़ीगली
बनारस सिटी।



मुद्रक–
बी० के० शास्त्री;
ज्योतिष प्रकाश प्रेस, विश्वेश्वरगंज,
बनारस सिटी।

विषयानुक्रमणिका

विषय | पृष्ठ

शुभाशुभप्रकरणम्

मङ्गलाचरणम् १
तिथीशचक्र २
नन्दादितिथिसंज्ञाज्ञापकचक्र ... ३
तिथिवारमृत्युयोगचक्र ... ४
नक्षत्रवारदग्धयोगचक्र ... ४
अधम तिथि चक्र ... ५
दग्धविपाख्यहुताशनचक्र ... ६
यमघंटयोग ६
यमघंटचक्र ७
शून्य तिथि चक्र ८
निंद्य तिथि और निन्द्य नक्षत्र ८
चैत्रादि मासों में शून्य नक्षत्र ९
चैत्रादिमासों में शून्य राशियाँ ९
प्रतिपदादि तिथियों में दग्ध लग्न १०
पूर्वोक्त दुष्ट योगों का परिहार १०
शुभ कर्मों में निषिद्ध योग ... १०
गृहप्रवेश, यात्रा तथा विवाह में त्याज्य वार, नक्षत्र ... ११
आनन्दादि अट्ठाइस योग ... ११
इन योगों को जानने का उपाय १२
आनन्दादि चक्र १३
दुष्टयोगों का परिहार ... १४
संपूर्ण दोषों का नाशक रवियोग १४
सर्वार्थसिद्धियोग ... १४
सर्वार्थसिद्धियोग चक्र ... १५

विषय | पृष्ठ

उत्पातादियोगचतुष्टयचक्र ... १६
निन्द्ययोगों का परिहार ... १६
संपूर्ण कृत्यों में वर्जनीय वस्तुएँ १६
सूर्य और चन्द्रग्रहण के त्याज्य नक्षत्र और दिन १७
त्याज्य नक्षत्र और योग आदि १८
पक्षरन्ध्र तिथि और उनका परिहार १९
कुलिक आदि दुष्ट मुहूर्त ... १९
प्रकारान्तर से वर्जित मुहूर्त ... २०
देशभेद से होलाष्टक का निषेध २१
चन्द्रमा अनुकूल होने से दुष्ट योग भी शुभ होते हैं ... २२
अन्य परिहार ... २२
भद्रा आदि का परिहार ... २२
भद्राकाल ... २३
भद्राके मुख और पुच्छ का विचार २३
भद्रा का निवास और फल ... २४
शुक्रास्त आदि में वर्जनीय कार्य २४
सिंह और मकरराशि में स्थित बृहस्पति का दोष ... २५
सिंहस्थ बृहस्पति दोष का परिहार २५
लुप्त संवत्सर-दोष और उसका परिहार २७
होरासिद्धि के लिये वारप्रवृत्ति २७
कालहोरा २८
कालहोरा का प्रयोजन ... २९
संपूर्ण कार्यों में निषिद्ध मन्वादि और युगादि तिथियाँ ... २९

विषय	पृष्ठ
नक्षत्रप्रकरणम्	
नक्षत्रों के स्वामी ...	... ३०
नक्षत्र-स्वामियों का चक्र	... ३१
नक्षत्रों की संज्ञा ...	... ३१
नक्षत्रों की अधोमुखादि संज्ञायें	३३
मूँगा और दाँत आदि धारण करने का मुहूर्त ...	... ३४
नवीन वस्त्र के जलने आदि का शुभाशुभ फल	... ३४
वस्त्रनवधाचक्र ...	... ३५
निन्द्यकाल में भी वस्त्रधारण	... ३५
राजदर्शन, मद्यारम्भ और गोक्रय-विक्रय का मुहूर्त	... ३६
पशु पालने का मुहूर्त	... ३६
औषधि और सूचीकर्म का मुहूर्त ...	... ३६
क्रय-विक्रय मुहूर्त का निषेध तथा क्रयमुहूर्त	... ३७
विक्रय और विपणि का मुहूर्त	३८
घोड़ा और हाथी क्रय का मुहूर्त	३८
गहना बनवाने का मुहूर्त	... ३९
मुद्रापातन और वस्त्रक्षालन-मुहूर्त ...	... ३९
कुन्तवर्मादि के धारण और शय्यासनादि के भोग का मुहूर्त	... ४०
नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञायें	४१
अन्धाक्षादि चक्र	... ४१
अन्धाक्षादि नक्षत्रों का फलाफल	४२
धन के व्यवहारमें निषिद्ध नक्षत्रादि	४२
जलाशय और नृत्यारंभ का मुहूर्त	४२
नौकरी करने का मुहूर्त	... ४३
द्रव्यप्रयोग और ऋणग्रहण का मुहूर्त	... ४३
हल चलाने का मुहूर्त	... ४४
बीजोप्ति मुहूर्त	... ४५
राहुभात् फणिचक्र	... ४५
सूर्यभुक्तभात् हलचक्र	... ४५
शिरामोक्ष और विरेकादि के मुहूर्त	४६
धान्यच्छेदन मुहूर्त	... ४६
कणमर्दन और सस्य के आरोपण का मुहूर्त	... ४७
धान्य-स्थिति और धान्यवृद्धि का मुहूर्त	... ४७
शान्तिक और पौष्टिक मुहूर्त	४८
होमाहुति मुहूर्त	... ४८
अग्निवास और उसका शुभाशुभत्व	४९
नवान्नभक्षण-मुहूर्त	... ४९
नौकाघट्टन-मुहूर्त	... ५०
वीरसाधन व अभिचार का मुहूर्त	५०
रोग शान्त होने पर स्नान का मुहूर्त	... ५०
शिल्पविद्यारम्भमुहूर्त	... ५१
संधान का मुहूर्त	... ५१
परीक्षा मुहूर्त	... ५१
सब शुभ कार्यों में लग्नशुद्धि	... ५२
जिन नक्षत्रों में ज्वर आने से मृत्यु हो जाती है अथवा जितने दिनों तक ज्वर रहता है उसका वर्णन	५२
रोगी के शीघ्र ही मरने का योग	५३
प्रेतदाह का मुहूर्त	... ५४
त्रिपुष्करयोग	... ५५

विषय	पृष्ठ
लिङ्गदाह का निषिद्धकाल ...	५५
अभुक्त मूलघटी ...	५७
मूल और आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न सन्तान का शुभाशुभ फल	५७
मूल का निवास ...	५८
गण्डान्त आदि में जन्मे हुए बालकका अरिष्ट और उसका परिहार	५८
अश्विनी आदि नक्षत्रों की संख्या	५९
नक्षत्रों की आकृति ...	६०
जलाशय और देवप्रतिष्ठा आदि का मुहूर्त ...	६१

संक्रान्तिप्रकरणम्

विषय	पृष्ठ
संक्रान्ति नाम, वार तथा नक्षत्रों का चक्र ...	६२
दिनरात्रिके विभागसे संक्रान्तियों का शुभाशुभ फल ...	६४
शेष संक्रान्तियों के नाम ...	६४
संक्रान्ति का पुण्यकाल ...	६४
रात्रि में संक्रान्ति का विशेष पुण्यकाल ...	६५
अर्धरात्रि में संक्रान्ति का विचार ...	६५
सन्ध्याकाल का प्रमाण ...	६५
संक्रान्तियों का विशेष पुण्यकाल	६६
सायन संक्रान्तियों का पुण्यकाल	६६
नक्षत्रों की सम, बृहत् और जघन्य संज्ञा ...	६६
उक्त संज्ञाओं का प्रयोजन ...	६७
कर्क संक्रान्ति के रविवारादि में अब्दविंशोपक ...	६८
कर्कसंक्रान्ति में अब्दविंशोपक चक्र	६८
संक्रान्तियों के वाहन, वस्त्र, आयुध, भक्ष्य और लेपन आदि का विचार	६८
संक्रान्ति वश शुभाशुभ फल	७१
सूर्यादि के बली रहते कार्य और संक्रान्ति करते हुए ग्रहों का बल	७२
अधिक मास और क्षय मास का निर्णय ...	७२

अथ गोचरप्रकरणम्

विषय	पृष्ठ
सूर्यादि ग्रहों का शुभ व विद्ध विचार ...	७३
वामवेध और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का बल ...	७६
क्रमवेध और विपरीत भेद में मतभेद ...	७६
ग्रहण नक्षत्र का फल ...	७७
चन्द्रमा का विशेष शुभाशुभत्व	७८
प्रकारान्तर से चन्द्रमा का शुभाशुभ फल ...	७८
ग्रहों की शान्ति के लिये नवरत्नों का धारण ...	७९
प्रत्येक ग्रह की प्रसन्नता के लिये माणिक्यादि का धारण ...	७९
ताराओं के नाम और फल ...	७८
दुष्ट तारा का परिहार ...	८०
चन्द्रमा की अवस्था ...	८१
अवस्थाओं के नाम और फल	८२
ग्रहदोष की शान्ति के लिये औषधयुक्त जल से स्नान ...	८२

विषय	पृष्ठ
ग्रह गन्तव्य राशि का फल कितने दिन पहले देने लगते हैं ...	८३
दुष्टयोगादिकी शान्ति के लिये दान	८३
राश्यन्तर में गये हुए ग्रहों के फल देने का काल ...	८४

संस्कारप्रकरणम्

विषय	पृष्ठ
प्रथम रजोदर्शन उत्तम, मध्यम और निकृष्ट नक्षत्र ...	८५
निन्दित प्रथम रजोदर्शन ...	८५
प्रथम रजस्वला के स्नान का मुहूर्त	८६
गर्भाधान	८६
गर्भाधान में लग्नबल ...	८७
सीमन्तोन्नयनमुहूर्त ...	८८
गर्भाधान से लेकर प्रसव पर्यन्त महीनों के स्वामी ...	८८
पुंसवन का मुहूर्त ...	८९
जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त	८९
प्रसूता स्त्री के स्नान करनेका मुहूर्त	९०
प्रथम आदि महीनों में बालक के दांत निकलने का फल ...	९०
दोलारोहण का मुहूर्त ...	९१
जलपूजा का मुहूर्त ...	९२
अन्नप्राशन का मुहूर्त ...	९२
अन्नप्राशन के लिए लग्न-शुद्धि	९३
अन्नप्राशन मुहूर्त में ग्रहों का फल	९४
बालकों को भूमि में बैठाने का मुहूर्त ...	९४
बालक की जीविका-परीक्षा ...	९६
ताम्बूलभक्षण मुहूर्त ...	९६
कर्णवेध मुहूर्त ...	९६
कर्णवेध में लग्नशुद्धि ...	९६
मुंडन आदि में निषिद्ध काल	९७
शुक्र और बृहस्पतिकी बाल्यावस्था	९८
मतान्तर से बाल्य-वृद्धावस्था	९८
चूड़ाकर्म का मुहूर्त ...	९८
जिसकी माता गर्भवती हो, उसके मुंडन का मुहूर्त ...	९९
तारा-दोष का अपवाद ...	१००
मुंडन आदि कार्योंमें निषिद्ध काल	१००
साधारण और आदि का मुहूर्त और निषेध ...	१०१
निमित्तवश क्षौरकर्म ...	१०१
क्षौरकर्म में राजाओं के लिये विशेष ...	१०१
अक्षरारम्भ का मुहूर्त ...	१०२
विद्यारम्भ का मुहूर्त ...	१०२
वर्णकर्म से यज्ञोपवीत का समय	१०३
यज्ञोपवीत के नक्षत्रादि ...	१०४
यज्ञोपवीत में लग्नदोष ...	१०४
यज्ञोपवीत में लग्न के गुण ...	१०५
वर्णेश और शाखेश ...	१०५
शाखेश और वर्णेश का प्रयोजन	१०६
जन्म-मासादि का यज्ञोपवीत में अपवाद ...	१०६
बृहस्पति का बल ...	१०६
गुरुदोषापवाद ...	१०७
यज्ञोपवीत में निषिद्ध समय	१०७
सूर्यादि ग्रहों के नवांश में यज्ञोपवीत होने का फल ...	१०७
यज्ञोपवीत में चन्द्रनवांश का फल	१०८
केन्द्रस्थित सूर्यादिग्रहों का फल	१०८

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ
यज्ञोपवीत काल में संयुक्त ग्रहों का फल ...	१०९
यज्ञोपवीत में चन्द्रवश शुभाशुभयोग ...	१०९
अनध्यायसंज्ञक तिथियाँ ...	११०
प्रदीप-लक्षण ...	११०
ग्रहौदन के पहले उत्पात होने पर शान्ति का विधान ...	११०
वेदों के भेदसे यज्ञोपवीतके नक्षत्र	१११
यज्ञोपवीतादि में धर्मशास्त्र का विचार ...	१११
छुरिकाबन्धनमुहूर्त ...	११२
केशान्तकर्म का मुहूर्त ...	११२

विवाहप्रकरणम्

विषय	पृष्ठ
विवाहप्रश्नविधि ...	११३
विवाहकारक अन्य योग ...	११४
वैधव्य योग ...	११४
कुलटा और मृतवत्सायोग ...	११५
विवाहभंगयोग ...	११५
जन्मकालिक बालविधवायोग की शान्ति का उपाय ...	११५
प्रश्न के समय प्रथम सन्तान का विचार ...	११६
प्रश्नकाल में साधारण शुभाशुभ फल ...	११६
कन्यावरण मुहूर्त ...	११७
वरबरण अर्थात् फलदानका मुहूर्त	११७
विवाहकाल में ग्रहशुद्धि ...	११८
विवाह के महीने ...	११८
सन्तानभेद से जन्ममासादि अशुभ और शुभ विवाह ...	११८
ज्येष्ठ मास में विशेष ...	११९
विवाहादि विशेष का निषेध	११९
विपत्ति में विवाहविचार ...	११९
उक्त विषय पर विशेष ...	११९
दुष्ट नक्षत्रों में उत्पन्न वरकन्या का फल ...	१२०
अष्टकूट ...	१२१
वर्णकूट ...	१२२
वश्यकूट ...	१२२
ताराकूट ...	१२३
योनिकूट ...	१२३
ग्रहमैत्रीकूट ...	१२४
गणकूट ...	१२५
गणों का फल ...	१२६
भकूट ...	१२७
दुष्ट भकूट का उद्धार ...	१२७
दुष्ट गणकूट, भकूट और ग्रहकूट का परिहार ...	१२८
नाड़ी विचार ...	१२८
अन्य प्रकार का वर्गकूट ...	१२९
नक्षत्र और राशि के एक और भिन्न होने का विचार ...	१२९
राशियों के स्वामी ...	१३०
नवांशविधि ...	१३१
होरा ...	,,
त्रिंशांश ...	,,
द्रेष्काण ...	,,
द्वादशांशविधि ...	१३२
गण्डान्त दोष ...	,,
कर्तरीदोष ...	१३३
संग्रहदोष ...	१३४

विषय	पृष्ठ
अष्टमस्थानका दोष और उसका परिहार ...	१३४
विषघटी दोष ...	१३५
दिन के पन्द्रह मुहूर्त ...	१३६
रात्रि के मुहूर्त ...	१३७
आदित्यादि वारोंमें निषिद्ध मुहूर्त	,,
विवाह के नक्षत्र और अभिजित् नक्षत्र का नाम ...	१३८
ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध ...	,,
पञ्चशलाकाचक्र ...	,,
सप्तशलाकाचक्र में ग्रहों द्वारा नक्षत्रों का वेध ...	१३९
सप्तशलाकाचक्र ...	,,
क्रूरग्रहों से विद्धन क्षत्रों का दोप और उसका परिहार ...	१४०
लत्तादोप ...	,,
पातयोग ...	१४०
क्रान्तिसाम्ययोग ...	१४१
खार्जूरदोप ...	,,
उग्रग्रहदोप ...	,,
पातादि दोषों पर विशेष ...	१४२
कुलिकदोप ...	,,
दग्धातिथि ...	१४३
जामित्रदोष ...	,,
एकार्गल आदि दोषोंका परिहार	१४४
देशभेद से उक्तदोपों का परिहार	,,
दश दोप ...	,,
उक्त दस दोषों का फल ...	१४५
दक्षिण देशों में प्रसिद्ध बाणदोप	१४५
अन्य बाणदोष ...	१४६
बाणदोष का परिहार ...	१४७

विषय	पृष्ठ
ग्रहों की दृष्टि ...	१४८
लग्नस्थान की शुद्धि ...	१४८
लग्न से सातवें भाव की शुद्धि	१४९
अन्य प्रकार से लग्न और सातवें भाव की शुद्धि ...	१४९
सूर्यसंक्रान्ति का दोष ...	१५०
सूर्यादि ग्रहों की संक्रान्तियों में निषिद्ध काल ...	१५०
पंगु और अन्धादि लग्नदोप ...	१५०
मतान्तर से पंगु आदि दोप ...	१५१
पंग्वादि लग्नों का फल ...	१५१
शुभ नवांश ...	१५२
विहित नवांशों में भी किसी का निषेध ...	१५२
सर्वथा लग्नभङ्गयोग ...	१५२
विवाहकालिक शुभग्रह ...	१५३
कर्तरी आदि महादोपों का परिहार ...	१५३
वर्षा आदि अनेक दोपों का परिहार ..	१५४
अन्य दोपों का परिहार ...	१५५
सामान्य दोपों का परिहार ...	१५५
लग्न का विंशोपक बल ...	१५६
श्वश्र्वादि के सुख दुख जानने का उपाय ...	१५६
संकरवर्णों के विवाह का मुहूर्त	१५७
गान्धर्वादि विवाह में और त्रिपदीचक्र में नक्षत्रशुद्धि ...	१५७
सूर्य के नक्षत्र से अशुभ और शुभनक्षत्र ...	१५८

विषय	पृष्ठ
विवाह से पूर्व होनेवाले कार्यों का मुहूर्त ...	१५८
वेदी के लक्षण तथा मंडप का उद्वासन ...	१५८
मंडपमें खम्भ गाड़ने का मुहूर्त	१५९
स्तम्भचक्र ...	१५९
गोधूलिप्रशंसा ...	१५९
समयभेद से गोधूलिकाल ...	१६०
गोधूलि-समय में त्याज्य दोष	१६१
सूर्य की स्पष्टगति ...	१६१
सूर्य स्पष्ट करने की रीति ...	१६२
लग्नघटिकासाधनार्थ लग्न का भुक्तांशसाधन ...	१६२
लग्न और सूर्य से इष्टकालसाधन	१६३
एक स्थान का लग्नमान ...	१६४
इष्टकाल बनाने की रीति ...	१६४
शुभकार्यों में अवश्य त्यागने योग्य दोष ...	१६५
कन्या आदि के तेल आदि लगाने की संख्या ...	१६७

वधूप्रवेशप्रकरणम्

वधूप्रवेश का मुहूर्त ...	१६७
विवाह के बाद प्रथम वर्ष के महीनों में स्वामी के घर में स्त्री के रहने का फल ...	१६८

द्विरागमनप्रकरणम्

द्विरागमन का मुहूर्त ...	१६९
शुक्रदोष का परिहार ...	१७०

विषय	पृष्ठ

अग्न्याधानप्रकरणम्

लग्नशुद्धि ...	१७१
अग्न्याधानकालिक लग्नवश से यज्ञकारक योग ...	१७२

राज्याभिषेकप्रकरणम्

नक्षत्र तथा लग्नशुद्धि ...	१७३
राज्याभिषेक काल में ग्रहस्थिति का फल ...	१७३
सम्पत्ति तथा पृथ्वीस्थिति के दो योग ...	१७४

यात्राप्रकरणम्

प्रश्नकालिक शुभयात्रायोग ...	१७४
प्रश्नकालिक अशुभयात्रा योग	१७५
प्रश्नद्वारा यात्रा की दिशा का निर्णय ...	१७५
मासभेद से यात्रा के शुभाशुभ भेद और तारा ...	१७५
यात्रा में निषिद्ध तिथि और विहित तिथि ...	१७६
वारशूल और नक्षत्रशूल ...	१७८
कालविशेष में विशेष नक्षत्रों का निषेध ...	१७९
यात्रा में मध्यम नक्षत्र तथा कई निषिद्ध नक्षत्रों की त्याज्य घटी	१७९
अन्य मत से त्याज्य घटी ...	१८०
नक्षत्रों की जीवपक्षादि संज्ञा	१८०
जीवपक्षादि का विशेष फल ...	१८०

विषय	पृष्ठ
युद्धयात्रा के उपयोगी कुलाकुल-संज्ञक, तिथि वार और नक्षत्र	१८१
पन्थाराहु का विचार ...	१८२
पन्थाराहुचक्र ...	१८३
पन्थाराहुचक्र फल ...	१८३
पौषादि मासों की प्रतिपदादि तिथियों में पूर्वादि दिशाओं की यात्रा का शुभाशुभ फल ...	१८४
तिथिचक्र ...	१८४
सर्वाङ्क योग ...	१८५
महाडल और भ्रमण योग ...	१८५
हिम्बराख्य योग ...	१८६
घातचन्द्र योग ...	१८६
घातक नक्षत्रपाद ...	१८७
घातक नक्षत्रपादचक्र ...	१८७
घातक तिथियाँ ...	१८७
घातकवार ...	१८८
घातक नक्षत्र ...	१८८
घातकलग्न ...	१८९
कालपाशयोग ...	१९०
परिघदण्ड दोष ...	१९०
अयनशुद्धि ...	१९१
सम्मुख शुक्रदोष ...	१९२
वक्रनीचादिस्थित शुक्रदोष ...	१९२
कालविशेष में शुक्रदोषाभाव तथा अस्तादि विचार ...	१९२
लग्नविशेष का त्याग ...	१९३
मीन और मीन के नवांश का फल तथा शुभ लग्न ...	१९३
अन्य अनिष्ट लग्न ...	१९३
अन्य शुभ लग्न ...	१९४
सम्मुख तथा पृष्ठगत लग्न ...	१९४
शुभलग्न ...	१९४
दिशाओं के स्वामी ...	१९५
दिगीश कहने का प्रयोजन ...	१९५
लालाटिक योग ...	१९६
प्रास्थानिक यात्रायोग ...	१९६
समयबल ...	१९७
लग्नादि बारह भावों के नाम	१९७
यात्रा में ग्रहों का शुभाशुभ फल	१९८
यात्रा के अधिकारी ...	१९८
योगयात्रा ...	१९९
यात्राकालिक योगादि ...	१९९
विजयदशमी की प्रशंसा ...	२०६
यात्रा में चित्त शुद्धि की प्रधानता	२०६
यात्राप्रतिबन्धक कार्य ...	२०७
यात्राविशेष का विचार ...	२०७
यात्रा में त्रिनवमी दोष ...	२०८
यात्राकाल में कर्तव्य विधि ...	२०८
नक्षत्रदोहद ...	२०९
दिग्दोहद ...	२१०
वारदोहद ...	,,
तिथिदोहद ...	,,
यात्रा का अन्य प्रकार ...	२११
दिशाओं के वाहन ...	,,
यात्रा करने का स्थान ...	,,
प्रस्थानविधि ...	२१२
प्रस्थान कितनी दूर पर धरना चाहिये ...	
प्रस्थान की स्थिति का प्रमाण तथा यात्रामें त्याज्य वस्तु ...	२१३
यात्रा के अन्य नियम ...	२१४

विषय — पृष्ठ

आवश्यक यात्रा में अकालवृष्टि की शान्ति ... ,,
शुभ शकुन ... २१५
अशुभ शकुन ... २१६
अन्य शकुन ... २१७
वामभाग में शुभ शकुन ... ,,
दक्षिणभाग में शुभ शकुन ... २१८
साधारण शकुन ... ,,
अशुभ शकुन का उद्धार ... ,,
यात्रा से लौटने पर गृहप्रवेश का मुहूर्त ... २१९
पूर्वोक्त दोषों का पुनः परिगणन ,,
लग्न के दोषों का पुनः परिगणन २२०

वास्तुप्रकरणम्

राशिद्वारा निषिद्ध वासस्थान २२२
ग्रामनिषिद्ध वासस्थान चक्र २२३
इष्ट नक्षत्र व इष्ट आय के द्वारा घर बनाने और विस्तारादि आयों की विधि ... २२४
ध्वज आदि आयों का प्रयोजन २२५
गृहारम्भ में निषिद्ध काल ... २२६
व्यय तथा अंश ... २२७
शालाध्रुवांक ... २२७
ध्रुवादिकों की नामाक्षरसंख्या
ध्रुव आदिक सोलह घरों के नाम २२८
अन्य आचार्य के मत से आय-वार इत्यादि नौ पदार्थों का साधन ... २२९
गृहारम्भ में वृषवास्तु चक्र ... २३०
वृषवास्तुचक्रं सूर्यभात् २३१
गृहारम्भचक्रं सूर्यभात् ... ,,

विषय — पृष्ठ

सौर और चान्द्र महीनों की एकता से घर का दरवाजा २३२
अन्य प्रकार से सौर चान्द्र-मासों की एकता ... ,,
तिथियों के क्रम से द्वार का निषेध ... २३३
गृहारम्भ में पञ्चाङ्गशुद्धि ... २३४
देवालय आदि के स्थान-भेद से राहु का मुख ... ,,
राहुचक्र ... २३५
घर में कूप बनाने की विधि २३६
गृह-कूपचक्र ... ,,
मकान के भीतर कहाँ कौन घर बनाना चाहिये ... ,,
गृहायुर्दाययोग ... २३७
लक्ष्मीयुक्त ग्रहयोग ... २३८
परहस्तगामी योग ... ,,
गृहारम्भ में शुभसूचक काल
द्वारचक्र ... ,,
अन्य द्वारचक्र ... २४०

गृहप्रवेशप्रकरणम्

गृहप्रवेशमुहूर्त ... २४१
जीर्णगृहप्रवेश ... ,,
वास्तुपूजा आदि के नक्षत्र ... २४२
वामसूर्य ... २४३
वामसूर्यचक्र ... ,,
तिथियों के क्रम से पूर्व आदि २४४
द्वारवाले घरों में प्रवेश ...
गृहप्रवेश में कलशवास्तुचक्र ,,
कलशवास्तुचक्र ...
गृहप्रवेशके पश्चात् कर्तव्य विधि २४५
कवि-वंश-वर्णन ... २४६

पुस्तक मिलने का पता—

पं० छन्नूलाल ज्ञानचन्द

संस्कृत-पुस्तकालय,

कचौड़ीगली, बनारस सिटी।



मुहूर्त्तचिन्तामणिः

भाषाटीकया समन्वितः

शुभाशुभप्रकरणम्

मंगलाचरणम्

गौरीश्रवःकेतकपत्रभङ्गमाकृष्य हस्तेन ददन्मुखाग्रे ।
विघ्नं मुहूर्ताकलितद्वितीयदन्तप्ररोहो हरतु द्विपास्यः ॥१॥

अन्वयः—गौरीश्रवःकेतकपत्रभंगं हस्तेन आकृष्य मुखाग्रे ददत् (अतएव) मुहूर्ताकलितद्वितीयदन्तप्ररोहो द्विपास्यः (युष्माकं) विघ्नं हरतु ॥ १ ॥

भाषा—श्रीपार्वतीजी के कान में स्थित केतकी के फूल के दल को सूँड़ से लेकर ओष्ठ पर धरते समय मुहूर्त्त भर दूसरे दाँत के सदृश करनेवाले श्रीगणेशजी हमारे विघ्न को हरें ॥ १ ॥

ग्रन्थरचना का कारण

क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भम् ।
अनन्तदैवज्ञसुतः स रामो मुहूर्तचिन्तामणिमातनोति ॥२॥

अन्वयः—अनन्तदैवज्ञसुतः स रामः क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भं मुहूर्तचिन्तामणिं आतनोति ॥ २ ॥

भाषा—गर्भाधानादि अनेक प्रकार की क्रियाओं के करने या न करने योग्य शुभ शुभाशुभ काल के जानने में कारण और थोड़े ही शब्दों में मुख्य अर्थ को अवकाशपूर्वक कहनेवाले इस मुहूर्तचिन्तामणि नामक

ग्रन्थ की रचना अनन्त ज्योतिर्विद् के पुत्र प्रसिद्ध श्रीरामाचार्यजी करते हैं। मुहूर्तचिन्तामणि के दो अर्थ हैं। पहिला यह कि दिन और रात्रि के पन्द्रहवें भाग को और किस कार्य को करने के लिए विचारे हुए शुभाशुभ काल को मुहूर्त्त कहते हैं। उसके शुभाशुभत्व के विचारने के लिये जितने ग्रन्थ हैं उन सब में श्रेष्ठ। दूसरा अर्थ यह है कि वाञ्छित फल देनेवाले मणि के सदृश वाञ्छित मुहूर्तों का जनानेवाला ॥ २ ॥

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥३॥

अन्वयः—वह्निकौ, गौरी, गणेशः, अहिः, गुहः, रविः, शिवो, दुर्गा, अन्तको, विश्वे, हरिः, कामः, शिवः, शशी, (एते) तिथीशाः (ज्ञेयाः) ॥ ३ ॥

भाषा—अग्नि, ब्रह्मा, दुर्गा, गणेश, सर्प, कार्त्तिकेय, सूर्य, शिव, दुर्गा, यम, विश्वेदेव, हरि, कामदेव, शिव और चन्द्रमा, ये देवता क्रम से प्रतिपदादि पन्द्रह तिथियों के स्वामी हैं, अर्थात् प्रतिपदा के अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया के पार्वती, चतुर्थी के गणेश, पंचमी के सर्प, षष्ठी के कार्त्तिकेय, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी के शिव, नवमी के दुर्गा, दशमी के यम, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशी के हरि, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव, पूर्णमासी के चन्द्रमा और अमावस के पितर स्वामी हैं। जिन तिथियों के जो स्वामी हैं, उन देवताओं की पूजा वा प्रतिष्ठा आदि उन्हीं तिथियों में करने से वे शुभदायक होते हैं ॥ ३ ॥

तिथिस्वामीबोधक चक्र।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
अग्नि	ब्रह्मा	पार्वती	गणेश	सर्प	कार्त्तिकेय	सूर्य	शिव	दुर्गा	यम	विश्वेदेव	हरि	काम	शिव	चन्द्र	पितर

तिथियों की नन्दादि संज्ञा और उनका शुभाशुभत्व—

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः।
सितेऽसिते शस्तसमाधमाः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ॥४॥

अन्वयः—सिते (शुक्ले) नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णा इति तिथ्यः अशुभमध्यशस्ताः (ज्ञेयाः) । असिते (कृष्णपक्षे) शस्तसमाऽधमाः स्युः । च (पुनः) सितज्ञभौमार्किगुरौ (क्रमेण) सिद्धाः (सिद्धयोगाः) स्युः ।। ४ ।।

भाषा—नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा, ये प्रतिपदा से पञ्चमी पर्यन्त, षष्ठी से दशमी पर्यन्त और एकादशी से पूर्णमासी पर्यन्त तिथियों की संज्ञा हैं अर्थात् प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी–इनकी नन्दा संज्ञा द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी–इनकी भद्रा संज्ञा; तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी–इनकी जया संज्ञा; चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी रिक्तासंज्ञा और पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी और अमावस–इनकी पूर्णा संज्ञा है । ये तिथियाँ क्रम से शुक्लपक्ष में अच्छे कार्य के लिए अधम, मध्यम और कृष्णपक्ष में उत्तम, मध्यम, अधम हैं, अर्थात् शुक्लपक्ष की प्रतिपदा अधम, षष्ठी मध्यम, एकादशी उत्तम और कृष्णपक्ष में प्रतिपदा उत्तम, षष्ठी मध्यम, एकादशी अधम है । ऐसे ही भद्रादि तिथियों में भी जानना चाहिए और और यही तिथियाँ क्रम से शुक्र, बुध, मंगल, शनैश्चर, वृहस्पति इनके दिनों में हो, अर्थात् शुक्र के दिन नन्दा, बुध के दिन भद्रा, मंगल के दिन जया, शनैश्चर के दिन रिक्ता और बृहस्पति के दिन पूर्णा हो तो किये हुए कार्य की सिद्धि करनेवाली होती है इस प्रकार इसका सिद्धा भी नाम है ।। ४ ।।

नन्दादितिथि ज्ञापकचक्र

१ ६ ११	२ ७ १२	३ ८ १३	४ ९ १४	५ १० १५
नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
शु०	बु०	मं०	श०	बृ०
सिद्धा	सिद्धा	सिद्धा	सिद्धा	सिद्धा

सूर्यादि वारों में निषिद्ध तिथि और निषिद्ध नक्षत्र

नन्दाभद्रानन्दिकाख्या जया च रिक्ताभद्रापूर्णसंज्ञाऽधमार्कात् ।
याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात् ।।५।।

अन्वयः—अर्कात् (क्रमेण) नन्दा, भद्रा, नन्दिकाख्या, जया, रिक्ता, भद्रा, पूर्णसंज्ञा अधमा स्यात् । च (पुनः) रवेः, याम्यं त्वाष्ट्रं, वैश्वदेवं धनिष्ठा, अर्यम्णं, ज्येष्ठा, अन्त्यं (क्रमेण) दग्धभं स्यात् ।। ५ ।।

भाषा—सूर्यादि वारों में नन्दा, भद्रा, नन्दा, जया, रिक्ता, भद्रा पूर्णा ये तिथियाँ क्रम से मृतसंज्ञक हैं, अर्थात रविवार को नन्दा, सोमवार को भद्रा, मंगल को नन्दा, बुध को जया, बृहस्पति को रिक्ता, शुक्र को भद्रा और शनैश्चर को पूर्णा मृतसंज्ञक होती है । इनमें कोई शुभ कार्य न करना चाहिए ।

तिथिवारमृत्युयोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुधवार	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
१	२	१	३	४	२	५
६	७	६	८	९	७	१०
११	१२	११	१३	१४	१२	१५

भाषा—सूर्यादि वारों में क्रम से भरणी, चित्रा, उत्तराषाढ़, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा और रेवती ये नक्षत्र दग्धसंज्ञक हैं, अर्थात् रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगल को उत्तराषाढ़, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पति को उत्तराफाल्गुनी, शुक्र को ज्येष्ठा और शनैश्चर को रेवती दग्धसंज्ञक हैं । इनमें कोई शुभ कार्य न करना चाहिए ।। ५ ।।

नक्षत्रवारदग्धयोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
भरणी	चित्रा	उत्तराषा.	धनिष्ठा	उत्तराफाल्गुनी	ज्येष्ठा	रेवती

शनैश्चरादि विपरीत दिनों में षष्ठी आदि अधम तिथियाँ और दतून करने का निषेध

षष्ठ्यादितिथयो मन्दाद्विलोमं प्रतिपद्बुधे ।
सप्तम्यर्केऽधमाः षष्ठ्यद्यामाश्च रदधावने ॥६॥

अन्वयः—मन्दात् विलोमं षष्ठ्यादि तिथयः, बुधे प्रतिपत्, अर्के सप्तमी, (अधमाः) च (पुनः) रदधावने षष्ठ्याद्यामाः अधमाः ॥ ६ ॥

भाषा—शनैश्चर से लेकर उलटे क्रम से रविवार तक षष्ठी-सप्तमी आदि सीधे क्रम से अधमसंज्ञक होती हैं अर्थात् शनैश्चर को षष्ठी, शुक्रवार को सप्तमी, बृहस्पति को अष्टमी, बुधवार को नवमी और प्रतिपदा, मंगल को दशमी, सोमवार को एकादशी, रविवार को द्वादशी और सप्तमी, ये अधमसंज्ञक हैं । इनमें कोई शुभ कार्य नहीं करना चाहिये ।

अधम तिथियों का चक्र

शनैश्चर	शुक्र	बृहस्पति	बुधवार	मंगल	सोमवार	रविवार	दिन
६	७	८	९ १	१०	११	१२ ७	तिथि

भाषा—षष्ठी, प्रतिपदा और अमावस, ये तिथियाँ दतून करने में निषिद्ध हैं अर्थात् इनमें दतून न करना चाहिए ॥ ६ ॥

तैल आदि का निषेध

षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतम् ।
नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैः स्नानममाद्रिगोष्वसत् ॥७॥

अन्वयः—षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु (क्रमेण) ना (पुरुषः) तैलपले, क्षुरं, रत नो सेवेत । विश्वदशद्विके तिथौ अभ्यञ्जनं (तथा) अमाद्रिगोषु धात्रीफलैः स्नानं असत् ॥ ७ ॥

भाषा—छठ, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस—इन तिथियों में क्रम से पुरुष तेल, मांस, क्षौर और रति इन कर्मों को न करे, अर्थात् छठ को तेल न लगावे, अष्टमी को मांस न भक्षण न करे, चतुर्दशी को बाल न बनवावे

ओर अमावस को मैथुन न करे। त्रयोदशी, दशमी, दूज—इन तिथियों में उबटन न लगावे। अमावस, सप्तमी, नवमी—इन तिथियों में आँवला के फल से स्नान न करे ॥ ७ ॥

दग्ध, विषाख्य और हुताशन योग

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः ।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च ॥८॥

अन्वयः—सूर्यादिवारे (क्रमेण) सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दाः, वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः, सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशाः तिथयः (क्रमात्) दग्धाः, विषाख्याः, हुताशनाः भवन्ति ॥ ८ ॥

भाषा—रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगल को पञ्चमी, बुधवार को तीज, बृहस्पति को छठ, शुक्रवार को अष्टमी, शनैश्चर को नवमी हो, तो दग्धयोग होता है। रविवार को चौथ, सोमवार को छठ, मंगल को सप्तमी, बुधवार को दुइज, बृहस्पति को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी, शनैश्चर को सप्तमी हो तो विषाख्ययोग होता है और रविवार को द्वादशी, सोमवार को छठ, मंगल को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, बृहस्पति को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनैश्चर को एकादशी हो तो हुताशनयोग होता है ॥ ८ ॥

दग्धविषाख्यहुताशनचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर	वार
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध
४	६	७	२	८	९	७	विषाख्य
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशन

यमघण्टयोग

सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ।
ब्राह्मचंकरोर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्या गमने त्ववश्यम् ॥९॥

अन्वयः—च (तथा) अर्कात् (क्रमेण) मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ब्राह्मंकरः यमघण्टकाः भवन्ति। (इमे) शुभे विवर्ज्याः गमने तु अवश्यं (विवर्ज्याः)॥ ९॥

भाषा—सूर्यादि वारों में मघा, विशाखा, आर्द्रा, मूल, कृत्तिका, रोहिणी और हस्त ये नक्षत्र हों, अर्थात् रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, मंगल को आर्द्रा, बुधवार को मूल, बृहस्पति को कृत्तिका, शुक्रवार को रोहिणी और शनैश्चर को हस्त हो तो यमघण्टयोग होता है। यह योग शुभ कार्यों में वर्जनीय है। परन्तु यात्रा में तो अवश्य वर्जित है।

यमघण्टचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृत्तिका	रोहिणी	हस्त

शून्य तिथियाँ

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलनेत्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दशशिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ।
गोऽष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिताः
ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः॥१०॥
शक्राः पञ्चसितेशक्राद्यग्निविश्वरसाः क्रमात्।

अन्वयः—भाद्रे चन्द्रदृशौ, नभसि अनलनेत्रे, माधवे द्वादशी, पौषे वेदशराः, इषे दशशिवाः, मार्गे अद्रिनागाः, मधौ गोऽष्टौ, उभयपक्षगाः तिथयः बुधैः शून्याः कीर्तिताः। (तथा) ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे क्रमात् शराङ्गाब्धयः शक्राः, पञ्च तथा सिते (शुक्ले) शक्राद्यग्निविश्वरसाः (तिथयः) शून्याः कीर्तिताः॥ १०॥

भाषा—भादों महीने में प्रतिपदा, दुइज-और श्रावण में दुइज, तीज और वैशाख में द्वादशी, पौष में चौथ, पञ्चमी, कुआर में दशमी और एकादशी, अगहन में सप्तमी और अष्टमी और नवमी ये शुक्लकृष्ण दोनों पक्षों की तिथियाँ पण्डितों ने शून्य कही हैं। कार्त्तिक, आषाढ़, फाल्गुन, ज्येष्ठ, मघा इन महीनों में कृष्णपक्ष की पञ्चमी, छठ, चौथ, चतुर्दशी

पञ्चमी अर्थात् कार्त्तिककृष्ण पञ्चमी, आषाढ़कृष्ण छठ, फाल्गुनकृष्ण चौथ, ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशी, माघकृष्ण पञ्चमी भी शून्य है और इन्हीं महीनों के शुक्लपक्ष की चतुर्दशी सप्तमी तीज त्रयोदशी छठ ये तिथियाँ क्रम से शून्य हैं ॥ १० ॥

शून्यतिथिचक्र

भादों	श्रावण	वैशाख	पौष	कुआर	अगहन	चैत्र	कार्तिक	आषाढ़	फाल्गुन	ज्येष्ठ	माघ	मास
१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	५	६	४	१४	५	कृष्ण तिथि
१ २	२ ३	१२	४ ५	१० ११	७ ८	८ ९	१४	७	३	१३	६	शुक्ल तिथि

निन्द्य तिथि और निन्द्य नक्षत्र

तथा निन्द्यं शुभे सार्पं द्वादश्यां वैश्वमादिमे ॥ ११ ॥
अनुराधा द्वितीयायां पञ्चम्यां पित्र्यभं तथा ।
त्र्युत्तराश्च तृतीयायामेकादश्यां च रोहिणी ॥ १२ ॥
स्वातीचित्रे त्रयोदश्यां सप्तम्यां हस्तराक्षसे ।
नवम्यां कृत्तिकाऽष्टम्यां पूभा षष्ठ्यांच रोहिणी ॥ १३ ॥

अन्वयः--तथा शुभे (शुभकार्यें) द्वादश्यां सार्पं निन्द्यं, आदिमे वैश्वम् निन्द्यम्; द्वितीयायां अनुराधा (निंद्या) पञ्चम्यां पित्र्यभम् निंद्यम् तथा तृतीयायां त्र्युत्तराः (निंद्याः) एकादश्यां रोहिणी (निंद्या) त्रयोदश्यां स्वातीचित्रे (निन्द्ये) सप्तम्यां हस्तराक्षसे (निन्द्ये) नवम्यां कृतिका (निन्द्या) अष्टम्यां पूभा (निन्द्या) षष्ठ्यां रोहिणी (निन्द्या) ॥ ११–१३ ॥

भाषा—द्वादशी तिथि में आश्लेषा, प्रतिपदा में उत्तराषाढ़, द्वितीया में अनुराधा, पञ्चमी में मघा, तृतीया में तीनों उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, एकादशी में रोहिणी, त्रयोदशी में स्वाती और चित्रा,

सप्तमी में हस्त और मूल, नवमी में कृत्तिका, अष्टमी में पूर्वभाद्रपद और छठ में रोहिणी निंद्य है। इन तिथियों में ये नक्षत्र हों तो शुभ कार्य न करे ॥ ११-१३ ॥

चैत्रादि मासों में शून्य नक्षत्र

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ ।
वैश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपादग्निपित्र्यभे ॥ १४ ॥
चित्राद्वीशौ शिवाश्व्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे ।
चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारावित्तविनाशदाः ॥ १५ ॥

अन्वयः--चैत्रादिमासे (क्रमेण) कदास्रभे, त्वाष्ट्रवायू, विश्वेज्यौ भगवासवौ वैश्वश्रुती, पाशिपौष्णे, अजपात्, अग्निपित्र्यभे, चित्राद्वीशौ, शिवाश्व्यर्काः, श्रुति-मूले, यमेन्द्रभे (एताः) वित्तविनाशदाः शून्याख्याः ताराः (ज्ञेयाः) ॥ १४-१५ ॥

चैत्र में रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और स्वाती, ज्येष्ठ में उत्तराषाढ़ और पुष्य, आषाढ़ में पूर्वा फाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण में उत्तराषाढ़ और श्रवण, भादौं में शतभिषा और रेवती, कुआर में पूर्व-भाद्रपद, कार्त्तिक में कृत्तिका और मघा, अगहन में चित्रा और विशाखा, पौष में आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, मघा में श्रवण और मूल, फागुन में भरणी और ज्येष्ठा नक्षत्र शून्य हैं। इनमें शुभ कार्य करने से धन का नाश होता है ॥ १४-१५ ॥

चैत्रादि मासों में शून्य राशियाँ

घटो झषो गौर्मिथुनं मेषकन्याऽलितौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशयः ॥ १६ ॥

अन्वयः—चैत्रादौ (क्रमेण) घटः, झषः, गौः, मिथुनम्, मेषकन्यालितौ-लिनः, धनुः, कर्कः, मृगः, सिंह (एते) शून्यराशयः (ज्ञेयाः) ॥ १६ ॥

भाषा--चैत्र में कुम्भ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भादौं में कन्या, कुवार में वृश्चिक, कार्त्तिक में तुला, अगहन में धन, पौष में कर्क, माघ में मकर और फाल्गुन में सिंह शून्य है। इन लग्नों में शुभ कार्य न करना चाहिए ॥ १६ ॥

प्रतिपदादि विषम तिथियों में दग्ध लग्नें

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटेणौ पञ्चास्यनक्रौ मिथुनाङ्गने च ।
चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोन्त्यौ च नेष्टे तिथिशून्यलग्ने ॥

अन्वयः—पक्षादितः ओजतिथौ (क्रमेण) घटेणौ, पञ्चास्यनक्रौ, मिथुनाङ्गने, चापेन्दुभे, कर्कहरी, हयान्त्यौ, गोन्त्यौ (एते) तिथिशून्यलग्ने नेष्टे ॥१७॥

भाषा—शुक्ल और कृष्णपक्ष की विषम तिथियों में ये लग्नें दग्ध-संज्ञक हैं। प्रतिपदा में तुला और मकर, तीज में सिंह और मकर, पञ्चमी में मिथुन और कन्या, सप्तमी में कर्क और धन, नवमी में कर्क और सिंह, एकादशी में धन और मीन, त्रयोदशी में वृष और मीन शून्य हैं। ये लग्नें शून्य हैं इस लिये इनमें कोई शुभ कार्य न करे ॥ १७ ॥

पूर्वोक्त दुष्ट योगों का परिहार

तिथयो मासशून्याश्च शून्यलग्नानि यान्यपि ।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु तु ॥ १८ ॥
पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः ।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ १९ ॥

अन्वयः—मासशून्याः तिथयः, अपि च (पुनः) यानि शून्यलग्नानि (तानि) मध्यदेशे विवर्ज्यानि, इतरेषु (देशेषु) तु न दूष्याणि ॥१८॥ पंग्वन्धकाणलग्नानि, मासशून्याः, राशयश्च गौडमालवयोः (देशयोः) त्याज्याः, अन्यदेशे न गर्हिताः ॥ १९ ॥

भाषा—मासों की शून्य तिथियाँ और शून्य लग्नें मध्यदेश में ही वर्जित हैं, अन्य देशों में नहीं। पंगु, अन्ध और काण लग्नें तथा मासों की शून्य राशियाँ गौड़ और मालव देश में त्याज्य हैं, अन्य देशों में निन्दित नहीं हैं ॥ १८–१९ ॥

शुभ कर्मों में निषिद्ध योग

वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमीतिथौ ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥ २० ॥

बुधानुराधामष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवतीम् ।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां शनिरोहिणीम् ॥ २१ ॥

अन्वयः—पञ्चमीतिथौ हस्तार्कं, सप्तम्यां भौमाश्विनी, षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं, अष्टम्यां बुधानुराधां, दशम्यां भृगुरेवतीं, नवम्यां गुरुपुष्यं, एकादश्यां शनिरोहिणीं च सर्वकार्येषु वर्जयेत् ॥ २०–२१ ॥

भाषा—पञ्चमी तिथि में हस्त नक्षत्र और रविवार, सप्तमी में अश्विनी नक्षत्र और मङ्गलवार, छठ में मृगशिरा नक्षत्र और सोमवार, अष्टमी में अनुराधा नक्षत्र और बुधवार, दशमी में रेवती नक्षत्र और शुक्रवार, नवमी में पुष्य नक्षत्र और बृहस्पतिवार, एकादशी में रोहिणी नक्षत्र और शनिवार हो तो शुभ कर्मों में त्याग देना चाहिए ॥२०–२१॥

गृहप्रवेश, यात्रा और विवाह में क्रम से वर्जनीय वार तथा नक्षत्र

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।
भौमेऽश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ॥ २२ ॥

अन्वयः—गृहप्रवेशे, यात्रायां, च (पुनः) विवाहे, यथाक्रमम् भौमाश्विनीं, शनौ ब्राह्मं, गुरौ पुष्यं, विवर्जयेत् ॥ २२ ॥

भाषा—गृहप्रवेश, यात्रा और विवाह में क्रम से मङ्गल के दिन अश्विनी, शनैश्चर के दिन रोहिणी और बृहस्पति के दिन पुष्य नक्षत्र वर्जित कर दें। अर्थात् मंगल के दिन अश्विनी नक्षत्र हो तो गृहप्रवेश, शनैश्चर के दिन रोहिणी नक्षत्र हो तो यात्रा और बृहस्पति के दिन पुष्य नक्षत्र हो तो विवाह न करना चाहिए ॥ २२ ॥

आनन्दादि अट्ठाइस योग

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो
धातासौम्यौ ध्वाङ्क्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च
छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥ २३ ॥

उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी
शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्याः
प्रवर्द्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥ २४ ॥

अन्वयः—आनन्दाख्यः, कालदण्डः च (पुनः) धूम्रः, धाता, सौम्यः, ध्वांक्षकेतू, श्रीवत्साख्यः, वज्रकं, च, मुद्गरः, छत्रं, मित्रं, मानसं, पद्मलुम्बौ, उत्पातमृत्यू, किल (निश्चयेन) काणसिद्धी, शुभः, अमृताख्यः, मूसलं गदः च मातङ्गरक्षश्चरसुस्थिराख्यप्रवर्धमानाः क्रमेण (एते अष्टाविंशतियोगाः) स्वनाम्ना फलदाः (भवन्ति) ॥ २३–२४ ॥

भाषा—आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातंग, रक्ष, चर, सुस्थिर और प्रवर्द्धमान, ये अट्ठाइस योग अपने नाम के सदृश फल देनेवाले हैं ॥२४॥

इन योगों के जानने का उपाय

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात् ॥ २५ ॥

अन्वयः—अर्के दास्रात्, इन्दौ मृगात्, भौमे सार्पात्, बुधे करात्, गुरौ मैत्रात्, भृगौ वैश्वात्, मन्दे वारुणात् (आनन्दादयो योगाः क्रमेण) गण्याः ॥ २५ ॥

भाषा—रविवारको अश्विनी से, सोमवार को मृगशिरा से, मंगल को आश्लेषा से, बुध को हस्त से, बृहस्पति को अनुराधा से, शुक्र को उत्तराषाढ़ से, शनैश्चर को शतभिषा से, अभिजित् के सहित इष्ट दिन नक्षत्र तक गणना करने से जितनी संख्या हो आनन्दादि गणना से उतनी ही संख्यावाला योग इष्ट दिन में जानना चाहिए। यथा रविवार के दिन श्रवण नक्षत्र अश्विनी आदि गणना से तेईसवां हुआ तो आनन्दादिकों की गणना करने पर गदयोग तेईसवां हुआ यही योग उस इष्ट दिन में होगा। इसी रीति से और भी जानो ॥२५॥

आनन्दादिकचक्र

योग	रविवार	सोमवार	मंगल	बुधवार	बृह० वार	शुक्रवार	शनिवार
आनंद	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ०षाढ़	शतभिषा
का.द.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वभाद्र०
धूम्र	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भाद्र.
धाता	रोहिणी	पुष्य	उ०फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती
सौम्य	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ०षाढ़	शतभिषा	अश्विनी
ध्वांक्ष	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वभा०	भरणी
केतु	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भा.	कृत्तिका
श्रीवत्स	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी
वज्र	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ०षाढ़	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा
मुद्गर	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वभा०	भरणी	आर्द्रा
छत्र	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण	उ०भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु
मित्र	उ०फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य
मानस	हस्त	अनुराधा	उ०षाढ़	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा
पद्म	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा
लुम्ब	स्वाती	मूल	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०
उत्पात	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ०फा०
मृत्यु	अनुराधा	उ० षाढ़	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त
काण	ज्येष्ठा	अभि०	पूर्वाभा	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
सिद्धि	मूल	श्रवण	उ०भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती
शुभ	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ०फा०	विशाखा
अमृत	उ० षाढ़	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा
मुसल	अभि०	पूर्वभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा
गद	श्रवण	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल
मातंग	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा०	विशाखा	पूर्वाषाढ़
रक्ष	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ०षाढ़
चरः	पूर्वभा०	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित्
सुस्थिर	उ० भा०	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा०	स्वाती	मूल	श्रवण
प्रवर्ध०	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ० फा	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा

दुष्ट योगों का परिहार

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः ।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे रक्षो मृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ॥ २६ ॥

अन्वयः—ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे (योगे) इषुनाड्यः, पद्मलुम्बे (योगे) वेदाः, गदे अश्वाः (सप्त) नाड्यः वर्ज्याः । धूम्रे भूः काणे द्वयं मौसले द्वे, च (पुनः) रक्षोमृत्यूत्पातकालाः (योगाः) सर्वे वर्ज्याः ॥ २६ ॥

भाषा—ध्वांक्ष, वज्र, मुद्गर, इन तीन योगों में प्रथम पाँच दण्ड; पद्म, लुम्ब, इन दो में प्रथम चार दण्ड; गद योग में प्रथम सात दण्ड; धूम्र में एक दण्ड; काण में दो दण्ड; और रक्ष, मृत्यु, उत्पात, काल, ये सम्पूर्ण, शुभ कार्यों में वर्जनीय हैं ॥ २६ ॥

सम्पूर्ण दोषों का नाशक रवियोग

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसंमिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः ॥ २७ ॥

अन्वयः—(श्लोकक्रमेण) सुगमः ॥ २७ ॥

भाषा—सूर्य जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र से वर्तमान चन्द्रनक्षत्र चौथा, नवाँ, छठाँ, दसवाँ, तेरहवाँ, बीसवाँ हो तो रवियोग होता है। यह सम्पूर्ण दोषों का नाश करनेवाला है ॥ २७ ॥

सर्वार्थसिद्धियोग

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं
चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेष्वहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं
ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ॥ २८ ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं
शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि
सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥ २९ ॥

अन्वयः--(श्लोकक्रमेण पूर्वैः (एतानि) सर्वार्थसिद्धये कथितानि॥२८-२९।

भाषा—रविवार को हस्त, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तर-भाद्रपद, पुष्य, अश्विनी; सोमवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा; मंगल को अश्विनी, उत्तरभाद्रपद, कृत्तिका, आश्लेषा; बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, बृहस्पति को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण; शनैश्चर को श्रवण, रोहिणी और स्वाती हो तो सर्वार्थसिद्धि योग होता है। इस योग में जो कार्य किया जाता है वह सिद्ध होता है।

सर्वार्थसिद्धियोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनैश्चर
हस्त	श्रवण	अश्विनी	रोहिणी	रेवती	रेवती	श्रवण
मूल	रोहिणी	उ.भा पद	अनुराधा	अनुराधा	अनुराधा	रोहिणी
उ० ३	मृगशिरा	कृत्तिका	हस्त	अश्विनी	अश्विनी	स्वाती
पुष्य	पुष्य	आश्लेषा	कृत्तिका	पुनर्वसु	पुनर्वसु	
अश्विनी	अनुराधा		मृगशिरा	पुष्य	श्रवण	

द्वीशात्तोयाद्वासवात्पौष्णभाच्च ब्राह्मात्पुष्यादर्यमर्क्षाच्चतुर्भैः।
स्यादुत्पातो मृत्युकाणौ च सिद्धिर्वारेऽर्काद्ये तत्फलं नामतुल्यम्॥

अन्वयः--अर्काद्ये वारे द्वीशात्, तोयात्, वासवात्, पौष्णभात्, ब्राह्मात्, पुष्यात्, अर्यमर्क्षात्, चतुर्भैः उत्पातः स्यात्, मृत्युकाणौ [भवेताम्] सिद्धिः स्यात्, तत्फलं नामतुल्यं [ज्ञेयम्]॥ ३०॥

भाषा—रविवारादि सात दिनों में क्रम से विशाखा, पूर्वाषाढ़, धनिष्ठा, रेवती, रोहिणी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, इन नक्षत्रों से चार-चार नक्षत्र उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि ये चार योग होते हैं अर्थात् रविवार को विशाखा उत्पात, अनुराधा मृत्यु, ज्येष्ठा काण, मूल सिद्धियोग; सोम-वार को पूर्वाषाढ़ उत्पात, उत्तराषाढ़ मृत्यु, अभिजित् काण, श्रवण सिद्धि योग, मंगल को धनिष्ठा उत्पात, शतभिषा मृत्यु, पूर्वभाद्रपद काण, उत्तर

भाद्रपद सिद्धियोग; बुधवार को रेवती उत्पात, अश्विनी मृत्यु, भरणी काण, कृत्तिका सिद्धियोग; बृहस्पति को रोहिणी उत्पात, मृगशिरा मृत्यु, आर्द्रा काण, पुनर्वसु सिद्धियोग; शुक्रवार को पुष्य उत्पात, आश्लेषा मृत्यु, मघा काण, पूर्वाफाल्गुनी सिद्धियोग, शनैश्चर को उत्तराफाल्गुनी उत्पात, हस्त मृत्यु, चित्रा काण, स्वाती सिद्धियोग होता है। इन चारों योगों का फल भी इनके नाम के सदृश ही होता है ॥ ३० ॥

उत्पातादि योगचतुष्टयचक्र

योग	रवि	सोम	मंगल	बुधवार	बृहस्पति.	शुक्र	शनैश्चर
उत्पात	विशाखा	पूर्वाषाढ़	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ. फा.
मृत्यु	अनुराधा	उत्तराषा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त
काण	ज्येष्ठा	अभिजित्	पूर्वाभा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
सिद्धि	मूल	श्रवण	उत्तराभा.	कृत्तिका	पुनर्वसु	पूर्वाफा.	स्वाती

निन्दित योगों का परिहार

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणबङ्गखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥३१॥

अन्वयः—तिथिवारोत्थाः, तिथिभोत्थाः, भवारजाः, तथा त्रितयजाः, कुयोगा हूणवंगखशेषु (देशेषु) एव वर्ज्याः ॥ ३१ ॥

भाषा—तिथि-वार के योग से, तिथि-नक्षत्र के योग से, नक्षत्र-वार के योग से और तिथि-वार-नक्षत्र इन तीनों के योग से जितने कुयोग कहे हैं वे सब हूणदेश, वंगदेश और खश देश में ही वर्जनीय हैं, अन्य देशों में नहीं ॥ ३१ ॥

सम्पूर्ण कृत्यों में वर्जनीय वस्तुएँ

सर्वस्मिन्विधुपायुक्तनुलवावर्द्धे निशाह्वोर्घटी-
त्र्यंशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ।
उत्पातग्रहतोऽद्र्यहांश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं
षण्मासं ग्रहभिन्नभं त्यज शुभे यौद्धं तथोत्पातभम् ॥३२॥

अन्वयः–विधुपापयुक्ततुलग्नौ, निशाह्नोः अर्धे (मध्ये) घटीद्वयं वै (निश्चयेन) कुनवांशकं, ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयं, उत्पातग्रहतः अद्रयहान, शुभदोत्पातैः दुष्टं दिनं, सर्वस्मिन् शुभे त्यज । ग्रहभिन्नभं योद्धं (भं), तथा उत्पातभं षण्मासं दिनं, सर्वस्मिन् शुभे त्यज ॥ ३२ ॥

भाषा—क्षीण चन्द्रमा, सूर्य, मंगल, शनैश्चर, राहु और केतु से संयुक्त लग्न, और नवांश; आधी रात और मध्याह्न में बीस-बीस पल; पापग्रह का नवांश; सूर्य और चन्द्रग्रहण के दिन से पूर्व तीन दिन, भूकम्प आदि उत्पात और चन्द्र-सूर्य ग्रहण के पश्चात् सात दिन तथा शुभद उत्पात का दिन, इन सबको शुभ कार्यों में त्याग दे । मंगलादि पाँच ग्रहों से भेद को प्राप्त हुआ नक्षत्र, जिस नक्षत्र में मंगलादि पापग्रहों का युद्ध हुआ हो वह नक्षत्र, जिस नक्षत्र में कोई उत्पात हुआ हो वह नक्षत्र, सबको सम्पूर्ण शुभ कार्यों में छः महीने तक त्याग करे । उत्पात और शुभदोत्पात—इन दोनों में यह भेद है कि जो वसन्तादि ऋतुओं में बिजली गिरना आदि वराहमिहिर ने कहा है वे तो शुभदोत्पात हैं और वही उक्त ऋतुओं को छोड़ अन्य ऋतुओं में होने से उत्पात कहे जाते हैं । ग्रह-युद्ध चार प्रकार का है । उल्लेख १ भेद २ अंशुविमर्द ३ अपसव्य ४ । मंगलादि ग्रह जिन नक्षत्रों में स्थित हों, उन नक्षत्रों का परस्पर स्पर्श उल्लेख कहा जाता है । मध्य में किसी अन्य ग्रह के व्यवधान होने पर भेद कहा जाता है । समान दो-तीन ग्रहों की किरणों का परस्पर मिलकर एक हो जाना अंशुविमर्द नामक युद्ध में एक के हीन होने पर अपसव्य कहा जाता है । ऐसा वराहमिहिराचार्य ने कहा है ॥ ३२ ॥

सूर्य और चन्द्रहण के त्याज्य नक्षत्र और दिन

नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्द्धपादग्रासे क्रमात्तर्कगुणेन्दुमासान् ।
पूर्वं परस्तादुभयोस्त्रिघस्रा ग्रस्तेऽस्तगे वाप्युदितेऽर्द्धखण्डे ॥२३॥

अन्वयः—सकलार्धपादग्रासे क्रमात् तर्कगुणेन्दुमासान् ग्रहर्क्षं नेष्टम् । ग्रस्तेऽस्तगे पूर्वं त्रिघस्रा नेष्टाः । ग्रस्तेऽभ्युदिते परस्तात् (त्रिघस्रा नेष्टाः) । अर्धखण्डे (ग्रासे) उभयोः (पूर्वापरयोः) त्रिघस्राः (त्रित्रिघस्राः) नेष्टाः ॥ ३३ ॥

भाषा—चन्द्रमा व सूर्य के विम्ब का सर्वग्रास हो तो छः महीने

२

तक, अर्द्धग्रास हो तो तीन महीने तक, चतुर्थांश का ग्रास हो तो एक ही महीने वह नक्षत्र त्याज्य होता है। जिस नक्षत्र में ग्रहण हुआ हो, अर्थात् उक्त दिनों तक उस नक्षत्र में कोई शुभ कार्य न करे। यदि ग्रहण लगते ही सूर्य या चन्द्र अस्त हो जाय तो पहले तीन दिन में और यदि ग्रसित सूर्य या चन्द्रमा उदय हो तो ग्रहण होने के अनन्तर तीन दिन में कोई शुभ कार्य न करना चाहिए। यदि अर्द्धग्रास हो तो तीन दिन पहले और तीन दिन पश्चात् और ग्रहण का दिन भी शुभ कर्मों में त्यागना चाहिए ॥ ३३ ॥

त्याज्य नक्षत्र और योग आदि

जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभद्रा-
वैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्द्धी ।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्द्धपात-
विष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम् ॥ ३४ ॥
परिघार्द्धं पञ्च शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः ।
व्याघाते नवनाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥ ३५ ॥

अन्वयः—जन्मर्क्षमासतिथयः (वर्ज्याः) व्यतिपातभद्रावैधृत्यमापितृदिनानि (वर्ज्यानि) तिथिक्षयर्धी (वर्ज्ये) न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपाताः (वर्ज्याः) विष्कम्भवज्रघटिकात्रयं एव वर्ज्यम्। सर्वेषु कर्मसु परिघार्धं (वर्ज्यम्), शूले पञ्च, गण्डातिगण्डयोः षट्, व्याघाते नव नाड्यः वर्ज्याः ॥ ३४–३५ ॥

भाषा—जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतीपातयोग, भद्रा, वैधृति नाम का योग, अमावास्या, माता-पिता के मरने की तिथि, क्षयतिथि, वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिमास, कुलिक अर्द्धयाम, महापात, विष्कम्भ और वज्र के तीन-तीन दण्ड सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याज्य हैं। परिघ-योग का पूर्वार्द्ध, शूलयोग के प्रथम पाँच दण्ड, गण्ड और अतिगण्ड के छः छः दण्ड और व्याघात योग के नौ दण्ड सम्पूर्ण शुभ कार्यों में वर्जनीय हैं ॥ ३४–३५ ॥

पक्षरन्ध्रतिथि और उनका परिहार

वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ त्यजेत्।
वस्वङ्कमनुतत्त्वाशाः शरा नाडीः पराः शुभाः ॥ ३६ ॥

अन्वयः—वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ (क्रमेण) वस्वङ्कमनुतत्त्वाशाः शराः नाडीः त्यजेत्, पराः शुभाः (भवन्ति) ॥ ३६ ॥

भाषा—चौथ, छठ, अष्टमी, नवमी, द्वादशी और चतुर्दशी ये पक्षरन्ध्र तिथियाँ हैं, इनमें कोई शुभ कार्य न करे। यदि कोई आवश्यक कार्य हो तो चौथ के आठ दण्ड, छठ के नव, अष्टमी के चौदह, नवमी के चौबीस, द्वादशी के दस और चतुर्दशी के पाँच दण्ड त्याग दे, शेष सब शुभ है ॥ ३६ ॥

कुलिक आदि दुष्ट मुहूर्त्त

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः।
वाराद्द्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजे क्षणः ॥ ३७ ॥

अन्वयः—वारात् मन्दे, बुधे, जीवे, द्विघ्ने (सति) क्रमात् कुलिकः कालवेला, यमघण्टः कण्टकः क्षणः (मुहूर्तः स्यात्) ॥ ३७ ॥

जिस दिन कुलिकादि दोषों का विचार करना हो उस दिन से शनैश्चर, बुध, बृहस्पति और मंगल तक गिनने से जितनी संख्या हो उनको दो से गुणा करे। उसी संख्यावाला मुहूर्त्त क्रम से कुलिक, कालवेला, यमघण्ट और कण्टक दोष होता है। यथा रविवार को ये दोष विचारना है तो रविवार से शनैश्चर तक सात संख्या हुई। इसको दो से गुण दिया, चौदह हुए यही चौदहवाँ मुहूर्त्त कुलिक दोष हुआ। रविवार से बुधवार तक गिना तो चार हुए। इसको दो से गुणा तो आठ हुए यही आठवाँ मुहूर्त्त कालवेला हुआ। ऐसे ही बृहस्पति तक गिना तो पाँच हुए। इनको दो से गुणा तो दस हुए। यही दसवाँ मुहूर्त्त यमघण्ट हुआ। ऐसे ही मंगल तक गिनने से तीन संख्यायें हुईं। इनको दो से गुणा तो छः हुए। यही छठाँ मुहूर्त्त कंटक संज्ञक हुआ। ऐसे ही अन्य दिनों से उक्त दिनों तक गणना करने से कुलिकादि स्पष्ट होंगे। दिन के सोलहवें अंश को

मुहूर्त्त कहते हैं। कुलिक मुहूर्त्त में शुभ कर्म करने से उसका सर्वथा नाश, यमघण्ट में दरिद्रता, कालवेला में मृत्यु और कंटक में विघ्न होता है। परन्तु ये रात्रि में दूषित नहीं हैं। यदि अति आवश्यक कार्य हो तो इन दोषों का उत्तरार्द्ध त्याग देना चाहिए॥ ३७ ॥

कुलिकादि दुष्टमुहूर्त्तचक्र

	रविवार	सोमवार	मंगल	बुधवार	बृह.	शुक्र.	शनै.	वार
मुहूर्त्त	१४	१२	१०	८	६	४	२	कुलिक
मुहूर्त्त	८	६	४	२	१४	१२	१०	कालवेला
मुहूर्त्त	१०	८	६	४	२	१४	१२	यमघण्ट
मुहूर्त्त	६	४	२	१४	१२	१०	८	कण्टक

प्रकारान्तर से वर्जित मुहूर्त्त

सूर्ये षट्स्वरनागदिङ्मनुमिताश्चन्द्रेऽब्धिषट्कुञ्जरा-
ङ्कार्कविश्वपुरन्दराःक्षितिसुते द्व्यब्ध्यग्नितर्का दिशः।
सौम्ये द्व्यब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिता जीवे द्विषड्भास्कराः
शक्राख्यास्तिथयः कलाश्च भृगुजे वेदेषुतर्कग्रहाः ॥३८॥

दिग्भास्करा मनुमिताश्च शनौ शशिद्वि-
नागा दिशो भवदिवाकरसंमिताश्च।
दुष्टः क्षणः कुलिकण्टककालवेला-
स्स्युश्चार्धयामयमघण्टगताः कलांशाः ॥३९॥

अन्वयः—सूर्ये षट् स्वरनागदिङ्मनुमिताः, चन्द्रेऽब्धिषट्कुञ्जराङ्कार्कविश्वपुरन्दराः, क्षितिसुते द्व्यब्ध्यग्नितर्काः दिशः, सौम्ये द्व्यब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिताः जीवे द्विषड्भास्कराः, शक्राख्याः, तिथयः कलाः च भृगुजे वेदेषुतर्कग्रहाः दिग्भास्कराः मनुमिताः च शनौ शशिद्विनागा दिशः भवदिवाकरसंमिताः च कलांशाः (मुहूर्ताः) दुष्टः क्षणः स्यात् कुलिककण्टककालवेलाः स्युः। अर्धयामयमघण्टगताः स्युः ॥३८-३९॥

भाषा—रविवार को छठाँ, सातवाँ, आठवाँ, दसवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त और सोमवार को चौथा, छठाँ, आठवाँ, नवाँ, बारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त, मंगल को दूसरा, चौथा, तीसरा, छठाँ, दसवाँ मुहूर्त्त; बुधवार को दूसरा, चौथा, आठवाँ, नवाँ, दसवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त; बृहस्पति को दूसरा, छठाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ, सोलहवाँ मुहूर्त्त; शुक्रवार को चौथा, पाँचवाँ, छठा, नवाँ, दसवाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ मुहूर्त्त और शनैश्चर को पहिला, दूसरा, आठवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ, बारहवाँ मुहूर्त्त निन्दित होता है। इन्हीं मुहूर्त्तों में कोई दुष्ट क्षण, कोई कुलिक, कंटक, कालवेला, अर्द्धयाम और यमघण्ट होते हैं। दिनमान का सोलहवाँ भाग एक मुहूर्त्त है ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

वर्जित मुहूर्त्तों का चक्र

रविवार	६	७	८	१०	१४	.	
सोमवार	४	६	८	९	१२	१३	१४
मंगल	२	४	३	६	१०		
बुधवार	२	४	८	९	१०	१४	
बृहस्पति	२	६	१२	१४	१५	१६	
शुक्रवार	४	५	६	९	१०	१२	१४
शनैश्चर	१	२	८	१०	११	१२	

देशभेद से होलाष्टक का निषेध

विपाशैरावतीतीरे शतद्र्वाश्च त्रिपुष्करे ।
विवाहादिशुभे नेष्टं होलिकाप्राग्दिनाष्टकम् ॥ ४० ॥

अन्वयः—विपाशैरावतीतीरे, शतुद्राः (तीरे) त्रिपुष्करे (देशे) विवाहादिशुभे होलिकाप्राग्दिनाष्टकं नेष्टम् ॥ ४० ॥

भाषा—विपाशा, ऐरावती और शतद्रु नदी के तट पर बसे हुए देशों में और त्रिपुष्कर देश में विवाह आदि शुभ कार्यों में होलिकादहन से पूर्व आठ दिन निषिद्ध हैं, अन्य देशों में नहीं ॥ ४० ॥

चन्द्रमा अनुकूल होने से दुष्ट योग भी शुभ होते हैं

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभाञ्जगुः।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दितान् ॥ ४१ ॥

अन्वयः—इन्दौ शस्ते मृत्युक्रकचदग्धादीन् (योगान्) शुभान् जगुः। केचित् यामोत्तरं (शुभान् जगुः) अन्ये यात्रायामेव निन्दितान् जगुः ॥ ४१ ॥

भाषा—चन्द्रमा के शुभ रहते आनन्दादि योगों में कहा हुआ मृत्यु योग, क्रकचयोग, दग्धयोग, विषाख्य, हुताशनाख्य इत्यादि योगों को कोई शुभ कहते हैं, और कोई कहते हैं कि एक पहर के बाद ये सब योग शुभ होते हैं। कोई तो कहते हैं कि ये यात्रा में ही निन्दित हैं ॥४१॥

अन्य परिहार

अयोगे सुयोगोऽपि चेत्स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ।४२।

अन्वयः—चेत् अयोगे सुयोगोऽपि स्यात् तदानीं एष (सुयोगः) अयोगं निहत्य सिद्धिं तनोति, परे (आचार्याः) लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं (वदन्ति), विष्टिपूर्वं दिनार्धोत्तरं शस्तं (कथयन्ति) ॥ ४२ ॥

भाषा—यदि क्रकचादि कोई दुष्ट योग हो और उसी काल में कोई सिद्धादि शुभ योग भी हो तो वह शुभ योग उस क्रकचादि के फल को नष्ट करके कार्य की सिद्धि करता है। कोई आचार्य कहते हैं कि लग्न शुद्ध हो तो उसी से संपूर्ण कुयोगों का नाश होता है।

भद्रा आदि का परिहार

भाषा—भद्रा, मंगल दिन, व्यतीपात, वैधृति, प्रत्यरितारा, जन्म-नक्षत्र ये सब मध्याह्न के अनन्तर शुभ होते हैं ॥ ४२ ॥

भद्राकाल

शुक्ले पूर्वार्द्धेऽष्टमीपञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे।
कृष्णेऽन्त्यार्द्धे स्यात्तृतीयादशम्योः पूर्वे भागे सप्तमीशंभुतिथ्योः ।४३।

अन्वयः—शुक्ले अष्टमीपञ्चदश्योः पूर्वार्धे, (तथा) एकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे भद्रा (भवति)। कृष्णे तृतीयादशम्योः अन्त्यार्धे, सप्तमीशम्भुतिथ्योः पूर्वे भागे भद्रा (भवति)॥ ४३॥

भाषा—शुक्लपक्ष की अष्टमी और पूर्णमासी के पूर्वार्द्ध में तथा एकादशी और चौथ के उत्तरार्द्ध मे भद्रा होती है। कृष्णपक्ष की तीज और दशमी के उत्तरार्द्ध में तथा सप्तमी और चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध में भद्रा होती है॥ ४३॥

भद्रा के मुख और पुच्छ का विचार

पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघट्यः शरा
विष्टेरास्यमसद्गजेन्दुरसरामाद्र्यश्विबाणाब्धिषु।
यामेष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथा वासरे
विष्टिस्तिथ्यपरार्धजा शुभकरी रात्रौ च पूर्वार्धजा ॥४४॥

अन्वयः—पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघट्यः शराः विष्टेः आस्यं (प्रोक्तं) (तथा) गजेन्दुरसरामाद्र्यश्विबाणाब्धिषु यामेषु अन्त्यघटीत्रयं विष्टेः पुच्छं (प्रोक्तं)। तिथ्यपरार्धजा विष्टिः वासरे तथा पूर्वार्धजा रात्रौ शुभकरी (भवति)॥

भाषा—चौथ, अष्टमी, एकादशी, पूर्णमासी, तीज, सप्तमी, दशमी और चतुर्दशी, इन तिथियों में क्रम से पाँचवें, दूसरे, सातवें, चौथे, आठवें, तीसरे, छठें और पहिले, इन पहरों की पूर्व पाँच घड़ी भद्रा का मुख है वह अशुभ होता है। और इन्हीं तिथियों में क्रम से आठवें, पहिले, छठें, तीसरे, सातवें, दूसरे, पाँचवें और चौथे, इन पहरों के अन्त की तीन घड़ी भद्रा की पुच्छ है वह शुभ फलदायक होती है। तिथि के उत्तरार्द्ध में होनेवाली भद्रा यदि दिन में हो और तिथि के पूर्वार्द्ध में होनेवाली भद्रा यदि रात्रि में हो तो शुभ होती है॥ ४४॥

भद्रा का निवास और फल

कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे ।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम् ॥ ४५ ॥

अन्वयः—कुम्भकर्कद्वये अब्जे (चन्द्रे) मर्त्ये [मृत्युलोके] तथा अजात [मेषात्] त्रये अलिगे [अब्जे] स्वर्गे (तथा) स्त्रीधनुर्जूकनक्रे (अब्जे) अधः [पाताले] भद्रा तिष्ठति (यत्र तिष्ठति) तत्रैव तत्फलं (भवति) ॥ ४५ ॥

भाषा—यदि चन्द्रमा कुम्भ, मीन, कर्क वा सिंह में हो तो स्वर्गलोक में; मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिक में हो तो मर्त्यलोक में और कन्या, तुला, धन, मकर में हो तो पाताललोक में भद्रा का निवास होता है । उसी लोक में उसका शुभाशुभ फल भी होता है ॥ ४५ ॥

शुक्रास्त आदि में वर्जनीय कार्य

वाप्यारामतडागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठे व्रता-
रम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि सोमाष्टके ।
गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्मवेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्नशिशुसंस्कारान्सुरस्थापनम् ॥४६॥
दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
संन्यासाग्निपरिग्रहौ नृपतिसंदर्शाभिषेकौ गमम् ।
चातुर्मास्यसमाव्रती श्रवणयोर्वेधं परीक्षां त्यजेद्
वृद्धत्वास्तशिशुत्वईज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥४७॥

अन्वयः—इज्यसितयोः वृद्धत्वास्तशिशुत्वे तथा न्यूनाधिमासे वाप्यारामतडागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठे, व्रतारम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि, सोमाष्टके गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्म, वेदव्रतम्, नीलोद्वाहं, अथ अतिपन्नशिशुसंस्करान् , सुरस्थापनम् , दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनम्, अपूर्वं देवतीर्थेक्षणम्, संन्यासाग्निपरिग्रहौ, नृपतिसंदर्शाभिषेकौ, गमम् चातुर्मास्यसमाव्रतौ, श्रवणयोर्वेधं, परीक्षां त्यजेत् ॥ ४६॥४७ ॥

भाषा—बावली, बगीचा, तड़ाग, कूप के बनाने का प्रारम्भ और स्थापना, किसी व्रत का आरम्भ वा उद्यापन, वधूप्रवेश, तुलादान आदि

महादान, सोमयज्ञ, अष्टकाश्राद्ध, केशान्तकर्म, नवान्न, पौशाला, प्रथम श्रावणी कर्म, वेदारम्भ, काम्य वृषोत्सर्ग, पिछड़े हुए जातकर्म आदि संस्कार, देवताओं का स्थापन, मन्त्रग्रहण, यज्ञोपवीत, विवाह, मुण्डन, किसी देवता का प्रथम दर्शन, तीर्थयात्रा, संन्यास, अग्निहोत्रादि के लिये अग्नि का ग्रहण करना, राजा का प्रथम दर्शन, राजा का अभिषेक, यात्रा, चातुर्मास्य नामक याग, समावर्तन कर्म; कर्णछेदन, इन सब कर्मों को बृहस्पति और शुक्र के वृद्ध; बाल वा अस्त रहते, मलमास और क्षयमास में न करना चाहिए ॥ ४६॥४७ ॥

सिंह और मकर राशि में स्थित बृहस्पति का दोष

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थजीवे वर्ज्यं केचिद्वक्रगे चातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपि पक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादिभूषाम् ॥४८॥

अन्वयः—अस्ते वर्ज्यं (कर्म) सिंहनक्रस्थजीवेऽपि वर्ज्यम् । केचित् (आचार्याः) वक्रगे च (तथा) अतिचारे (जीवे) गुर्वादित्ये, विश्वघस्रे पक्षेऽपि (वर्ज्यं) तद्वत् दन्तरत्नादिभूषां (च) (वर्ज्यं) प्रोचुः ॥ ४८ ॥

भाषा—बृहस्पति वा शुक्र के अस्त में जिन शुभ कर्मों का निषेध किया है वे सब कर्म सिंह वा मकर राशियों में बृहस्पति के रहते भी वर्ज्य हैं । कोई आचार्य कहते हैं कि बृहस्पति के वक्री रहते वा अतिचार करते और गुर्वादित्य अर्थात् सूर्य और बृहस्पति के एकत्र रहते पूर्वोक्त (वाप्यारामेत्यादि) शुभ कर्म न करे । उसी तरह दाँत और रत्न से बने हुए आभूषणों को भी बृहस्पति वा शुक्र के अस्तादि काल में न धारण करे ॥ ४८ ॥

सिंहस्थ बृहस्पतिदोष का परिहार

सिंहे गुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तरतश्च यावत् ।
भागीरथी याम्यतटे च दोषो नान्यत्र देशे तपनेऽपि मेषे ॥४९॥

अन्वयः—सिंहे सिंहलवे गुरौ (सति) विवाहः नेष्टः, अथ गोदोत्तरतः भागीरथीयाम्यतटं (यावत्) दोषः । अन्यत्र देशे न (दोषः) । मेषे तपने (सूर्ये) अपि (दोषः न) ॥ ४९ ॥

भाषा—सिंहराशि में सिंह ही के नवांश में बृहस्पति स्थित हो तो विवाह इष्ट नहीं है, अर्थात् सिंह के नवांश को छोड़कर सिंह राशि के शेष अंशों में बृहस्पति के रहते विवाह करने का निषेध नहीं है। अथवा सिंह राशि में बृहस्पति के रहते गोदावरी नदी के उत्तर किनारे से लेकर गङ्गा के दक्षिण किनारे तक के देशों में विवाहादि शुभ कार्य करने में दोष है, अन्य देशों में नहीं। अथवा सिंह राशि में बृहस्पति के रहते भी मेष में सूर्य स्थित हो तो विवाहादि शुभ कर्म करने में दोष नहीं है॥

सिंहस्थ गुरुदोष और उसका परिहार

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शेषाङ्घ्रिषु न दोषकृत्॥ ५०॥
मेषेऽर्के सन् व्रतोद्वाहौ गङ्गागोदान्तरेऽपि च।
सर्वः सिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे॥ ५१॥

अन्वयः--मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः। शेषाङ्घ्रिषु गङ्गागोदान्तरं हित्वा दोषकृत् न (भवति)। मेषेऽर्के गंगागोदान्तरेऽपि सद्व्रतोद्वाहौ (भवेताम्) कलिंगे गौड़गुर्जरे (देशे) सर्वः सिंहगुरुः वर्ज्यः॥ ५०–५१॥

भाषा--मघा नक्षत्र के प्रथम चरण से लेकर पूर्वाफाल्गुनी के प्रथम चरण पर्यन्त पाँच चरणों में बृहस्पति सब देशों में निन्दित है। शेष चरणों में अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी के दूसरे चरण से लेकर उत्तराफाल्गुनी के प्रथम चरण पर्यन्त चार चरणों में गङ्गा और गोदावरी के मध्य में बसे हुए देशों को छोड़कर अन्य देशों में दोषकारक नहीं है। यदि सूर्य मेष में हो और बृहस्पति सिंह राशि में हो तो गङ्गा और गोदावरी के मध्यवर्ती देशों में भी यज्ञोपवीत और विवाह शुभ है। परन्तु कलिङ्ग, गौड़, गुर्जर इन देशों में सम्पूर्ण सिंहस्थ बृहस्पति वर्जनीय है॥५०–५१॥

मकर में स्थित बृहस्पति के परिहार

रेवापूर्वे गण्डकी पश्चिमे च शोणस्योदग्दक्षिणे नीच इज्यः।
वर्ज्यो नायं कौङ्कणे मागधे च गौडे सिन्धौ वर्जनीयः शुभेषु॥५२॥

अन्वयः—रेवापूर्वे, गण्डकीपश्चिमे शोणस्य उदक् दक्षिणे (तीरे) नीचः इज्यः न वर्ज्यः । कौंकणे मागधे गौडे च (तथा) सिन्धौ (देशे) अयं शुभेषु वर्जनीयः (स्यात्) ॥ ५२ ॥

भाषा—नर्मदा नदी के पूर्व, गण्डकी नदी के पश्चिम और शोण-नद के उत्तर-दक्षिण देशों में मकरराशिस्थित बृहस्पति विवाहादि शुभ कार्यों में वर्जनीय नहीं है, किन्तु कोङ्कण, मागध और सिन्धु देश में शुभ कार्यों में वर्जित है ॥ ५२ ॥

लुप्तसंवत्सर दोष और उसका परिहार

गोजान्त्यकुम्भेतरगेऽतिचारगो नो पूर्वराशिं गुरुरेति वक्रितः ।
तदा विलुप्ताब्द इहातिनिन्दितः शुभेषु रेवासुरनिम्नगान्तरे ॥५३॥

अन्वयः—गोजान्त्यकुम्भेतरगे (राशौ) अतिचारगः गुरुः वक्रितः (पुनः) पूर्वराशिं नो एति तदा लुप्ताब्दः (स) इह, रेवा सुरनिम्नगान्तरे अतिनिन्दितः (स्यात्) ॥ ५३ ॥

भाषा—वृष, मेष, मीन, कुम्भ—इन राशियों में से किसी में स्थित बृहस्पति उस राशि से अगली राशि में अतिचार करके गया हो और फिर वक्री होकर पूर्वराशि में जिस वर्ष में नहीं आता वह लुप्तसंवत्सर कहा जाता है । वह विवाहादि शुभकार्य में अतिशय निन्दित है, परन्तु नर्मदा और गङ्गा के मध्य ही में निन्दित है ॥ ५३ ॥

होरासिद्धि के लिये वारप्रवृत्ति

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः ।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्ध्वं तथाऽधो दिनपप्रवेशनम् ॥५४॥

अन्वयः—पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैः युतोनाः तिथयः (पञ्चदश) यदि दिनार्धतः ऊनाधिका (तदा) तद्विवरोद्भवैः पलैः ऊर्ध्वं तथा अधः दिनपप्रवेशनम् स्यात् ॥ ५४ ॥

भाषा—लङ्का से लेकर उज्जयिनी और कुरुक्षेत्रादि देश तथा सुमेरु पर्वत पर्यन्त भूमध्यरेखा कही जाती है । जिस देश में वारप्रवृत्ति जानना

हो वह देश उक्त रेखा से पूर्व या पश्चिम जितने योजन पर हो, उन योजनों में उन्हीं का चतुर्थांश घटाकर जितने शेष रहें उन्हें पल मानकर, इष्ट देश यदि रेखा से पश्चिम हो तो पन्द्रह में जोड़े और पूर्व हो तो घटावे। यदि वे जुड़े या घटे हुए पन्द्रह इष्ट दिनमानार्ध के बराबर हों तो सूर्योदय काल ही में और यदि न्यून या अधिक हों तो दोनों का अन्तर करे। उस अन्तर के जितने पल हों, यदि न्यून हों तो उतने ही पल सूर्योदय से पर और अधिक हों तो उतने ही पल सूर्योदय से पूर्व, वारप्रवृत्ति होती है। उदाहरण--मान लिया जाय कि कुरुक्षेत्र से काशी ४८ योजन पूर्व है। इन योजनों का चतुर्थांश १२ इन्हीं ४८ में घटाया तो शेष ३६ पल हुए। उक्त योजनों को पूर्व होने के कारण इन ३६ पलों को १५ दण्ड में घटाया तो १४ दण्ड २४ पल शेष रहे। इनको इष्ट दिनमानार्द्ध १७। २ दण्डादि से न्यून होने के कारण इन दोनों के अन्तर के बराबर सूर्योदय होने के पश्चात् काशी में वारप्रवृत्ति जानना चाहिए ॥ ५४ ॥

कालहोरा

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः।
सैकास्तष्टा नगैः कालहोरेशा दिनपात् क्रमात् ॥ ५५ ॥

अन्वयः—वारादेः घटिकाः द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः सैकाः नगैः तष्टाः दिनपात् क्रमात् कालहोरेशाः (भवन्ति) ॥ ५५ ॥

भाषा--वारप्रवृत्तिकाल से लेकर इष्टकाल पर्यन्त जितने दण्डादि हों उनको दो से गुणा करके दो जगह रक्खे। एक स्थान में पाँच का भाग देकर जो शेष रहे उसे दूसरे स्थान में घटावे। जो शेष रहे उसमें एक और जोड़ दे तब सात का भाग देने से जो शेष रहे वह दिवस के स्वामी के क्रम से कालहोरेश होगा। उदाहरण--यदि रविवार को वारप्रवृत्ति से लेकर इष्टकाल पर्यन्त ६ दण्ड हों, २ से गुणा तो १२ हुए। इनको दो स्थानों में रखकर एक स्थान में ५ का भाग दिया, २ शेष रहे, उन्हें दूसरे स्थान में घटाया तो १० शेष रहे। उनमें ७ का भाग दिया तो ३ शेष रहे। १ और जोड़ा तो ४ हुए। रविवार से गिना तो चौथा बुध हुआ यही उस काल में कालहोरेश हुआ ॥ ५५ ॥

कालहोरा का प्रयोजन

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लङ्घ्यः पारिघश्चापि दण्डः ५६

अन्वयः—वारे प्रोक्तं (कर्म) तस्य (वारस्य) कालहोरासु कुर्यात् । (तथा) धिष्ण्ये प्रोक्तं अस्य तिथ्यंशके (मुहूर्ते) कुर्यात् दिक्शूलादि क्षणेषु चिन्त्यम् । पारिघः अपि दण्डः नैव उल्लंघ्यः ॥ ५६ ॥

जो कार्य जिस वार में विहित है वह आवश्यक हो तो उसकी कालहोरा में करने को महर्षियों ने कहा है, और जो कार्य जिस नक्षत्र में विहित हो वह उस नक्षत्र के स्वामी के मुहूर्त्त में करे। इन मुहूर्त्तों में भी दिक्शूल, वारशूल, नक्षत्रशूल आदि का विचार करना चाहिए और परिघदण्ड का उल्लंघन तो किसी तरह भी न करे ॥ ५६ ॥

मन्वादि और युगादि तिथियाँ

मन्वाद्यास्त्रितिथी मधौ तिथिरवी ऊर्जे शुचौ दिक्तिथी
ज्येष्ठेऽन्त्ये च तिथिस्त्विषे नव तपस्यश्वाः सहस्ये शिवा ।
भाद्रेऽग्निश्च सिते त्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी वाहुलराधयोर्मदनदर्शौ भाद्रमघासिते ॥ ५७ ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ शुभाशुभप्रकरणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अन्वयः—मधौ त्रितिथी, ऊर्जे तिथिरवी, शुचौ दिक्तिथी, ज्येष्ठे अन्त्ये च तिथिः, इषे नव, तपसि अश्वाः, सहस्ये शिवाः, भाद्रे अग्निः, सिते [शुक्लपक्षे], अमाष्टनभसः कृष्णे [कृष्णपक्षे] मन्वाद्या भवन्ति (तथा) वाहुलराधयोः सिते गोग्नी भाद्रमघासिते मदनदर्शौ युगाद्या भवन्ति ॥ ५७ ॥

भाषा—चैत्रशुक्ल तीज और पूर्णमासी, कार्त्तिक शुक्ल पूर्णमासी और द्वादशी, आषाढ़शुक्ल दशमी और पूर्णमासी, ज्येष्ठ और फाल्गुन की पूर्णमासी, आश्विन शुक्ल नवमी, माघशुक्ल सप्तमी, पौष शुक्ल एकादशी, भाद्रपद शुक्ल तीज, श्रावण की अमावस और अष्टमी ये

मन्वाद्य तिथियाँ हैं। इनमें विवाहादि शुभ कार्य न करना चाहिये और स्नान, दान, श्राद्ध इत्यादि करना चाहिए। इनसे अनन्त पुण्य होता है। कार्त्तिकशुक्ल नवमी, वैशाखशुक्ल तीज, भाद्रपद कृष्ण त्रयोदशी और माघ कृष्ण अमावस, ये युगादि तिथियाँ हैं। इनमें भी विवाहादि शुभ कर्म न करे ॥ ५७ ॥

नक्षत्रप्रकरणम्



नक्षत्रों के स्वामी

नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोर्यमरवी त्वष्टा समीरः क्रमात् ।
शक्राग्नी खलु मित्रइन्द्रनिर्ऋतिः क्षीराणि विश्वेविधि-
र्गोविन्दोवसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः ॥ १ ॥

अन्वयः—नासत्यान्तकवह्निधातृशशभृद्रुद्रादितज्योरगाः पितरः भगः अर्यमरवी, त्वष्टा समीरः शक्राग्नी, मित्रः इन्द्रनिर्ऋतिः क्षीराणि विश्वे विधिः गोविन्दः वसुतोयपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः (एते) क्रमात् ऋक्षेशाः (ज्ञेयाः) ॥

भाषा—अश्विनी नक्षत्र के स्वामी अश्विनीकुमार, भरणी के यमराज, कृत्तिका के अग्नि, रोहिणी के ब्रह्मा, मृगशिरा के चन्द्रमा, आर्द्रा के रुद्र, पुनर्वसु के अदिति, पुष्य के बृहस्पति, आश्लेषा के सर्प, मघा के पितर, पूर्वाफाल्गुनी के भग देवता अर्थात् सूर्यविशेष, उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा अर्थात् सूर्यविशेष, हस्त के सूर्य, चित्रा के विश्वकर्मा, स्वाती के वायु, विशाखा के इन्द्र और अग्नि, अनुराधा के मित्र अर्थात् सूर्यविशेष, ज्येष्ठा के इन्द्र, मूल के राक्षस, पूर्वाषाढ़ के जल, उत्तराषाढ़ के विश्वेदेव, अभिजित् के ब्रह्मा, श्रवण के विष्णु, धनिष्ठा के वसु, शतभिष के वरुण, पूर्वभाद्रपद के अजचरण अर्थात् सूर्यविशेष स्वामी हैं ॥१॥

नक्षत्र-स्वामियों का चक्र

अ.	अ. कु.	पुन.	अदिति	हस्त	सूर्य	मूल	राक्षस	श.	वरुण
भ.	यम	पुष्य	बृहस्पति.	चित्रा	त्वष्टा	पू०	जल	पू.	अजच
कृ.	अग्नि	श्ले.	सर्प	स्वा०	वायु	उ०	विश्वे	उ.	अ. बु.
रो.	ब्रह्मा	मघा	पितर	वि०	इन्द्र अ.	अ०	विधि	रे.	पूषा
मृ.	चन्द्रमा	पू.	भग	अनु०	मित्र	श्र०	विष्णु	×	+
आ०	रुद्र	उ.	अर्यमा	ज्ये०	इन्द्र	ध०	वसु	×	+

नक्षत्रों की संज्ञा

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादि सिद्धये ॥ २ ॥

अन्वयः—उत्तरात्रयरोहिण्यः च भास्करः ध्रुवं [ध्रुवसंज्ञं] स्थिरं [स्थिर-संज्ञञ्च], तत्र स्थिरं [स्थिरकर्म] बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये (भवति) ॥२॥

भाषा—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार का दिन, इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य, बीज बोना, घर बनवाना व शान्ति करना, गाँव के समीप बगीचा लगवाना और आदि शब्द से मृदुसंज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य करना चाहिए ॥ २ ॥

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—स्वात्यादित्ये श्रुतेः त्रीणि (तथा) चन्द्रः चरं चलं च (ज्ञेयम्) तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् (शुभं भवति) ॥ ३ ॥

भाषा—स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा ये पाँच नक्षत्र और सोमवार दिन इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी-घोड़े आदि

पर चढ़ना, बगीचे आदि में जाना, यात्रा करना और आदि शब्द से लघुसंज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य करना शुभ है ॥ ३ ॥

पूर्वत्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥ ४ ॥

अन्वयः—पूर्वात्रयं याम्यमघे तथा कुजः, उग्रं क्रूरं (ज्ञेयम्) तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि, विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥ ४ ॥

भाषा—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, भरणी, मघा, ये पाँच नक्षत्र और मंगल दिन, इनकी क्रूर और उग्र संज्ञा है। इनमें मारण, अग्निका कार्य, शठता का कार्य, विष का कार्य, हथियार का कार्य और आदि शब्द से दारुणसंज्ञक नक्षत्रों का कार्य, ये सब सिद्ध होते हैं ॥ ४ ॥

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

अन्वयः—विशाखाग्नेयभे, (तथा) सौम्यः [बुधः] मिश्रं (तथा) साधारणं स्मृतम् । तत्र अग्निकार्यं, मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

भाषा—विशाखा, कृत्तिका, ये दो नक्षत्र और बुध दिन, इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है । इनमें अग्निहोत्र, साधारण कार्य, वृषोत्सर्ग और आदि शब्द से उग्र भी कार्य, ये सब सिद्ध होते हैं ॥ ५ ॥

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—हस्ताश्विपुष्याभिजितः तथा गुरुः क्षिप्रं लघु (च संज्ञं ज्ञेयम्) तस्मिन् पण्यरतिज्ञानभूपाशिल्पकलादिकं (शुभं भवति) ॥ ६ ॥

भाषा—हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, ये चार नक्षत्र और बृहस्पति दिन, इनकी क्षिप्र और लघु संज्ञा है । इनमें बाजार का कार्य, स्त्रीसम्भोग, शास्त्रादि का ज्ञान, आभूषणों का बनवाना और पहिनना, चित्रकारी, गाना बजाना इत्यादि कला और आदि पद से चर संज्ञक नक्षत्रों का भी कार्य, ये सब सिद्ध होते हैं ॥ ६ ॥

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम् ॥ ७ ॥

अन्वयः--मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं भृगुः मृदु [मृदुसंज्ञं], मैत्रं (मैत्रसंज्ञं ज्ञेयम्) तत्र गीताम्बरक्रीडा, मित्रकार्यं विभूषणं (सिद्ध्यति) ॥ ७ ॥

भाषा--मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्रसंज्ञा है । इनमें गाना, वस्त्र पहिनना, स्त्री के साथ क्रीड़ा, मित्रका कार्य,आभूपण पहिनना आदि कार्य शुभ होते हैं ॥

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम् ॥ ८ ॥

अन्वयः--मूलेन्द्रार्द्राहिभं तथा सौरिः तीक्ष्णं, दारुणसंज्ञकं (च ज्ञेयम्) । तत्र, अभिचारघातोग्रभेदाः, पशुदमादिकं (सिद्ध्यति) ॥ ८ ॥

भाषा--मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेपा, ये चार नक्षत्र और शनैश्चर दिन, इनकी तीक्ष्ण तथा दारुण संज्ञा है । इनमें अभिचार यानी मरण आदि भयानक कर्म, भेद और हाथी-घोड़े आदि का सिखाना, ये कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ८ ॥

नक्षत्रों की अधोमुखादि संज्ञायें

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुखं भवेदूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवम् ।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषु सत् ॥

अन्वयः--मूलाहिमिश्रोग्रं अधोमुखं, आर्द्रेज्यहरित्रयं ध्रुवं ऊर्ध्वास्यं, मैत्रकरानिलादितिज्येष्ठाश्विभानि, तिर्यङ्मुखं, भवेत्, एषु, ईदृशकृत्यं, सत् ॥ ९ ॥

भाषा--मूल, आश्लेपा, मिश्रसंज्ञक और उग्रसंज्ञक नक्षत्रों की अधोमुख संज्ञा है । आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और ध्रुवसंज्ञक नक्षत्रों को ऊर्ध्वमुख कहते हैं । मृदुसंज्ञक नक्षत्र, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी की तिर्यङ्मुख संज्ञा है । इनमें इन्हीं संज्ञाओं के सदृश कार्य शुभ होता है, अर्थात् अधोमुखसंज्ञक नक्षत्रों में कुँवा, बावली, तालाब आदि खोदवाना, ऊर्ध्वमुख नक्षत्रों में राज्याभिषेक, पट्टबन्ध, दुमहला, तिमहला आदि मकान बनवाना और तिर्यङ्मुख नक्षत्रों में हाथी, घोड़े, बैल आदि के कृत्य और यात्रा आदि शुभ होते हैं ॥ ९ ॥

मूँगा और दाँत आदि धारण करने का मुहूर्त्त

पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्या-
दित्ये प्रवालरदशङ्खसुवर्णवस्त्रम् ।
धार्यं विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि रक्तं
भौमे ध्रुवादितियुगे सुभगा न दध्यात् ॥ १० ॥

अन्वयः—पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्यादित्ये, विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि, प्रवालरदशंखसुवर्णवस्त्रं धार्यम् । भौमे, रक्तं, (वस्त्रं धार्यम्) ध्रुवादितियुगे, सुभगा, न दध्यात् ॥ १० ॥

भाषा—रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, पुनर्वसु, इन नक्षत्रों में और रिक्ता को छोड़कर अन्य तिथियों में सोमवार, मङ्गल और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में मूँगा, दाँत, शङ्ख और सुवर्ण के आभूषण तथा वस्त्र धारण करना चाहिए। मङ्गल के दिन लाल वस्त्र धारण करना उत्तम है। तीनों उत्तरा, पुनर्वसु और पुष्य में सधवा स्त्री मूँगा इत्यादि न धारण करे। कोई आचार्य कहते हैं कि शतभिषा नक्षत्र में भी सधवा स्त्री मूँगा इत्यादि का धारण और स्नान न करे। यदि ऐसा कार्य भूल से हो जाय तो अपने पति की पूजा करे तो दोष शान्त होता है ॥ १० ॥

नवीन वस्त्र के जलने आदि से होनेवाला शुभाशुभ फल

वस्त्राणां नवभागकेषु च चतुः कोणेऽमरा राक्षसा
मध्यत्र्यंशगता नरास्तु सदशे पाशे च मध्यांशयोः ।
दग्धे वा स्फुटितेऽम्बरे नवतरे पङ्कादिलिप्ते न स-
द्रक्षोंशे नृसुरांशयोः शुभमसत्सर्वांशके प्रान्ततः ॥ ११ ॥

अन्वयः—वस्त्राणां नवभागकेषु चतुष्कोणे अमराः, मध्यत्र्यंशगताः राक्षसाः तु [पुनः] मध्यांशयोः सदशे पाशे नराः (तत्र) रक्षोंऽशे नवतरे अम्बरे दग्धे स्फुटिते पङ्कादिलिप्ते वा न सत्, नृसुरांशयोः शुभं, प्रान्ततः सर्वांशके असत् ॥ ११ ॥

भाषा—कदाचित् पहिनने के दिन ही नवीन वस्त्र कहीं जल जाय, फट जाय, उसमें गोबर या कीचड़ लग जाय तो उस के नौ भगों

की कल्पना करके चारों कोनों में देवताओं की, मध्य के तीन भागों में राक्षसों की और दोनों छोरों के दोनों मध्य भागों में नरों की कल्पना करे। यदि राक्षस भागों में दाहादि हो तो वस्त्र शुभ नहीं होता अर्थात् मरणकारक होता है। यदि देव-मनुष्य-भागों में दाहादि हो तो शुभ होता है, यह भोग और पुत्रप्राप्तिकारक होता है। यदि राक्षस, देवता, मनुष्य इन तीनों के भागों में दाहादि हो तो वह वस्त्र शुभकारक कदापि नहीं होता। ऐसा ही विचार शय्या, आसन तथा खड़ाऊँ इत्यादि में भी करे॥ ११॥

देवता शुभ	राक्षस अशुभ	देवता शुभ
मनुष्य शुभ	राक्षस अशुभ	मनुष्य शुभ
देवता शुभ	राक्षस अशुभ	देवता शुभ

निन्द्यकाल में भी वस्त्र धारण का विधान

विप्राज्ञया तथोद्वाहे राज्ञा प्रीत्यार्पितं च यत्।
निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ धार्यं वस्त्रं जगुर्बुधाः॥ १२॥

अन्वयः--विप्राज्ञया, तथा उद्वाहे, राज्ञा प्रीत्यार्पितं च यत् वस्त्रं (तत्) निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ धार्यं (इति) बुधाः जगुः॥ १२॥

ब्राह्मण की आज्ञा से, विवाह में और प्रीतिपूर्वक राजा के दिये हुए वस्त्र को निन्द्य भी नक्षत्र और वारादि में धारण करना चाहिये ऐसा पण्डित लोग कहते हैं॥ १२॥

राजदर्शन, मद्यारम्भ तथा गो-क्रय-विक्रय का मुहूर्त्त

राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैर्लतापादपा-
रोपोऽथो नृपदर्शनं ध्रुवमृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः।
तीक्ष्णोग्राम्बुपभेषु मद्यमुदितं क्षिप्रान्त्यवह्नीन्द्रभा-
दित्येन्द्राम्बुपवासवेषु हि गवां शस्तः क्रयो विक्रयः॥ १३॥

अन्वयः—राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैः लतापादपारोपः अथ ध्रुवमृदुक्षि-

प्रश्रवोवासवैः नृपदर्शनं, तीक्ष्णोग्रांत्रुपभेषु मद्य उदितम्, क्षिप्रांत्यवह्नीन्दुभादित्येन्द्राम्बुपवासवेषु गवां क्रयो विक्रयः हि (इति निश्चयेन) शस्तः ॥ १३ ॥

भाषा—विशाखा, मूल, मृदुसंज्ञक, अर्थात् चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, ध्रुवसंज्ञक अर्थात् तीनों उत्तरा, रोहिणी, शतभिषा और क्षिप्रसंज्ञक अर्थात् अश्विनी, पुष्य, अभिजित् इन चौदह नक्षत्रों में लता और वृक्ष लगाना शुभ है। ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक, श्रवण, धनिष्ठा इन तेरह नक्षत्रों में राजा का दर्शन करना उत्तम है। मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, मघा, भरणी, शतभिषा, इन नक्षत्रों में मद्यारम्भ शुभ माना जाता है। अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती, विशाखा, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, शतभिषा, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में गौ-बैल आदि का मोल लेना और वेंचना उत्तम होता है ॥ १३ ॥

पशु पालने का मुहूर्त्त ।

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे ।
रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रवत्वाष्ट्रेषु यानं स्थितिवेशनं न सत् १४

अन्वयः—अष्टमशुद्धिसंयुते शुभे लग्ने, च (तथा) निजयोनिभे, चरे, पशूनां रक्षा सत् [भवति] । रिक्ताष्टमीदर्शकुजश्रवोध्रुवत्वाष्ट्रेषु पशूनां यानं, स्थितिवेशनं न सत् ॥ १४ ॥

भाषा—शुभ लग्न हो, लग्न से आठवें स्थान में पापग्रह न हो और अपनी योनि का नक्षत्र हो तब पशुओं को पालना चाहिए अथवा चर अर्थात् स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, इन नक्षत्रों में पशुओं को पालना चाहिए। चौथ, नवमी, चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, मंगल दिन, श्रवण, तीनों उत्तरा, रोहिणी और चित्रा नक्षत्र में पशुओं को घर से बाहर लें जाना और घर में रखना या लाना अशुभ है ॥ १४ ॥

औषधि तथा सूचीकर्म का मुहूर्त्त

भैषज्यं सल्लघुमृदुचरे मूलभे द्व्यङ्गलग्ने
शुक्रेन्द्वीज्ये विदि च दिवसे चापि तेषां रवेश्च ।

शुद्धे रिष्फद्यूनमृतिगृहे सत्तिथौ नो जनेभे
सूचीकर्माप्यदितिवसुभत्वाष्ट्रमित्राश्विधिष्ण्ये ॥१५॥

अन्वयः—लघुमृदुचरे मूलभे, शुक्रेन्द्वीज्ये, विदि च द्व्यंगलग्ने, तेषां रवेश्चापि दिवसे, रिष्फद्यूनमृतिगृहे शुद्धे, सत्तिथौ, भैषज्यं सत्, जनेभे नो । अदितिवसुभत्वाष्ट्रमित्राश्विधिष्ण्ये सूचीकर्मापि सत् ॥ १५ ॥

भाषा—अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, मृगशिरा, अनुराधा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाती, पुनर्वसु, मूल इन नक्षत्रों में; द्विस्वभाव लग्न में; शुक्र, चन्द्रमा, बृहस्पति और बुध लग्न में हों; शुक्र, चन्द्रमा बृहस्पति, बुध तथा रविवार हो; लग्न से बारहवें, सातवें, आठवें स्थान में कोई ग्रह हो, रिक्ता और अमावस को छोड़ अन्य शुभ तिथियाँ हों तो औषधि सेवन करना शुभ है । जब कि जन्मनक्षत्र न हो तो पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी इन नक्षत्रों में सिलाई का काम शुभ होता है ॥ १५ ॥

क्रय-विक्रय मुहूर्तों का निषेध और क्रयमुहूर्त्त

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न ।
पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः ॥ १६ ॥

अन्वयः—क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टः, विक्रयर्क्षे क्रयः अपि न, पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः (स्युः) ॥ १६ ॥

भाषा—खरीदने के मुहूर्त्त में बेंचना और बेंचने के मुहूर्त्त में खरीदना शुभ नहीं होता । यद्यपि मोल लेनेवाला बेचनेवाले के मुहूर्त्त में मोल नहीं लेगा तो बेंचनेवाला किसके हाथ बेचेगा और बेंचनेवाला मोल लेनेवाले के मुहूर्त्त में बेंचेगा नहीं तो मोल लेनेवाला क्या मोल लेगा । इस रीति से दोनों कार्य नहीं हो सकते । तथापि आवश्यकता के कारण किसी एक के मुहूर्त्त का विचार न करने से दूसरे का कार्य हो सकता है, यही इसका तात्पर्य है । रेवती, शतभिषा, अश्विनी, स्वाती, श्रवण और चित्रा ये नक्षत्र मोल लेने में शुभ हैं ॥ १६ ॥

विक्रय और विपणिकार्य का मुहूर्त्त

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रद्विकोणे शुभैः
षट्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटतनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ ।
रिक्ताभौमघटान्विना च विपणिर्मित्रध्रुवक्षिप्रभै-
र्लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे॥१७॥

अन्वयः—पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे शुभैः केन्द्रत्रिकोणे, अशुभैः षट्त्र्यायेषु (स्थितैः) घटतनुं विना, सत्तिथौ विक्रयः सत्, रिक्ताभौमघटान् विना, च मित्रध्रुवक्षिप्रभैः, चन्द्रसिते लग्ने, पापैः व्ययाष्टरहितैः, शुभैः द्व्यायखे, विपणिः सत् ॥ १७ ॥

भाषा—तीनों पूर्वा, विशाखा, कृत्तिका, आश्लेषा और भरणी नक्षत्र में कुम्भ के सिवाय जिस लग्न के पहिले, चौथे, सातवें, दसवें, पाँचवें और नवें स्थान में शुभग्रह हों, छठें, तीसरे, ग्यारहवें स्थान में अशुभ ग्रह हों ऐसे लग्न में और शुभ तिथियों में किसी वस्तु का वेचना शुभ होता है। चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् इन नक्षत्रों में, चौथ, नवमी, चतुर्दशी, मङ्गल दिन, कुम्भ लग्न को छोड़कर अन्य तिथि, दिन और लग्नों में, चन्द्रमा और शुक्र के लग्न में रहते, बारहवें और आठवें स्थान में पापग्रहों के न रहते दूसरे, ग्यारहवें तथा दसवें स्थान में शुभग्रहों के रहते बाजार का कार्य अर्थात् वेंचना-मोल लेना इत्यादि कार्य शुभ है॥१७॥

घोड़ा और हाथी के कृत्य सम्बन्धी मुहूर्त्त

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ।
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकृत्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान् ॥१८॥

अन्वयः—क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येषु, अरिक्तारदिने, वाजिकृत्यं प्रशस्तं स्यात् । अथ मृदुक्षिप्रचरेषु, विद्वान् हस्तिकार्यं कुर्यात् ॥ १८ ॥

भाषा—अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती, धनिष्ठा, मृगशिरा, स्वाती, शतभिषा, पुनर्वसु, इन नक्षत्रों में; चौथ, नवमी, चतुर्दशी को छोड़ अन्य तिथियों में ; मङ्गल को छोड़ अन्य दिनों में घोड़ों का कृत्य अर्थात् वेंचना या मोल

लेना, चढ़ना इत्यादि शुभ है। चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाती, इन नक्षत्रों में हाथियों का कार्य अर्थात् वेंचना, मोल लेना, चढ़ना इत्यादि शुभ है ॥१८॥

गहना बनवाने का मुहूर्त्त

स्याद्भूषाघटनं त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे रत्नयुक्
तत्तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे मेषालिसिंहे तनौ ।
तन्मुक्तासहितं चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे सत्तनौ
तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं शुभं घट्टितम् ॥ १९ ॥

अन्वयः—त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे, भूषाघटनं सत् स्यात् । तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे (वारे) मेषालिसिंहे तनौ रत्नयुक् तत् (भूषाघटनं) सत् । चरध्रुवमृदु-क्षिप्रे, शुभे सत्तनौ, मुक्तासहितं तत् (भूषाघटनम्) शुभम् । तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं घट्टितं शुभम् (स्यात्) ॥ १९ ॥

भाषा—त्रिपुष्कर योग में और श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रों में आभूषण बनवाना अथवा धारण करना चाहिए। यदि आभूषण रत्नों से युक्त हो तो मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी और मघा को छोड़कर अन्य नक्षत्रों में ; रविवार और मङ्गलवार में ; मेष, वृश्चिक, सिंह लग्न में बनवाना और धारण करना चाहिए। चरसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक, मृदु-संज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में; सोमवार और शुक्रवार में ; कर्क, वृष, तुला लग्न में मोतीयुक्त और चाँदी के आभूषण बनवाना तथा धारण करना चाहिए। मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, अश्विनी, मृगशिरा, विशाखा, कृत्तिका इन नक्षत्रों में हथियार धारण करना और बनवाना शुभ होता है॥ १९ ॥

मुद्रापातन और वस्त्रक्षालनमुहूर्त

मुद्राणां पातनं सद्ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैर्वीन्दुसौरे
घस्रे पूर्णाजयाख्ये न च गुरुभृगुजास्ते विलग्ने शुभैः स्यात् ।

वस्त्राणां क्षालनं सद्वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्यपुष्ये
नो रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु कार्यं कदापि ॥ २० ॥

अन्वयः—ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैः, वीन्दुसौरे घस्त्रे, पूर्णाजयाख्ये (तिथौ) गुरुभृगुजास्ते न, शुभैः विलग्ने मुद्राणां पातनं सत् । वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्य-पुष्ये, वस्त्राणां क्षालनं सत् स्यात् । रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु, वस्त्राणां क्षालनं कदापि नो कार्यम् ॥ २० ॥

भाषा—ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, चरसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में, सोमवार और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में, पञ्चमी, दशमी, पूर्णमासी, तीज, अष्टमी, त्रयोदशी इन तिथियों में, बृहस्पति और शुक्र के अस्तकाल को छोड़कर, लग्न में शुभ ग्रहों के रहते मुद्रापातन अर्थात् राजचिह्नयुक्त मुद्रा ढलवाना और खजाने में जमा करना शुभ होता है। धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, पुनर्वसु पुष्य नक्षत्र में; चौथ, नवमी, चतुर्दशी, पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पूर्णिमा, सूर्य की संक्रान्ति का दिन, छठ, पितृश्राद्ध का दिन, शनैश्चर और बुधवार को छोड़ अन्य तिथियों और दिनों में पहले-पहल कपड़ा धोने के लिए धोबी को देना शुभ होता है ॥ २० ॥

कुन्तवर्मादि के धारण और शय्यासनादि के भोग का मुहूर्त्त

सन्धार्याः कुन्तवर्मेष्वसनशरकृपाणासिपुत्र्यो विरिक्ते
शुक्रेज्यार्केऽह्नि मैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्रद्विदैवे ।
स्युर्लग्ने हि स्थिराख्ये शशिनि च शुभदृष्टे शुभैः केन्द्रगैः स्या-
द्भोगः शय्यासनादेर्ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्य इष्टः ॥ २१ ॥

अन्वयः—विरिक्ते (तिथौ) शुक्रेज्यार्केऽह्नि, मैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्रद्वि दैवे, स्थिराख्ये लग्नेऽपि, शशिनि शुभदृष्टे, शुभैः केन्द्रगैः, कुन्तवर्मेष्वशनशरकृ-पाणासिपुत्र्यः सन्धार्याः स्युः । ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्ये शय्यासनादेः भोगः इष्टः स्यात् ॥ २१ ॥

भाषा—रिक्ता तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में; शुक्र, बृहस्पति और रवि-वार में, मैत्रसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक लघुसंज्ञक सहित पुनर्वसु, ज्येष्ठा और विशाखा

नक्षत्र में; स्थिर अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक अथवा कुम्भ लग्न में चन्द्रमा के रहते और शुभग्रहों से देखते तथा केन्द्र में शुभ ग्रहों के रहते बरछी, कवच, धनुष-बाण, तलवार, छुरी आदि धारण करना शुभ है। ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, लघुसंज्ञक, श्रवण, भरणी और पुनर्वसु में शय्या और आसन आदि का उपभोग उत्तम होता है ॥२१॥

सभी नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञा

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं
मन्दाक्षं रविविश्वमैत्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत् ।
मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् ॥२२॥

अन्वयः—वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं अन्धाक्षं भवेत्, रविविश्वमित्रजलपाश्लेपाश्विचान्द्रं मन्दाक्षं भवेत्, शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं मध्याक्षं भवेत्, स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् स्वक्षं भवेत् २२

भाषा—धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढ़, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती इन नक्षत्रों की अन्धाक्ष संज्ञा है। हस्त, उत्तराषाढ़, अनुराधा, शतभिषा, आश्लेषा, अश्विनी, मृगशिरा, इन नक्षत्रों की मन्दाक्ष संज्ञा है। आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्रपद, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित् और भरणी, इन नक्षत्रों की मध्याक्ष संज्ञा है। स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, कृत्तिका, उत्तरभाद्रपद, मूल और पूर्वाफाल्गुनी, इनकी स्वक्ष अर्थात् सुलोचन संज्ञा है ॥ २२ ॥

अन्धाक्षादिज्ञापक चक्र।

धनि.	पुष्य	रोहिणी	पू. षा.	विशाखा	उ. फा.	रेवती	अंधाक्ष
हस्त	उ.षा.	अनुराधा	शतभिषा	आश्लेषा	अश्विनी	मृगशिरा	मन्दाक्ष
आर्द्रा	म.	पू० भा०	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित	भरणी	मध्याक्ष
स्वाती	पुनर्व.	श्रवण	कृत्तिका	उ०भा०	मूल	पू०फा०	स्वक्ष

अन्धाक्षादि नक्षत्रों का फलाफल

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥ २३ ॥

अन्वयः—अन्धे विनष्टार्थस्य शीघ्रं लाभः, मन्दे प्रयत्नतः, मध्ये दूरे श्रवणं स्यात्, सुलोचने श्रुत्याप्ती न ॥ २३ ॥

भाषा—यदि अन्धाक्षसंज्ञक नक्षत्रों में कोई वस्तु चोरी जाय तो शीघ्र मिले, मन्दाक्षसंज्ञक नक्षत्रों में बड़े उपाय से मिले, मध्याक्षसंज्ञक नक्षत्रों में दूर में सुन पड़े, किन्तु मिले नहीं और सुलोचनसंज्ञक में तो कुछ भी पता ही न लगे ॥ २३ ॥

धन के व्यवहार में निषिद्ध नक्षत्रादिका विचार

तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैर्यद्द्रव्यं दत्तं निवेशितम् ।
प्रयुक्तं च विनष्टं च विष्ट्यां पाते च नाप्यते ॥२४॥

अन्वयः—तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैः, विष्ट्यां, पाते च यद्द्रव्यं दत्तं, निवेशितम्, प्रयुक्तं विनष्टं च (तत्) न आप्यते ॥ २४ ॥

भाषा—तीक्ष्णसंज्ञक, मिश्रसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक और उग्रसंज्ञक नक्षत्रों में और भद्रा अथवा व्यतीपात में जो द्रव्य किसी को दे दिया जाय, धरोहर धरा जाय, ऋण दिया जाय, कहीं गिर पड़े या चोरी जाय तो वह फिर किसी तरह भी न मिले ॥ २४ ॥

जलाशयखनन और नृत्यारम्भ का मुहूर्त

मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः
पापैर्हीनबलैस्तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा भृगौ खे विधौ ।
आप्ये सर्वजलाशयस्य खननं व्यम्भोमघैः सेन्द्रभै-
स्तैर्नृत्यं हिबुके शुभैस्तनुगृहे ज्ञेऽब्जे ज्ञराशौ शुभम् ॥ २५ ॥

अन्वयः—मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः पापैः हीनबलैः, सुरगुरौ ज्ञे वा तनौ, भृगौ खे, विधौ आप्ये, सर्वजलाशयस्य खननं शुभम् (स्यात्) । व्यम्भोमघैः सेन्द्रभैः तैः (पूर्वोक्तनक्षत्रैः) शुभैः हिबुके, ज्ञे तनुगृहे, अब्जे ज्ञराशौ नृत्यं शुभम् (भवति) ॥ २५ ॥

भाषा—अनुराधा, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, पूर्वाषाढ़, रेवती, पुष्य और मृगशिरा इन नक्षत्रों में, पापग्रहों के निर्बल रहते, लग्न में बृहस्पति तथा बुध के रहते लग्नसे दशम स्थान में शुक्र के रहते, जल-राशियों में चन्द्रमा के रहते वापी, कूप तथा तड़ाग आदि जलाशयों का खनना शुभ होता है। पूर्वोक्त नक्षत्रों में पूर्वाषाढ़ और मघा को छोड़ और ज्येष्ठा को मिलाकर अर्थात् अनुराधा, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, पुष्य, मृगशिरा और ज्येष्ठा, इन नक्षत्रों में, लग्न से चौथे स्थान में शुभग्रहों के रहते, शुभग्रहों से इष्ट लग्न में बुध के रहते और मिथुन या कन्याराशि में चन्द्रमा के रहते नाचने का आरम्भ करना शुभ होता है ॥ २५ ॥

नौकरी करने का मुहूर्त

क्षिप्रे मैत्रे वित्सितार्केज्यवारे सौम्ये लग्नेऽर्के कुजे वा खलाभे ।
योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां सेवा कार्या स्वामिनः सेवकेन ॥

अन्वयः—क्षिप्रे, मैत्रे, वित्सितार्केज्यवारे, सौम्ये लग्ने, अर्के खलाभे, वा कुजे खलाभे, योनेर्मैत्र्यां च, राशिपोः अपि मैत्र्यां सेवकेन स्वामिनः सेवा कार्या ॥ २६ ॥

भाषा—अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा तथा रेवती, इन नक्षत्रों में; बुध, शुक्र, रविवार और बृहस्पति, इन वारों में; लग्न में शुभग्रहों के रहते; दसवें और ग्यारहवें स्थान में सूर्य या मंगल के रहते सेवक को स्वामी की सेवा करने का कार्य प्रारम्भ करना शुभ होता है। यहाँ इतना और विचार लेना चाहिए कि स्वामी और सेवक के जन्मनक्षत्र की योनियों में परस्पर मित्रता और दोनों के जन्म-राशीशों की परस्पर मित्रता हो ॥ २६ ॥

द्रव्यप्रयोग (कर्ज देने) और ऋणग्रहण का मुहूर्त

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे
लग्ने धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः ।

नारे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि यत्त-
द्वंशेषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥२७॥

अन्वयः—स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते चरे लग्ने द्रव्यप्रयोगः शुभः। आरे तु संक्रमदिने, वृद्धौ, करेऽर्केऽह्नि न ग्राह्यं, यत् (यस्मात्) तद्वंशेषु ऋणं भवेत्। बुधे कदाचिद्धनं न देयम्॥ २७॥

भाषा—स्वाती, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा और अश्विनी, इन नक्षत्रों में; नवें, पाँचवें और आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते द्रव्य का प्रयोग अर्थात् ऋण आदि देना तथा रोजगार में लगाना शुभ होता है। मङ्गल के दिन, संक्रान्ति के दिन, जिस दिन वृद्धियोग हो उस दिन, हस्त नक्षत्र में सूर्य के रहते और रविवार को ऋण नहीं लेना चाहिए। क्योंकि इन दिनों में लिया हुआ ऋण लेनेवाले के वंशभर कायम रह जाता है, वह पुत्र-पौत्रादिकों में से किसी के दिये नहीं चुकता बुधवार को कोई किसी को भी अपना धन किसी तरह से भी न दे॥ २७॥

हल चलाने का मुहूर्त्त

मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैर्विनार्कं शनिं
पापैर्हीनबलैर्विधौ जलगृहे शुक्रे विधौ मांसले।
लग्ने देवगुरौ हलप्रवहणं शस्तं न सिंहे घटे
कर्काजैणधटे तनौ क्षयकरं रिक्तासु षष्ठ्यां तथा॥ २८॥

अन्वयः—मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैः, अर्कं, शनिं विना, पापैः हीनबलैः, विधौ जललवे, शुक्रे विधौ मांसले, देवगुरौ लग्ने हलप्रवहणं शस्तं (स्यात्)। सिंहे घटे कर्काजैणघटे तनौ तथा रिक्तासु षष्ठ्यां क्षयकरम् (भवति)॥ २८॥

भाषा—मूल, विशाखा, मघा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य और हस्त इन नक्षत्रों में; शनिवार और रविवार छोड़ अन्य दिनों में, पापग्रहों के निर्बल रहते और जलराशि में चन्द्रमा के रहते, शुक्र के उदय रहते, लग्न में पूर्ण चन्द्रमा तथा बृहस्पति के रहते

पहिले पहिल हल चलाना शुभदायक होता है । यदि सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष, मकर और तुला लग्न; चौथ, नवमी, चतुर्दशी, छठ और अष्टमी तिथि हो तो क्षयकारक होता है ॥ २८ ॥

बीजोप्तिमुहूर्त्त

एतेषु श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना
बीजोप्तिर्गदिता शुभात्वशुभतोऽष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः ।
रामेन्द्वग्नियुगान्यसच्छुभकराण्युप्तौ हलेऽर्कोज्झिता-
द्धाद्रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः प्रोक्तान्यसत्सन्ति च ॥२९॥

अन्वयः—श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि विना एतेषु (पूर्वोक्तनक्षत्रेषु) भौमं विना, बीजोप्तिः शुभा गदिता तु (पुनः) अशुभतः अष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः रामेन्द्वग्नियुगानि (भानि) असत्, शुभकराणि, उप्तौ प्रोक्तानि । हले अर्कोज्झिताद्भात् रामाष्टनवाष्टभानि, असत्सन्ति, मुनिभिः प्रोक्तानि ॥ २९ ॥

भाषा—श्रवण, शतभिषा, पुनर्वसु और विशाखा नक्षत्र तथा मंगल दिन को छोड़ पूर्वोक्त हलप्रवाह मुहूर्त्त में बीज बोना शुभदायक है । जिस नक्षत्र में राहु स्थित हो उस नक्षत्र से आठ नक्षत्र बीज बोने में अशुभ, फिर तीन शुभ फिर एक अशुभ, फिर तीन शुभ और उसके बाद चार नक्षत्र अशुभ होते हैं ।

राहुभात् नक्षत्रात् फणिचक्रम् ।

८	३	१	३	१	३	१	३	४
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ

पहिले पहिल हल चलाने के लिए सूर्यभुक्त अर्थात् जिस नक्षत्र में सूर्य वर्त्तमान हो, उस नक्षत्र के पूर्व नक्षत्र से लेकर तीन नक्षत्र पर्यन्त अशुभ, चौथे से लेकर ग्यारहवें तक शुभ, बारहवें से लेकर बीसवें तक अशुभ और इक्कीसवें से लेकर अट्ठाईसवें तक मुनियों ने शुभ कहा है ॥२९॥

सूर्यभुक्तभात् नक्षत्रात् हलचक्रम्

३	८	९	८
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ

शिरामोक्ष, विरेकादि व धर्मक्रिया के मुहूर्त्त ।

त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे शिरामोक्षणं
भौमार्केज्यदिने विरेकवमनाद्यं स्याद्बुधार्कीं विना ।
मित्रक्षिप्रचरध्रुवे रविशुभाहे लग्नवर्गे विदो
जीवस्यापि तनौ गुरौ निगदिता धर्मक्रिया तद्बले ॥ ३० ॥

अन्वयः—त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे, भौमार्केज्यदिने शिरामोक्षणम् (कार्यम्) बुधार्कीं विना (पूर्वोक्तनक्षत्रेषु) विरेकवमनाद्यं (शुभं) स्यात् । मित्रक्षिप्रचरध्रुवे, रविशुभाहे, विदः जीवस्य अपि लग्नवर्गे, गुरौ तनौ, तद्बले (गुरुबले) धर्म-क्रिया (शुभा) निगदिता ॥ ३० ॥

भाषा—चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, शतभिषा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् और श्रवण नक्षत्र में—मंगल, रविवार, बृहस्पति दिन में शिरामोक्षण अर्थात् फस्त खोलवाना शुभ होता है । बुध और शनैश्चर को छोड़कर अन्य दिनों में और इन्हीं नक्षत्रों में विरेक-वमन आदि शुभकारक होता है । अनुराधा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्र में—रविवार, सोमवार, बुध, बृहस्पति, शुक्र दिन में—बुध और बृहस्पति के लग्न वा षड्वर्ग में—लग्न में बृहस्पति के रहते और कर्त्ता का बृहस्पति बली होने पर धर्मक्रिया का आरम्भ करना शुभ होता है ॥३०॥

धान्यच्छेदनमुहूर्त्त

तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दु-
स्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये ।
मन्दाररिक्तरहिते दिवसेऽतिशस्ता
धान्यच्छिदा निगदिता स्थिरभे विलग्ने ॥ ३१ ॥

अन्वयः—तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दुस्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये, मन्दाररिक्तरहिते दिवसे, स्थिरभे विलग्ने धान्यच्छिदा अतिशस्ता निगदिता ॥३१॥

भाषा—मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वभाद्रपद, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिरा, स्वाती, मघा, तीनों उत्तरा, पूर्वाषाढ़, भरणी, चित्रा

और पुष्य नक्षत्र में, शनैश्चर, मंगल दिन और रिक्ता तिथि को छोड़ अन्य दिन और तिथि में और स्थिर लग्न में अनाज का काटना शुभ होता है ॥ ३१ ॥

कणमर्दन और सस्यरोपण का मुहूर्त्त

भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूल-
मैत्रान्त्यभेषु कथितं कणमर्दनं सत् ।
द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे
सस्यस्य रोपणमिहार्किकुजौ विना सत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूलमैत्रान्त्यभेषु, कणमर्दनं सत् कथितम् । द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे, आर्किकुजौ विना सस्यस्य रोपणं सत् ३२

भाषा—पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, श्रवण, मघा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मूल, अनुराधा और रेवती नक्षत्र में कणमर्दन अर्थात् खलिहान में अनाज का पीटना अथवा माड़ना शुभ होता है। विशाखा, पूर्वभाद्रपद, मूल, रोहिणी, शतभिषा और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में—शनैश्चर और मंगल को छोड़ अन्य दिनों में खेतों में धान का लगाना शुभ है ॥ ३२ ॥

धान्यस्थिति और धान्यवृद्धि का मुहूर्त्त

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु
कर्काजतौलिरहिते च तनौ शुभाहे ।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता ध्रुवेज्य-
द्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः ॥ ३३ ॥

अन्वयः—मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु च (तथा) कर्काजतौलिरहिते तनौ, शुभाहे धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता । च [पुनः] ध्रुवेज्यद्वीशेन्द्रदस्रचर-भेषु धान्यवृद्धिः शुभकरी गदिता ॥ ३३ ॥

भाषा—विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा और ज्येष्ठा को छोड़ अन्य नक्षत्रों में—कर्क, मेष और तुला को छोड़ अन्य लग्नों में—सोम, बुध, शुक्र और बृहस्पति के दिन में धान्यस्थिति अर्थात् अन्न का रखना शुभ होता है। तीनों उत्तरा, रोहिणी,

पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु और स्वाती नक्षत्र में धान्यवृद्धि अर्थात डेढ़ी और सवाई पर अनाज देना शुभ है ॥ ३३ ॥

शान्तिक और पौष्टिक कर्मका मुहूर्त्त

क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च सह मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमये शुभदं निमित्ते ॥ ३४ ॥

अन्वयः—क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु अर्के खे, विधौ सुखगते, गुरौ तनुगे, मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् सह शान्तिकं शस्तं स्यात्। मौढ्यादिदुष्टसमये नो शुभदं (तथा) निमित्ते [केत्वाद्युत्पातदर्शने सति] शुभदं (स्यात्) ॥ ३४ ॥

भाषा—अश्विनी, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, अनुराधा और मघा नक्षत्र में–रिक्ता, अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस, सूर्य-संक्रान्ति, रविवार, मंगल, शनैश्चर को छोड़ अन्य तिथियों और दिवसों में लग्न से दशवें स्थान में सूर्य, चौथे स्थान में चन्द्रमा और लग्न में बृहस्पति के रहते मङ्गल अर्थात् गणेशादि की पूजा, पौष्टिक अर्थात पुष्टिकामना से कोई पुरश्चरणादि और मूलशान्ति आदि करना शुभ है। बृहस्पति, शुक्रास्तादि और केतूदयादि उत्पात के समय को छोड़कर उक्त मुहूर्त्त मिले तो बहुत उत्तम है, अन्यथा कैसा ही समय हो, शान्त्यादि करने में कुछ दोष नहीं है ॥ ३४ ॥

होमाहुतिमुहूर्त्त

सूर्यगात्त्रित्रिभे चन्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ ३५ ॥

अन्वयः—सूर्यभात् त्रित्रिभे चान्द्रे [चन्द्रर्क्षे] सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः चन्द्रारेज्यागुशिखिनः (स्युः) खले होमाहुतिः नेष्टा (भवति) ॥ ३५ ॥

भाषा—सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हो उससे तीन-तीन नक्षत्रों का

एक त्रिक होता है, ऐसे सत्ताईस नक्षत्रों के नौ त्रिक होंगे । उनमें पहिला सूर्य का, दूसरा बुध का, तीसरा शुक्र का, चौथा शनैश्चर का, पाँचवाँ चन्द्रमा का, छठाँ मङ्गल का, सातवाँ बृहस्पति का, आठवाँ राहु का और नवाँ केतु का त्रिक होता है। होम के दिन का नक्षत्र जिसके त्रिक में पड़े, उसी ग्रह के मुख में हो होमाहुति पड़ती है । खलग्रह के मुख में होमाहुति शुभ नहीं होती ॥ ३५ ॥

अग्निवास और उसका शुभाशुभ फल

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥३६॥

अन्वयः—तिथिः सैका वारयुता कृताप्ता गुणेऽभ्रे शेषे भुवि वह्निवासः (ज्ञेयः) होमे सौख्याय च (तथा) शशियुग्मशेषे (क्रमेण) दिवि भूतले वह्निवासो ज्ञेयः। [तत्र होमे] प्राणार्थनाशौ (भवतः) ॥ ३६ ॥

भाषा—शुक्लपक्षकी प्रतिपदा से लेकर इष्ट तिथि पर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो, उसमें एक और जोड़े। फिर रविवार से लेकर इष्टवार पर्यन्त गिनने से जितनी संख्या हो उसको भी उसी में जोड़े। उस अङ्क में चारका भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे तो अग्नि का वास आकाश में होता है, वह होम करने वाले के प्राण का नाश करता है और यदि दो शेष रहें तो अग्नि का वास पाताल में होता है, वह धन का हानिकारक होता है ॥ ३६ ॥

नवान्न भक्षण करने का मुहूर्त्त

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दाविषघटीमधुपौपार्किभूमिजान् ॥ ३७ ॥

अन्वयः—चरक्षिप्रमृदुभे, सत्तनौ, नन्दाविषघटीमधुपौपार्किभूमिजान् विना, नवान्नं (शुभं) स्यात् ॥ ३७ ॥

भाषा—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती इन नक्षत्रों में शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट शुभग्रहों के लग्न में, प्रतिपदा, छठ, एकादशी तिथि, विप-

घटी, पूस और चैत्रमास, मङ्गल और शनैश्चर दिन को छोड़ कर अन्य तिथि, वार और मास में नवान्नभक्षण शुभ होता है ॥ ३७ ॥

नौकाघट्टन मुहूर्त्त

याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे ।
भृग्वीज्यार्कदिने नौकाघट्टनं सत्तनौ शुभम् ॥ ३८ ॥

अन्वयः—याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे, भृग्वीज्यार्कदिने सत्तनौ नौकाघट्टनं शुभं स्यात् ॥ ३८ ॥

भाषा—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा और आर्द्रा को छोड़ अन्य नक्षत्रों में; शुक्र, बृहस्पति और रविवार में तथा शुभग्रह युक्त से दृष्ट शुभ लग्न में नाव का बनवाना शुभ होता है ॥३८॥

वीरसाधन व अभिचार का मुहूर्त्त

मूलार्द्राभरणीपितृमृगे सौम्ये घटे तनौ ।
सुखे शुक्रेऽष्टमे शुद्धे सिद्धिर्वीराभिचारयोः ॥ ३९ ॥

अन्वयः—मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे, घटे तनौ, सौम्ये, शुक्रे सुखे, अष्टमे शुद्धे वीराभिचारयोः सिद्धिः (भवति) ॥ ३९ ॥

भाषा—मूल, आर्द्रा, भरणी, मघा और मृगशिरा नक्षत्र में ; बुध-युक्त कुम्भ लग्न में; लग्न से चौथे स्थान में शुक्र के रहते और आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते वीरसाधन और अभिचार करना सिद्धि-कारक होता है ॥ ३९ ॥

रोग शान्त होने के पश्चात् स्नान का मुहूर्त्त

व्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे ।
स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥ ४० ॥

अन्वयः—व्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये, रिक्ते तिथौ, चरतनौ, विक-

वीन्दुवारे, विधौ हीने, खलखगैः भवकेन्द्रकोणे, (तदा) रुजा विरहितस्य (जनस्य) स्नानं शस्तम् ॥ ४० ॥

भाषा—रेवती, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मघा, स्वाती और आश्लेषा को छोड़कर अन्य दिनों में; मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न में निषिद्ध स्थान में चन्द्रमा के रहते और ग्यारहवें, पहिले, चौथे, सातवें, दसवें, पाँचवें और नवें स्थान में पापग्रहों के रहते रोग से छूटे हुए पुरुष स्नान करना शुभदायक होता है ॥ ४० ॥

शिल्पविद्या के प्रारम्भ का मुहूर्त्त

मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे गुरौ वा खलग्नगे ।
विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

अन्वयः—मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे खलग्नगे, वा गुरौ खलग्नगे, विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

भाषा—मृदुसंज्ञक, ध्रुवसंज्ञक, क्षिप्रसंज्ञक और चरसंज्ञक नक्षत्रों में; लग्न और दसवें स्थान में बुध या बृहस्पति के रहते; बुध और बृहस्पति के षड्वर्ग में चन्द्रमा के रहते शिल्पविद्या का प्रारम्भ करना शुभदायक होता है ॥ ४१ ॥

सन्धानमुहूर्त्त

सुरेज्यमित्रभाग्येषु चाष्टम्यां तैतिले हरौ ।
शुक्रदृष्टे तनौ सौम्यवारे सन्धानमिष्यते ॥ ४२ ॥

अन्वयः—सुरेज्यमित्रभाग्येषु, च (तथा) अष्टम्यां, हरौ, तैतिले, शुक्रदृष्टे तनौ, सौम्यवारे सन्धानं इष्यते ॥ ४२ ॥

भाषा—पुष्य, अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, अष्टमी, द्वादशी, सोमवार, बुध, बृहस्पति, शुक्रवार तथा शुक्र से दृष्ट वा युत लग्न और तैतिल नाम के करण में सन्धि और मित्रता करना शुभ होता है ॥ ४२ ॥

परीक्षामुहूर्त्त

त्यक्त्वाष्टभूतशनिविष्टिकुजान् जनुर्भ-
मासौ मृतौ रविविधू अपि भानि नाड्याः ।

द्व्यङ्गे चरे तनुलवे शशिजीवतारा-
शुद्धौ करादितिहरीन्द्रकपे परीक्षा ॥ ४३ ॥

अन्वयः—अष्टभूतशनिविष्टिकुजान्, जनुर्भमासौ, मृतौ रविविधू, अपि नाड्याः भानि त्यक्त्वा, द्व्यङ्गे चरे तनुलवे, शशिजीवताराशुद्धौ, करादितिहरीन्द्रकपे, परीक्षा (कार्या) ॥ ४३ ॥

भाषा--अष्टमी, चतुर्दशी, शनैश्चर, मंगल, भद्रा, जन्मनक्षत्र, जन्मनक्षत्र, जन्ममास, आठवाँ सूर्य, आठवाँ चन्द्रमा, जिस नाड़ी में जन्मनक्षत्र हो उस नाड़ी के सब नक्षत्र, इन सबको छोड़कर हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, ज्येष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में; मिथुन, कन्या, धन, मीन, मेष, कर्क, तुला, मकर लग्न में और इन्हीं राशियों के नवांश में; चन्द्रमा और बृहस्पति का गोचर शुद्ध तथा ताराशुद्धि रहते परीक्षा अर्थात् सत्यासत्य के निर्णय के लिये लोहे का गरम गोला आदि उठवाना शुभ होता है॥४३॥

सब शुभ कार्यों में लग्नशुद्धि

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४४ ॥

अन्वयः—व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते, त्रिषड्दशायस्थे चन्द्रे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४४ ॥

भाषा--लग्न से बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो, अर्थात् किसी शुभाशुभ ग्रह से युक्त न हो, कर्त्ता के जन्मराशि वा लन्मलग्न से तीसरी छठीं, ग्यारहवीं, दसवीं, इनमें से कोई लग्न हो और वह शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो। चन्द्रमा लग्न से तीसरे, छठें, दसवें या ग्यारहवें इनमें से किसी स्थान में हो तब सभी शुभकर्मों का आरम्भ शुभदायक होता है॥४४॥

किन नक्षत्रों में ज्वर होने से मृत्यु होती है अथवा कितने
दिन तक ज्वर रहता है ?

स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे मृति-
र्ज्वरेऽन्त्यमैत्रे स्थिरता भवेद्रुजः ।

यास्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा
घस्रा हि पक्षो द्व्यधिपार्कवासवे ॥ ४५ ॥
मूलाग्निदास्रे नव पित्र्यभे नखा
बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः ।
मासोऽब्जवैश्वेऽथ यमाहिमूलभे
मिश्रेशपित्र्ये फणिदंशने मृतिः ॥ ४६ ॥

अन्वयः—स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे ज्वरे मृतिः (स्यात्) । अन्त्यमैत्रे, रुजः स्थिरता भवेत् , याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा घस्राः, द्व्यधिपार्कवासवे पक्षः, हि मूलाग्निदास्रे नव, पित्र्यभे नखाः, बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः, अब्जवैश्वे मासः । अथ मिश्रेशपित्र्ये, फणिदंशने मृतिः (स्यात्) ॥ ४५–५६ ॥

भाषा––स्वाती, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा और आश्लेषा में जिसे ज्वर हो उसकी मृत्यु होती है । रेवती और अनुराधा में हो तो रोग की स्थिरता होती है अर्थात रोग बहुत दिन तक रहता है । भरणी, श्रवण, शतभिषा और चित्रा में हो तो ग्यारह दिन–विशाखा, हस्त और धनिष्ठा में हो तो पन्द्रह दिन–मूल, कृत्तिका और अश्विनी में हो तो नौ दिन–मघा में हो तो सात दिन; मृगशिरा और उत्तराषाढ़ में हो तो एक महीना ज्वर रहता है । यदि भरणी, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा वा मघा नक्षत्र में किसी को सर्प काटे तो उसकी मृत्यु होती है ॥४५–४६॥

रोगी के शीघ्र मरने का योग ।

रौद्राहिशाक्रांबुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु पापवारे ।
रिक्ताहरिस्कंददिने च रोगे शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥४७॥

अन्वयः—रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु (एषु नक्षत्रेषु) पापवारे (पापग्रहवासरे) रिक्ताहरिस्कन्ददिने (चतुर्थीनवमीचतुर्दशीद्वादशीषष्ठी एतासु तिथिषु) रोगे 'जाते सति' रोगिजनस्य शीघ्रं मृत्युः भवेत् ॥४७॥

भाषा—आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिषा, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा वा कृत्तिका नक्षत्र, रवि, मंगल और शनिवार और

चौथ, नवमी, चतुर्दशी, एकादशी तथा षष्ठी तिथि में रोगग्रस्त होनेवाले पुरुष की अवश्य मृत्यु होती है इसमें संशय नहीं है ॥४७॥

प्रेतदाह का मुहूर्त ।

क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे प्रेतक्रिया स्याज्झषकुंभगे विधौ ।
प्रेतस्य दाहं यमदिग्गमं त्यजेच्छय्यावितानं गृहगोपनादि च ॥४८॥

अन्वयः—क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे (एषु नक्षत्रेषु) प्रेतक्रिया (शुभा) विधौ (चन्द्रे) झषकुम्भगे (मीनकुम्भराशिस्थे) प्रेतस्य दाहं च (पुनः) यमदिग्गमं (दक्षिणदिग्गमनं) त्यजेत् । 'तथा' शय्यावितानम् (खट्वाया वयनम्) 'त्यजेत्' गृहगोपनादि (तृणादिना गृहाच्छादनम्) त्यजेत् ॥४८॥

भाषाः—अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् , आश्लेषा, मूल, ज्येष्ठा, श्रवण और आर्द्रा नक्षत्र में मरे मनुष्य–जिसकी क्रिया न की गई हो–उसकी क्रिया इन्हीं नक्षत्रों में करे। कुम्भ और मीन के चन्द्रमा में (पंचक में) प्रेत की दाह, दक्षिण दिशा की यात्रा, चारपाई का बनाना, छत पटवाना, छप्पर छवाना और जलाने आदि की लकड़ियों को एकत्रित करना अच्छा नहीं है ॥४८॥

काष्ठसंग्रह का मुहूर्त ।

सूर्यक्षाद्रसभैरधः स्थलगतैः पाको रसैः संयुतः
शीर्षे युग्ममितैः शवस्य दहनं मध्ये युगैः सार्पभिः ।
प्रागाशादिषु वेदभैः स्वसुहृदां स्यात्संगमो रोगभीः
क्वाथादेः करणं सुखं च गदितं काष्ठादिसंस्थापने ॥४९॥

अन्वयः—सूर्यर्क्षाद्रसभैः (सूर्याधिष्ठितनक्षत्रात् रसभैः षण्नक्षत्रैः) अधः स्थलगतैः 'इन्धनैः' पाकः (पक्वान्नम्) रसैः संयुक्तः (सरसः) स्यात् । युग्ममितैः (नक्षत्रद्वये) शीर्षे स्थापितैः 'इन्धनैः' शवस्य दहनम् 'स्यात्'। मध्ये युगैः (चतुर्भिर्नक्षत्रैः) सर्पभीः 'स्यात्' । प्रागादिषु (पूर्वपश्चिमोत्तरदिक्षु) वेदभैः (चतुर्भिर्नक्षत्रैः स्थाप्यैः) पूर्वं स्वसुहृदां (मित्राणाम्) संगमः 'दक्षिणे' रोगभीः 'पश्चिमे' क्वाथादेः करणम् , 'उत्तरे चतुर्षु नक्षत्रेषु' काष्ठादिसंस्थापने सुखं (मंगलम्) गदितम् 'पूर्वाचार्यैरिति' शेषः ॥४९॥

भाषा—सूर्यके नक्षत्र से दिननक्षत्र तक गिनकर सूर्य नक्षत्र से छः नक्षत्र नीचे लिखे, इसमें लकड़ी रखनेसे रस युक्त पाक होता है । पुनः दो नक्षत्रों को शिर में स्थापन करे, इसमें मुरदे का दाह होता है । चार नक्षत्रों का मध्य में स्थापन करे, इसमें सर्प भय होता है । चारों दिशा में चार चार नक्षत्रों की स्थापना करे, इसमें क्रम से मित्रों से मिलन, रोग, भय और क्वाथ वने और सुख भी प्राप्त होता है । इस चक्र के पूर्वादि चारों दिशाओं के क्रमानुसार उक्त फलों को जानना चाहिये ॥४९॥

त्रिपुष्कर योग ।

भद्रातिथी रविजभूतनयार्कवारे द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे ।
त्रैपुष्करो भवति मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतक्षचांद्रे ॥५०॥

अन्वयः—भद्रातिथिः (भद्रासंज्ञकतिथिः द्वितीया सप्तमी द्वादशी) रविजभूतनयार्कवारे (शनिभौमरविवासरे) द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे (विशाखा-उत्तराफाल्गुनी-पूर्वाभाद्रपदा-पुनर्वसु-कृत्तिका-उत्तराषाढासु) त्रैपुष्करः (त्रिपुष्करसंज्ञकः योगः) भवति । 'स त्रिपुष्करः' मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदः (त्रिपुष्करे कस्यचिन्मृत्यौ सत्यां तद्गृहे जनत्रयस्य मृत्युर्भवति, कस्यचिद्वस्तुनो विनाशे वस्तुत्रयविनाशो भवति, कस्मिंश्चिद्वस्तुनि लब्धे वस्तुत्रयस्य लाभोऽपि भवतीत्यर्थः) 'अथ' वसुतक्षचान्द्रे (धनिष्ठाचित्रामृगेषु) 'द्विपुष्करःसः' द्विगुणकृत् (तस्मिन्) मृत्युविनाशादेर्द्वैगुण्यं भवति) ॥ ५० ॥

भाष—द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी तिथि, शनि, मंगल रविवार और विशाखा, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु और कृत्तिका नक्षत्रों में त्रिपुष्कर योग होता है । इसमें मृत्यु और वृद्धि हो तो तिगुनी होती है । धनिष्ठा चित्रा और मृगशिरा नक्षत्र हो तो द्विपुष्कर योग होता है । इसमें मृत्यु वा वृद्धि हो तो द्विगुण जानना चाहिए ॥५०॥

शवप्रतिकृति (पुतला दाह) का मुहूर्त्त ।

शुक्रारार्किषु दर्शभूतमदने नन्दासुतीक्ष्णोग्रभे
पौष्णे वारुणभे त्रिपुष्करदिने न्यूनाधिमासेऽयने ।
याम्येऽब्दात्परतश्च पातपरिघे देवेज्यशुक्रास्तगे
भद्रावैधृतयोः शवप्रतिकृतेर्दाहो न पक्षे सिते ॥५१॥

अन्वयः—शुक्रारार्किषु (शुक्रमंगलशनिवासरेषु) दर्शभूतमदने (अमावास्याचतुर्दशीत्रयोदशीषु) नन्दासु (प्रतिपत्षष्ठ्येकादशीषु) तीक्ष्णोग्रभे (मूलार्द्राज्येष्ठाश्लेषापूर्वात्रयमघाभरणीषु) पौष्णे (रेवत्यां) वारुणभे (शतभिषायां) त्रिपुष्करदिने, न्यूनाधिमासे (क्षयमासेऽधिकमासे च) याम्येऽयने (दक्षिणायने) अब्दात्परतः 'दाहःकार्यः'। पातपरिघे (व्यतीपातपरिघयोगे) देवेज्यशुक्रास्तगे (शुक्रगुरावस्तंगते) सिते (शुक्ले) पक्षे शवप्रतिकृतेः (पर्णशरादिना कल्पितदेहस्य) दाहः 'न कार्यः' ॥ ५१ ॥

भाषा—शुक्र, मंगल और शनिवार में, चतुर्दशी, अमावास्या, त्रयोदशी, प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी तिथियों में, मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, रेवती और शतभिषा नक्षत्र में, त्रिपुष्कर योग में, न्यूनाधिक मास में, दक्षिणायन में, एक वर्ष के वाद व्यतीपात तथा परिघ योग में वृहस्पति और शुक्र के अस्त में, भद्रा, वैधृतियोग और शुक्लपक्ष में पुतलादाह नहीं करना चाहिये ॥ ५१ ॥

साधारण वर्ज्य योग ।

जन्मप्रत्यरितारयोर्मृतिसुखांत्येऽब्जे च कर्त्तुर्न सन्
मध्यो मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्व्यंघ्रिभे ज्ञेऽपि च ।
श्रेष्ठोऽर्केज्यविधोर्दिने श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये तथा
त्वाशौचात् परतो विचार्यमखिलं मध्ये यथासंभवम् ॥५२॥

अन्वयः—कर्तुः (शवस्य दाहादिकर्मकर्तुः) जन्मप्रत्यरितारयोः (जन्मतारा जन्मनक्षत्रं प्रत्यरितारा पञ्चमचतुर्दशत्रयोविंशन्नक्षत्रं तयोः) अब्जे (चन्द्रमसि) मृतिसुखान्त्ये (अष्टमचतुर्थद्वादशे सति) दाहो न सन् (अप्रशस्त इत्यर्थः) मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्व्यङ्घ्रिभे ज्ञेऽपि च 'दाहः' मध्यः (मध्यमः)। अर्केज्यविधोर्दिने (रविगुरुचन्द्रवासरे) श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये 'शवप्रतिकृतेर्दाहः श्रेष्ठः कथितः'। 'एतत्सर्वं' आशौचात्परतः (त्रयोदशदिनयापनानन्तरम्) विचार्यम्। मध्ये तु यथासंभवम् अखिलम् विचार्यम् ॥ ५२ ॥

भाषा—जन्मतारा, प्रत्यरितारा तथा अष्टम, चतुर्थ और द्वादश चन्द्रमा में काम करना अशुभ है। अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, रोहिणी तथा विशाखा के प्रथम के दो चरण और बुधवार

को मध्यम और रवि, गुरु तथा चन्द्रवार श्रवण, हस्त, स्वाती, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में उत्तम है। यह तेरह दिन के बाद का विचार है। तेरह दिन के भीतर अपनी इच्छानुसार करे ॥ ५२ ॥

अभुक्तमूलं घटिकाचतुष्टयं ज्येष्ठांत्यमूलादिभवं हि नारदः ।
वशिष्ठ एकद्विघटीमितं जगौ बृहस्पतिस्त्वेकघटीप्रमाणकम् ॥५३॥

अन्वयः—नारदः ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं (ज्येष्ठारेवतीमूलनक्षत्रस्य) घटिकाचतुष्टयं अभुक्तमूलं जगौ । वसिष्ठः 'ज्येष्ठारेवतीमूलनक्षत्रस्य' एकद्विघटीमितं 'अभुक्तमूलं' जगौ । बृहस्पतिः (सुरगुरुः) तु एकघटीप्रमाणकम् (केवलैकघटिकामात्रम्) 'अभुक्तमूलम्' जगौ ॥ ५३ ॥

भाषा—ज्येष्ठा के अन्त और मूल के आदि की चार घड़ियों को नारद जी ने अभुक्तमूल कहा है, पर वशिष्ठ जी एक-दो घड़ी तथा बृहस्पति जी ने एक ही घड़ी को अभुक्तमूल कहा है ॥ ५३ ॥

मूल नक्षत्र में बालक के जन्म का विचार ।

अथोचुरन्ये प्रथमाष्टघट्यो मूलस्य संक्रान्तिमपंचनाड्यः ।
जातं शिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पितास्याष्टसमा न पश्येत् ॥५४॥

अन्वयः—अथ अन्ये (आचार्याः) मूलस्य प्रथमाष्ट घट्यः (आदिमअष्टघटिकापर्यन्तमित्यर्थः) शक्रान्तिमपञ्चनाड्यः (ज्येष्ठाया अन्तिमाः पञ्च नाडिकाः) 'अभुक्तमूलं' ऊचुः (कथयामासुः) । तत्र जातं शिशुं (बालकं पुत्रीं वा) त्यजेत् (सर्वथा परित्यजेत् तदशक्तौ) पिता अस्य (बालकस्य) मुखं अष्ट समाः (अष्टौ वर्षाणि) न पश्येत् ॥ ५४ ॥

भाषा—अन्यान्य ऋषि मूल के प्रथम की आठ घड़ी और ज्येष्ठा के अन्त की पांच घड़ी को अभुक्तमूल मानते हैं । इसमें उत्पन्न बालकों को त्याग देना या आठ वर्ष पर्य्यन्त पिता को बालक का मुख न देखना चाहिये ॥ ५४ ॥

मूल और आश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न बालक का विचार

आद्ये पिता नाशमुपैति मूले पादे द्वितीये जननी तृतीये ।
धनं चतुर्थोऽस्य शुभोऽथ शांत्या सर्वत्र सत्स्यादहिभे विलोमम् ॥५५॥

अन्वयः—आद्ये पादे मूले (बालकस्य) पिता नाशं उपैति (संयाति) द्वितीये पादे जननी (माता) नाशं उपैति । 'मूलस्य' तृतीये चरणे धनम् 'नाशमुपैति' अथ अस्य (मूलस्य) चतुर्थः 'चरणः' अथवा सर्वत्र (चरणचतुष्टयेऽपि) शान्त्या (स्वानुष्ठितया) सत् (शुभमनिष्टफलनाशकं स्यात्)। 'किन्तु' अहिभे (आश्लेपायां) विलोमम् । (विपरीतम्) ज्ञेयम् । (मूलस्य प्रथमे चरणे बालकस्य पितुर्नाशः कथितः स आश्लेषाचतुर्थपादे समुत्पन्नस्य भवति । द्वितीयपादे मातृनाशः उक्तः स आश्लेषातृतीयपादे ज्ञेयः एवं सर्वत्र) ॥५५॥

भाषा—मूलके प्रथम चरण का जन्मा बालक अपने पिता को, दूसरे चरण का माता को, तीसरे चरण का धन को नष्ट करता है पर चौथे चरण में होने से नक्षत्र शांति करने पर शुभदायक है और आश्लेषा के चौथे चरण का जन्मा बालक पिता को, तीसरे चरण का माता को, दूसरे चरण का धन को नष्ट करता है और पहिले चरण में जन्मा हो तो शांति करने से शुभदायक है ॥५५॥

मूल नक्षत्र के वास का विचार ।

स्वर्गे शुचिप्रोष्ठपदेषुमाघे भूमौ नभःकार्तिकचैत्रपौषे ।
मूलं ह्यधस्तात्तु तपस्यमार्गे वैशाखशुक्रेष्वशुभं च तत्र ॥५६॥

अन्वयः—शुचि प्रोष्ठपदेषुमाघे (आषाढ़भाद्रपदाश्विनमाघमासेषु) मूलं स्वर्गे 'तिष्ठति'। नभःकार्तिकचैत्रपौषे (श्रावणकार्तिकचैत्रपौषेषु) भूमौ 'तिष्ठति'। तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेषु (तपस्यः फाल्गुनः शुक्रः ज्येष्ठमासः) अधः (पाताले) मूलं 'तिष्ठति' (तत्फलं च यदा मूलनक्षत्रं यस्मिन्मासे यत्र भवति) तत्र (तत्रैव मृत्युस्वर्गपातालेषु प्रोक्तं शुभाशुभफलं ददाति तेन द्रव्याद्यभावे स्वर्गपातालस्थे मूले दोषाभावाच्छान्तिरनावश्यकीत्यर्थः) ॥५६॥

भाषा—आषाढ़, भादों, आश्विन और माघ में मूल नक्षत्रका वास स्वर्ग में, श्रावण. कातिक, चैत्र और पौष में पृथ्वी पर, फाल्गुन, अगहन, वैशाख और ज्येष्ठ में पाताल में रहता है। जहाँ मूलका वास हो, फलाफल भी वहीं होगा ॥५६॥

गंडान्त आदि में उत्पन्न बालक का परिहार ।

गंडांतेंद्रभशूलपातपरिघव्याघातगंडावमे

संक्रांतिव्यतिपातवैधृतिसिनीवालीकुहूदर्शके ।
वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघंटे दग्धयोगे मृतौ
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शांतितः ॥५७॥

अन्वयः—गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे (गण्डान्तः तिथिनक्षत्रलग्नानां सन्धिः ज्येष्ठाशूलपातमहापाताः, परिघव्याघातगण्डयोगाः, अवमस्तिथयः) संक्रान्ति (सूर्यसंक्रमणकालः) व्यतिपातवैधृतिसिनीवाली (दृष्टेन्दुरमावास्या) कुहू (नष्टेन्दुरमावास्या) दर्शके । वज्रे (वज्रयोगे) कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे मृतौ (मृत्युयोगे) विष्टौ (भद्रायां) सोदरभे (भ्रातुर्भगिन्या वा जन्मनक्षत्रे) पितृभे (पितुर्जन्मनक्षत्रे) 'एषु सुतस्य सुताया वा' जनिः (जन्म) न शस्ता (अनिष्टकारिणीत्यर्थः) । 'सा एव जनिः' शान्तितः (पूर्वाचार्यकथित-शान्त्या) शुभा (कल्याणकारिणी) भवति ॥ ५७ ॥

भाषा—गंडांत (तिथि, नक्षत्र और लग्नों की सन्धि) में, ज्येष्ठा नक्षत्र में, शूल योग में, महापात, परिघ, व्याघात और गंडयोग में, तिथियों के क्षय में, सूर्यसंक्रान्ति के पुण्यकाल में, व्यतीपात और वैधृतियोग में सिनी वाली (चंद्रमा देखने वाली अमावस्या) में, कुहू [नष्ट चन्द्रमा वाली अमावस्या] में, दर्श (दर्शन रहित चन्द्रमा वाली अमावास्या) में, वज्र योग में, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी में, यमघंट दग्ध और मृत्युयोग में, भद्रा में और सहोदर भाई वा माता-पिता के नक्षत्र में पुत्र वा पुत्री का जन्म हो तो अशुभ है, पर शान्ति से ये भी शुभप्रद होते हैं ॥ ५७ ॥

नक्षत्रों की तारासंख्या ।

त्रित्र्यंगपंचाग्निकुवेदवह्नयः शरेषुनेत्राश्विशरेंदुभूकृताः ।
वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयोऽब्धयः शतं द्विद्विरदाभतारकाः ॥५८॥

अन्वयः—त्रित्र्यङ्गपञ्चाग्निकुवेदवह्नयः (अश्विन्याः तारात्रयम् भरण्या अपि तारात्रयम् कृत्तिकायाः षट् रोहिण्याः पञ्च मृगशिरायाः तारात्रयम् आर्द्राया एकैव पुनर्वसोः चतस्रः पुष्यस्य तारात्रयम् एवं क्रमशः सर्वेषां ज्ञेयम्) शरेषुनेत्राश्विशरेन्दुभूकृताः वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयः अब्धयः शतं द्विद्विरदा एते भतारका (नक्षत्रताराः) कथिताः ॥ ५८ ॥

भाषा--अश्विनी ३, भरणी, ३, कृत्तिका, ६, रोहिणी ५, मृगशिरा ३, आर्द्रा १, पुनर्वसु ४, पुष्य ३, आश्लेपा ५, मघा ५ पूर्वाफाल्गुनी २, उत्तराफाल्गुनी २, हस्त ४, चित्रा १, स्वाती १, विशाखा ४, ज्येष्ठा ३, मूल ११, पूर्वाषाढ़ २, उत्तराषाढ़ ६, अभिजित ३, श्रवण ३, धनिष्ठा ४, शतभिषा १०० पूर्वाभाद्रपद, २ उत्तराभाद्रपद २, रेवती ३२ यह सब नक्षत्र उपरोक्त संख्या युक्त ताराओं से उदय होते हैं ॥ ५८ ॥

नक्षत्रों को आकृति।

अश्वादिरूपं तुरगास्ययोनि क्षुरोनएणास्यमणिर्गृहं च।
पृषत्कचक्रे भवनं च मंचः शय्याकरोमौक्तिकविद्रुमं च ॥५९॥
तोरणं वलिनिभं च कुंडलं सिंहपुच्छगजदंतमञ्चकाः।
त्र्यस्त्रि च त्रिचरणाभमर्दलो वृत्तभं च यमलाभमर्दलाः ॥६०॥

अन्वयः—तुरगास्ययोनिः (अश्विन्या आकृतिः) अश्वमुखसदृशम् भरण्या (योनिसदृशम्) क्षुरः (कृत्तिका नापितक्षुरसदृशी) अनः (रोहिणी शकटसदृशी) एणास्यम् (मृगशिराया मृगसदृशमाननम् एवं सर्वेषामाकृतिर्ज्ञेया) मणिः गृहम् च (पुनः) पृषत्कचक्रभवनम् (पृषत्को वाणः तत्सदृशम्) मञ्चः शय्या करः मौक्तिकविद्रुमं तोरणम् बलिनिभं (ओदनपुञ्जाकारम्) कुण्डलम् सिंहपुच्छगजदन्तमञ्चकाः त्र्यस्त्रि (अभिजित्त्रिकोणारम्) त्रिचरणाभमर्दलो (धनिष्ठाया मर्दलस्य सदृशम् मृदङ्गाकारम्) वृत्तभं च यमलाभमर्दलाः 'एवं' अश्व्यादिरूपं कथितम्' ॥ ५९ ॥ ६० ॥

भाषा--अश्विनी का मुख घोड़े के मुख के समान, भरणी का योनि के समान, कृत्तिका का धुरा के समान, रोहिणी का गाड़ी के समान, मृगशिरा का हिरन के समान, आर्द्रा का मणि के समान, पुनर्वसु का घर के समान, पुष्य का बाण के समान, आश्लेषा का चक्र के समान, मघा का घर के समान, पूर्वाफाल्गुनी का मचान के समान, उत्तराफाल्गुनी का खटिया के समान, हस्त का हाथ के समान, चित्रा का मोती के समान, स्वाती का मूंगा के समान, विशाखा का तोरण के समान, अनुराधा का वलि (भात का ढेर) के समान, ज्येष्ठा का कुंडल के समान, मूल का सिंह के पूंछ के समान, पूर्वाषाढ़ का हाथी दांत के समान, उत्तराषाढ़

का मंच के समान, अभिजित् का त्रिकोण के समान, श्रवण का तीन चरणों के समान, धनिष्ठा का मर्दल वाजा के समान, शतशिषा का गोल, पूर्वाभाद्रपद्रका मंच के समान, उत्तराभाद्रपद का जोड़ा के समान और रेवती का मर्दल वाजा के समान उदय होता है ॥ ५० ॥ ६० ॥

बावली तथा कूपप्रतिष्ठा का मुहूर्त्त ।

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा ·सौम्यायने जीवशशांकशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात् पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षणे वा ॥६१॥
रिक्तारवर्जे दिवसेऽतिशस्ता शशांकपापैस्त्रिभवांगसंस्थैः ।
व्यंत्याष्टगैः सत्खचरैर्मृगेंद्रे सूर्योघटेकोयुवतौ च विष्णुः ॥६२॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः क्षुद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्ये ग्रहा विघ्नपयक्षसर्पभूतादयोऽन्त्ये श्रवणे जिनश्च ॥६३॥

अन्वयः—जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा (वापीउपवनदेवादीनां स्थापनम्) सौम्यायने (उत्तरायणे सूर्ये) जीवशशांकशुक्रे (गुरुचन्द्रशुक्रे) दृश्ये (उदिते सति) मृदुक्षिप्रचरध्रुवे 'नक्षत्रे' सिते (शुक्ले पक्षे) 'तथा' स्वर्क्षतिथिक्षणे वा (शुभनक्षत्रशुभतिथिशुभक्षणे) रिक्तारवर्ज्ये (रिक्तातिथिं भौमं च विहाय) दिवसे अतिशस्ता स्यात् । शशाङ्कपापैः (चन्द्रसूर्यभौमशनिराहुकेतुभिः) त्रिभवांगसंस्थैः (तृतीयषष्ठैकादशस्थानस्थितैः) सत्खचरैः (शुक्रबुधगुरुभिः) व्यन्त्याष्टगैः (द्वादशाष्टमातिरिक्तस्थानस्थैः) 'जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा अतिशस्ता स्यात्' । सूर्यः मृगेन्द्रे (सिंहे) कः (ब्रह्मा) घटे (कुम्भे) विष्णुः युवतौ (कन्यायां) शिवः नृयुग्मे (मिथुने) देव्यः (दुर्गादयो) द्वितनौ (द्विस्वभावराशिषु मिथुन-कन्याधनुमीनलग्नेषु) क्षुद्राः देव्यः (चतुःषष्टियोगिनीप्रभृतयः) चरे (चरलग्ने मेषकर्कतुलामकरेषु) सर्वे इमे (उक्तानुक्ताश्च) स्थिरर्क्षे (वृषसिंहवृश्चिकघटेषु) स्थाप्याः । ग्रहाः (चन्द्रादयोऽष्टौ ग्रहाः) पुष्ये 'स्थाप्याः' विघ्नपयक्षसर्पभूतादयः अन्त्ये (रेवत्याम्) 'स्थाप्याः' जिनः (बुधः) श्रवणे स्थाप्यः ॥६१॥६२॥६३॥

भाषा—उत्तरायण सूर्य्य, वृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र के उदय में अथवा मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, शतभिषा, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्रों में शुक्लपक्ष में अथवा जिस देवता की प्रतिष्ठा होती हो, उसी के नक्षत्र में उस देवता की प्रतिष्ठा शुभ है ॥

भाषा—रिक्ता तिथियों और मंगल वार को छोड़ अन्य तिथियों और वारों में प्रतिष्ठाकार्य्य अत्यन्त शुभदायक है। यदि चन्द्रमा और क्रूरग्रह बारहवें और आठवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में हों तो भी प्रतिष्ठा कार्य अतीव शुभप्रद है। सिंह लग्न में सूर्य्य, कुम्भ में ब्रह्मा, कन्या में विष्णु, मिथुन में शिव, द्विस्वभाव अर्थात् मिथुन कन्या, लग्न तथा पुष्य नक्षत्र और स्थिर लग्नों में गणेशादि देवता का और श्रवण में बुद्धदेव का स्थापन करना उत्तम होता है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

❀ इति द्वितीयं नक्षत्रप्रकरणं समाप्तम् ❀

संक्रान्तिप्रकरणम् ।

संक्रान्ति की संज्ञायें ।

घोरार्कसंक्रमणमुग्ररवौ हि शूद्रान्
ध्वांक्षी विशो लघुविधौ च चरर्क्षभौमे ।
चौरान्महोदरयुतान्नृपतीन्ज्ञमैत्रे
मंदाकिनीस्थिरगुरौ सुखयेच्च मंदान् ॥ १ ॥
विप्रांश्च मिश्रभभृगौ तु पशूंश्च मिश्रा
तीक्ष्णार्कजेंत्यजसुखा खलु राक्षसी च ॥
त्र्यंशे दिनस्य नृपतीन्प्रथमे निहन्ति
मध्ये द्विजानपि विशोऽपरके च शूद्रान् ॥ २ ॥

अन्वयः—उग्ररवौ (पूर्वकथिते उग्रसंज्ञके नक्षत्रे रविवासरे च) यदा अर्कसंक्रमणम् (संक्रान्तिः) 'भवति तदा सा' घोरा (घोरानाम्नी संक्रान्तिः) सा, हि (निश्चयेन) शूद्रान् (अन्त्यजवर्णान्) सुखयेत् (सुखमुत्पादयेत्)। लघुविधौ (लघुसंज्ञके नक्षत्रे विधौ चन्द्रवासरे च) अर्कसंक्रमणं 'भवेत्' 'तदा सा' ध्वाङ्क्षी नाम्नी संक्रान्तिः विशः (वैश्यान्) सुखयेत्। चरर्क्षभौमे (चरनक्षत्रे मंगलवारे च) 'यदा' अर्कसंक्रमणं' 'तदा सा' महोदरयुता (नाम्नी) चौरान्

सुखयेत् । ज्ञमैत्रे (बुधे मैत्रसंज्ञके नक्षत्रे च) 'यदा' अर्कसंक्रमणं 'तदा सा' मन्दाकिनी (संक्रान्तिः) नृपतीन् (राज्ञः) सुखयेत् । स्थिरगुरौ (स्थिरसंज्ञकनक्षत्रे बृहस्पतिवासरे च) मन्दा (मन्दानाम्नी संक्रान्तिः) 'सा' विप्रान् सुखयेत् । मिश्रभभृगौ (मिश्रनक्षत्रे शुक्रवारे च) मिश्रा (मिश्राख्या संक्रान्तिः) 'सा' पशून् सुखयेत् । तीक्ष्णार्कजे (तीक्ष्णे नक्षत्रे शनिवासरे च) खलु (निश्चयेन) अन्त्यजसुखा (चाण्डालसुखदात्री) राक्षसी (राक्षसी नाम्नी संक्रान्तिः) 'दिनमानस्य त्रिधा भागे कृते त्र्यंशो भवति तत्र' दिनस्य प्रथमे अंशे (यदा रविसंक्रमणं स्यात् तदा सा) नृपतीन् निहन्ति । मध्ये (द्वितीये अंशे) द्विजान् निहन्ति । अपरके (तृतीये अंशे) विशः (वैश्यान्) निहन्ति ॥ १ ॥ २ ॥

भाषा—उग्र (तीनों पूर्वा, भरणी और मघा) नक्षत्र तथा रविवार को यदि संक्रान्ति हो तो उसकी "घोरा" संज्ञा है, जो शूद्रों को सुखदायक है । लघु (हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित्) नक्षत्र तथा सोमवार को संक्रान्ति हो तो 'ध्वांक्षी' संज्ञा है यह बनियों को सुखदायक है । चर (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा) नक्षत्र तथा मंगलवार को संक्रान्ति हो तो उसकी 'महोदर' संज्ञा है जो चोरों को सुखदायक है । मैत्र (मृगशिरा, रेवती, चित्रा और अनुराधा) नक्षत्र तथा बुधवार को संक्रान्ति हो तो उसकी "मन्दाकिनी" संज्ञा है, जो राजाओं को सुखदायक है । स्थिर (तीनों उत्तरा और रोहिणी) नक्षत्र तथा बृहस्पतिवार को संक्रान्ति हो तो उसकी "मन्दा" संज्ञा है, जो ब्राह्मणों को सुखदायक है । मिश्र (विशाखा और कृत्तिका) नक्षत्र तथा शुक्रवार को संक्रान्ति हो तो उसकी "मिश्रा" संज्ञा है। इससे पशुओं को सुख होता है । तीक्ष्ण (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा नक्षत्र तथा शनिवार को संक्रान्ति हो तो उसकी " ध्वांक्षी " संज्ञा होती है, यह चाण्डालों को सुखदायक है । दिन के प्रथम भाग की संक्रान्ति राजाओं को, मध्य भाग की ब्राह्मणों को, तीसरे पहर की वैश्यों को और सूर्य्यास्त के समय की संक्रान्ति शूद्रों को नष्ट करती है ॥ १ ॥ २ ॥

अस्ते निशाप्रहरकेषु पिशाचकादी—
न्नक्तंचरानपि नटान्पशुपालकांश्च ।

सूर्योदये सकललिंगिजनं च सौम्यं-
याम्यायनं मकरकर्कटयोर्निरुक्तम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—अस्ते (सूर्येऽस्तंगते) निशाप्रहरकेषु 'प्रथमे प्रहरे' पिशाचकादीन् निहन्ति । (द्वितीये प्रहरे) नक्तंचरान् (राक्षसान्) । 'तृतीये प्रहरे' नटान् (नर्तकान्) 'चतुर्थे' पशुपालकान् (आभीरान्) सूर्योदये 'संक्रान्तिः' सकललिङ्गिजनान् (पाखण्डिनः) हन्ति । मकरकर्कटयोः 'क्रमशः' सौम्यं (उत्तरायणम्) याम्यायनम् (दक्षिणायनम्) निरुक्तम् । 'मकरसंक्रान्तितः उत्तरायणम् कर्कतो दक्षिणायनमिति निष्कर्षः' ॥ ३ ॥

भाषा—रात के पहिले पहर की संक्रान्ति पिशाचों को, दूसरे पहर की नाचने वालों को, चौथे पहर की पशुपालकों को और सूर्योदय की संक्रान्ति पाखंडियों को नष्ट करती है। मकर की संक्रान्ति से 'उत्तरायण' और कर्क की संक्रान्ति से 'दक्षिणायन' कहलाता है ॥ ३ ॥

अन्य संक्रांतियों का फल ।

षडशीत्याननं चापनृयुक्कन्याझषे भवेत् ।
तुलाजौ विषुवं विष्णुपदं सिंहालिगोघटे ॥ ४ ॥

अन्वयः—चापनृयुक्कन्याझखे (धनुर्मिथुनकन्यामीनेषु) 'अर्कसंक्रमणं' षडशीत्याननम् (षडशीतिमुखसंज्ञं) भवेत् । तुलाजौ (तुलामेषयोः संक्रमणम् विषुवं (विषुवसंज्ञकम्) सिंहालिगोघटे (सिंहवृश्चिकवृषकुम्भे रविसंक्रमणं चेत्तदा तत्) विष्णुपदं (विष्णुपदसंज्ञकं) भवेत् ॥ ४ ॥

भाषा--धनु, मिथुन, कन्या और मीन की संक्रांति की षडशीत्यानन, और तुला, मेष, वृष, सिंह वृश्चिक और कुम्भकी संक्रांतिको "विष्णुपद" कहते हैं ॥ ४ ॥

संक्रांति का पुण्यकालनिर्णय ।

संक्रांतिकालादुभयत्र नाडिकाः पुण्या मताः षोडश षोडशोष्णगोः ।
निशीथतोऽर्वागपरत्र संक्रमे पूर्वापराहांतिमपूर्वभागयोः ॥ ५ ॥

अन्वयः—उष्णगोः (सूर्यस्य) संक्रान्तिकालात् (संक्रान्तिकालमारभ्य) उभयत्र (पूर्वतः परतश्च) षोडश नाडिकाः (षोडश घटिकाः) पुण्या मताः । निशीथतः (अर्धरात्रात्) अर्वाक् (पूर्वं) अपरत्र (पश्चाच्च) संक्रमे संक्रान्ति-

काले सति) पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागयोः (पूर्वापरयोरह्नोः क्रमेण) अन्तिमपूर्व-भागयोः (उभयत्र षोडश घटिकाः पुण्या मता इति पूर्वेणान्वयः) ॥ ५ ॥

भाषा—सूर्य की संक्रांति के समय से सोलह घड़ी पहिले और सोलह घड़ी पीछे पुण्यकाल होता है। यदि आधीरात के पहिले और पीछे संक्रांति हो तो पहिले और पिछले दिन क्रमशः पूर्व और परभाग में पुण्यकाल माना जाता है अर्थात् आधीरात के पहिले संक्रांति हो तो पुण्यकाल पहिले दिन के पिछले भाग में और यदि आधी रात के पीछे संक्रान्ति हो तो पिछले दिन के पूर्व भाग में पुण्य काल माना जायगा ॥५॥

अर्धरात्रि में संक्रांतिका विचार ।

पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्याद्दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात् ।
पूर्वं परस्ताद्यदि याम्यसौम्यायने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥ ६ ॥

अन्वयः—पूर्णे निशीथे (अर्धरात्रे) संक्रान्तिश्चेत् तदा दिनद्वयं (पूर्वदिनं परदिनं) पुण्यं स्यात् । अथ उदयास्तात् (सूर्योदयात् सूर्यास्ताच्च) पूर्वपरस्तात् च यदि याम्यसौम्यायने (कर्कमकरसंक्रान्ती भवतः 'तदा) पूर्वपरे दिने पुण्ये स्याताम् (सूर्योदयात् प्राक् कर्कसंक्रान्तिश्चेत् तदा पूर्वदिन एव पुण्यकालः नोत्तरदिने । यदि सूर्यास्तानन्तरं मकरसंक्रान्तिः स्यात्तदोत्तरदिन एव पुण्यकालः स्यान्नतु पूर्वदिने) ॥ ६ ॥

भाषा—यदि ठीक आधीरात को संक्रांति हो तो दोनों दिन पुण्यकाल होगा। सूर्य्योदय के पहिले और पीछे कर्क तथा मकर संक्रांति हो तो प्रथम और पर दिन पुण्यकाल जानना चाहिये और सूर्य्योदय के प्रथम कर्कसंक्रांति हो तो पहिले दिन तथा सूर्य्यास्त के पश्चात् मकरसंक्रान्ति हो तो अगले दिन पुण्यकाल कहना चाहिये ॥ ६ ॥

उदयास्त का अपवाद ।

संध्या त्रिनाडी प्रमितार्कबिंबादर्धोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र ।
चेद्याम्यसौम्ये अयने क्रमात्स्तः पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥ ७ ॥

अन्वयः—अर्कबिम्बात् (सूर्यमण्डलात्) अर्धोदितास्तात् (अर्धोदितात् अर्धास्ताच्च अध ऊर्ध्वं क्रमात् त्रिनाडीप्रमिता संध्याकालः) 'स्यात्' । अत्र (प्रातः

सन्ध्यायां सायंसंध्यायां च) क्रमात् चेत् याम्यसौम्ये अयने (दक्षिणोत्तरायणे) स्तः तदानीं परपूर्वघस्रौ पुण्यौ (कथितौ आचार्यैरित्यर्थः) ॥ ७ ॥

भाषा--उदय तथा अस्त के पहिले और पीछे की तीन-तीन घड़ियों को सन्ध्याकाल कहा है। प्रातः सन्ध्या से दक्षिणायन सूर्य की प्रवृत्ति हो तो दिनभर पुण्यकाल जानो और सायंसन्ध्या में उत्तरायण की प्रवृत्ति हो तो सूर्यास्त के पहिले दिन भर पुण्यकाल जानना चाहिये ॥७॥

विष्णुपदादि विशेष से त्याज्यात्याज्य घटी।

याम्यायने विष्णुपदे चाद्या मध्यास्तुलाजयोः।
षडशीत्यानने सौम्ये परा नाड्योऽतिपुण्यदाः॥ ८ ॥

अन्वयः—याम्यायने (दक्षिणायने कर्कसंक्रान्तौ वा) विष्णुपदे (वृष-सिंहवृश्चिककुम्भसंक्रान्तिषु) आद्याः (प्रथमाः) 'षोडश नाड्यः' अति-पुण्यदाः (स्नानदानादौ अतिपुण्यदा इत्यर्थः। अग्रिमास्तु न तथेति भावः) तुला-जयोः (तुलामेषयोः) मध्या (उभयतः षोडश नाडिकाः संक्रान्तिकालात् पूर्वं परतश्चाष्टावष्टौ) घटिकाः पुण्यदाः। षडशीत्यानने (मिथुनकन्याधनुर्मीनेषु) सौम्ये (उत्तरायणे) परा अग्रिमाः 'षोडश घटिकाः' अति पुण्यदाः 'स्युः' ॥ ८ ॥

भाषा--कर्क, वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ की संक्रान्ति के समय से पहिले की सोलह घड़ियां, तुला और मेष की संक्रान्ति के मध्य की सोलह घड़ियां और मिथुन, कन्या, धनु, मीन और मकर के संक्रान्ति के आगे की सोलह घड़ियां शुद्ध हैं ॥ ८ ॥

सायनांश संक्रान्तिविचार।

तथायनांशाः खरसाहताश्च स्पस्पष्टार्कगत्या विहृता दिनाद्यैः।
मेषादितः प्राक्चलसंक्रमाः स्युर्दाने जपादौ बहुपुण्यदास्ते ॥ ९ ॥

अन्वयः—तथा (पूर्वोक्तरीत्या) अयनांशाः खरसाहताः (षष्ट्या गुण्याः) स्पष्टार्थकगत्या विहृताः। लब्धैः (अवशिष्टैः) दिनाद्यैः (दिनघटीपलैः) मेषा-दितः प्राक् (मेषादिद्वादशसंक्रान्तिकालात् प्राक्) चलसंक्रमाः ते (चल-संक्रमाः) दाने जपादौ (जपश्राद्धहोमादौ) बहुपुण्यदाः सन्ति ॥ ९ ॥

संक्रांत्युपयोगो समादि ।

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोग्निमघात्रिपूर्वास्रपभं बृहत्स्यात् ।
ध्रुवद्विदैवादितिभं जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम् ॥ १० ॥

अन्वयः—मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्निमघात्रिपूर्वास्रपभं समम् (अस्रपभं मूलम् एतानि मृदुक्षिप्रादि पंचदश नक्षत्राणि समानि ज्ञेयानि) ध्रुवद्विदैवादितिभं बृहत् (बृहन्नामकं) स्यात् । सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम् (आश्लेषादिषण्नक्षत्राणि) जघन्यं (जघन्यनामधेयं) स्यात् ॥ १० ॥

भाषा—मृगशिरा,रेवती,चित्रा और अनुराधा की संज्ञा "मृदु", अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् की 'क्षिप्र', धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, तीनों पूर्वा और मूल की 'सम', तीनों उत्तरा, रोहिणी, विशाखा और पुनर्वसु की 'बृहत्' और आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाती, तथा ज्येष्ठा की 'जघन्य' संज्ञा जानो ॥ १० ॥

उक्त संज्ञाओं का हेतुवर्णन ।

जघन्यभे संक्रमणे मुहूर्ताः शरेन्दवो बाणकृता बृहत्सु ।
खरामसंख्याः समभे महर्घं समर्घसाम्यं विधुदर्शनेऽपि॥ ११॥

अन्वयः—जघन्यभे संक्रमणे (संक्रान्तौ सत्याम्) शरेन्दवः मुहूर्ताः (पंचदश मुहूर्ताः) बृहत्सु (अर्कसंक्रमणे सति) बाणकृताः (पंचचत्वारिंशन्मुहूर्ता ज्ञेयाः) समभे (समनक्षत्रेऽर्कसंक्रमणे सति) खरामसंख्याः (त्रिंशन्मुहूर्ताः) 'तत्र' महर्घसमर्घसाम्यम् (क्रमशः महर्घसमर्घं च भवति) विधुदर्शने (चन्द्रदर्शनेऽपि एवमेव फलं ज्ञेयम्) ॥ ११ ॥

भाषा—'जघन्य' संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति के होने से १५ मुहूर्त्त तक संक्रान्ति जानना। इसमें अन्न का भाव महंगा हो। बृहत्संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो तो ४५ मुहूर्त तक संक्रान्ति जानना, इसमें अन्न का भाव सस्ता हो और 'सम' संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति हो तो ३० मुहूर्त्त तक संक्रान्ति जानना इसमें अन्न का सम भाव रहता है अर्थात् न तो सस्ता और न महंगाहो। चन्द्रदर्शन के भी यही फल हैं ॥ ११ ॥

विश्वाज्ञान ।

अर्कादिवारे संक्रान्तौ कर्कस्याब्दविशोपकाः ।
दिशो नखा गजाः सूर्या धृतोऽष्टादशसायकाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—अर्कादिवारे कर्कस्य संक्रान्तौ 'सत्यां क्रमशः' दिशः (दश) नखाः (विंशतिः) गजाः (अष्टौ) सूर्याः (द्वादश) धृतो अष्टादश सायकाः (पञ्च) विशोपकाः भवन्ति ॥ १२ ॥

भाषा—रवि आदि वारों में कर्क संक्रान्ति होने से वर्ष को विश्वा कहते हैं। जैसे रविवार को कर्क संक्रान्ति हो तो १० विश्वा, सोमवार को २०, मङ्गलवार को ८, बुधवार को १२, बृहस्पति को १८ और शनिवार को ५ विश्वा जानना ॥ १२ ॥

रविकी जिस अवस्था में संक्रान्ति हुई हो उसका फल ।

स्यात्तैतिले नागचतुष्पदे रविः
सुप्तो निविष्टस्तु गरादिपंचके ।
किंस्तुघ्न ऊर्ध्वः शकुनौ सकौलवे-
ऽनिष्टः समः श्रेष्ठ इहार्घवर्षणे ॥ १३ ॥

अन्वयः—तैतिले नागचतुष्पदे (करणे) रविः सुप्तः (सन् संक्रमितः) स्यात् तु (पुनः) गरादिपञ्चके निविष्टः (सन् संक्रमितः स्यात्) किंस्तुघ्ने (तथा) सकौलवे शकुनौ ऊर्ध्वः (सन् संक्रमितः स्यात्) इह अर्घवर्षणे (क्रमात्) नेष्टः, समः, श्रेष्ठश्च (स्यात्) ॥ १३ ॥

भाषा—तैतिल, नाग और चतुष्पद करण में सोते हुए, गर, वणिज, भद्रा, बव और बालव में बैठे हुए; किंस्तुघ्न, शकुनि और कौलव में खड़े हुए सूर्य संक्रान्ति करते हैं। सोते हुए सूर्य अन्नादि की महँगी और अवर्षण-कारक होते हैं। बैठे हुए सूर्य सम अर्थात् इष्टानिष्ट कुछ नहीं करते और खड़े हुए सूर्य श्रेष्ठ अर्थात् अन्नादि की सस्ती और वर्षा करते हैं ॥ १३ ॥

संक्रान्तियों के वाहन, वस्त्र, आयुध, भक्ष्य, लेपन, जाति और पुष्प ।

सिंहव्याघ्रवराहरासभगजा वाहद्विषद्घोटकाः
श्वाजौ गौश्चरणायुधश्च ववतो वाहा रवेः संक्रमे ।

वस्त्रं श्वेतसुपीतहारितकपाण्डुवारक्तकालासितं
चित्रं कम्बलदिग्घनाभमथ शस्त्रं स्याद्भुशुण्डी गदा ॥१४॥
खङ्गो दण्डशरासतोमरमथो कुन्तश्च पाशोऽङ्कुशो-
ऽस्त्रं वाणस्त्वथ भक्ष्यमन्नपरमान्नं भैक्षपक्वान्नकम्।
दुग्धं दध्यपि चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा-
ऽथो लेपो मृगनाभिकुङ्कुममथो पाटीरमृद्रोचनम् ॥ १५ ॥
यावश्चौतुमदो निशाञ्जनमथो कालागुरुश्चन्द्रको
जातिर्दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्रास्ततः।
क्षत्रियवैश्यभशूद्रसंकरभवाः पुष्पं च पुन्नागकं
जातीवाकुलकैतकानि च तथा विल्वार्कदूर्वाम्बुजम् ॥१६॥
स्यान्मल्लिकापाटलिका जपा च संक्रान्तिवस्त्राशनवाहनादेः।
नाशश्च तद्वृत्त्युपजीविनां च स्थितोपविष्टस्वपतां च नाशः॥

अन्वयः—ववतः [ववमारभ्य] रवेः संक्रमे (सति) (क्रमात्) सिंहव्याघ्रवराहरासभगजाः वाहद्विपद्वाटकाः। श्वा अजः गौः चरणायुधः (एते) वाहाः (ज्ञेयाः)। (तथा) श्वेतसुपीतहारितकपाण्डुआरक्तकालासितं चित्रं कम्बलदिग्घनाभ [एतद्वस्त्रं ज्ञेयं]। अथ भुशुण्डी गदा खङ्गः दण्डशरासतोमरं अथो कुन्तः पाशः अंकुशः अस्त्रं बाणः (एतत्) शस्त्रं स्यात्। अथ अन्नपरमान्नं भैक्ष्यपक्वान्नकम् दुग्धं, दधि अपि (तथा) चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा (एतत्) भक्ष्यं (ज्ञेयम्)। अथ मृगनाभिकुङ्कुमं अथो पाटीरमृद्रोचनम् यावः च (पुनः) ओतुमदः निशाञ्जनं अथ कालागुरुः चन्द्रकः (एषः) लेपः, (तथा) दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्राः ततः क्षत्रियवैश्यकशूद्रसंकरभवा [एषा] जातिः (ज्ञेया), च (पुनः) पुन्नागकं जातीवाकुलकेतकानि च (तथा) विल्वार्कदूर्वाम्बुजं मल्लिका पाटलिका च (पुनः) जपा (एतत्) पुष्पं स्यात्। च (पुनः) संक्रांतिवस्त्रासनवाहनादेः तद्वृत्त्युपजीविनां च नाशः (स्यात्) च (तथा) स्थितोपविष्टस्वपतां नाशः (स्यात्) ॥ १४–१७ ॥

भाषा—ववादि सात, चर और शकुनि आदि चार स्थिर मिलकर ग्यारह किरणों में होनेवाली सूर्य संक्रान्तियों के क्रम से सिंहादि वाहन, श्वेतादि वस्त्र, भुशुण्डी आदि आयुध, अन्नादि भक्ष्य, कस्तूरी आदि लेपन, देव-

तादि जाति और पुन्नागादि पुष्प होते हैं। बव करण में होनेवाली संक्रान्ति सिंह पर सवार, श्वेतवस्त्र धारण किये, भुशुण्डी हाथ में लिये, अन्न का भक्षण करती हुई, कस्तूरी का लेप देह में लगाये, देवता जातिवाली, नागकेसर का फूल हाथ में लिये होती है। बालव करण में होने वाली संक्रान्ति व्याघ्र पर सवार, पीले वस्त्र धारण किये, गदा हाथ में लिये, खीर भक्षण करती हुई, कुंकुम का लेप देह में लगाये, भूत जातिवाली, चमेली का फूल हाथ में लिये होती है। कौलव करण में होने वाली संक्रान्ति वराह पर सवार, हरे वस्त्र धारण किये, तलवार हाथ में लिये, भीख मांगने से मिले हुए अन्नादि का भक्षण करती हुई, लाल चन्दन का लेप देह में लगाये, सर्प जाति वाली और मौलसिरी का फूल हाथ में लिये होती है। तैतिल करण में होनेवाली संक्रान्ति गधे पर सवार, थोड़ा पीला वस्त्र धारण किये, दण्ड हाथ में लिये, पुआ आदि पक्वान्न भक्षण करती हुई, मिट्टी का लेप देह में लगाये, पक्षी जातिवाली, केतकी का फूल हाथ में लिये होती है। गर करण में होनेवाली संक्रान्ति हाथी पर सवार, लाल वस्त्र धारण किये, धनुष हाथ में लिये, दूध का भक्षण करती हुई, गोरोचन का लेप देह में लगाये, पशु जातिवाली, बेला का फूल हाथ में लिये होती है। वणिज करण में होनेवाली संक्रान्ति भैंसे पर सवार, श्याम रंग वस्त्र धारण किये, तोमर हाथ में लिये, दही का भक्षण करती हुई, महावर का लेप देह में लगाये, मृग जातिवाली, मदार का फूल हाथ में लिये होती है। विष्टि करण में होनेवाली संक्रान्ति घोड़े पर सवार, काला वस्त्र धारण किये, बरछी हाथ में लिये, चित्रान्न अर्थात् एक में पके हुए चावल, मूंग, मसूर, हलदी का भक्षण करती हुई, बिलार के पसीने का लेप देह में लगाये, ब्राह्मण जातिवाली, दूब हाथ में लिये होती है। शकुनिकरण में होनेवाली संक्रान्ति कुत्ते पर सवार, अनेक रंगवाला वस्त्र धारण किये पाश हाथ में लिये, गुड़ का भक्षण करती हुई, हलदी का लेप देह में लगाये, क्षत्रिय जातिवाली, कमल का फूल हाथ में लिये होती है। चतुष्पद करण में होनेवाली संक्रान्ति मेढ़े पर सवार, कम्बल धारण किये, अंकुश हाथ में लिये, मधु का भक्षण करती हुई, सुरमा का लेप देह में

लगाये, वैश्य जातिवाली, चमेली के फूल हाथ में लिये होती है। नाग करण में होनेवाली संक्रान्ति बैल पर सवार, नंगी, अस्त्र हाथ में लिये, घी का भक्षण करती हुई, अगर का लेप देह में लगाये, शूद्र जातिवाली, पाढर का फूल हाथ में लिये होती है। किंस्तुघ्न करण में होनेवाली संक्रान्ति चरणायुध अर्थात् मुर्गे पर सवार, मेघ के समान वस्त्र धारण किये, बाण हाथ में लिये, शक्कर का भक्षण करती हुई, कपूर का लेप देह में लगाये, वर्णसंकर जाति, गुड़हर का फूल हाथ में लिये होती है। जिस महीने की संक्रान्ति के वाहन, वस्त्र, भक्षणादि कहे हैं उस महीने में उन सबका नाश अथवा उन वस्तुओं से जीविका करनेवालों का नाश होता है। संक्रान्ति करते समय सूर्य की सुप्त, उपविष्ट और स्थित, ये तीन अवस्थायें कही हैं, उन अवस्थाओं में वर्तमान अर्थात् सोते हुए, बैठे हुए और खड़े हुए प्राणियों का भी नाश होता है॥ १४-१७॥

संक्रान्तिवश से शुभाशुभ फल।

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे। सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेंशुकं त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः॥१८॥

अन्वयः—संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतः त्रिभे स्वभे गमनं निरुक्तम्, ततः अङ्गभे सुखम्, (ततः) त्रिभे पीडनम्, (ततः) अङ्गभे अंशुकम्, (ततः) त्रिभे अर्थहानिः, (ततः) रसभे धनागमः (स्यात्)॥ १८॥

भाषा—संक्रान्ति जिस नक्षत्र में हो उसके पूर्व नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिने। यदि प्रथम तीन नक्षत्रों में से जन्मनक्षत्र हो तो कहीं जाना पड़े, चौथे से लेकर छः नक्षत्रों में हो तो सुख, दसवें से लेकर तीन नक्षत्रों में शरीर पीड़ा, तेरहवें से लेकर छः नक्षत्रों में वस्त्र की प्राप्ति, उन्नीसवें से लेकर तीन नक्षत्रों में द्रव्यादि की हानि और बाईसवें से लेकर छः नक्षत्रों में धन की प्राप्ति होती है॥ १८॥

संक्रान्ति के नक्षत्र से जन्मनक्षत्र फल चक्र

३	६	३	६	३	६
गमन	सुख	व्यथा	वस्त्रप्राप्ति	हानि	धनप्राप्ति

सूर्यादि के वली रहते संक्रान्ति करते हुए ग्रहों का वल।

नृपेक्षणं सर्वकृतिश्च संगरः शास्त्रं विवाहो गमदीक्षणे रवेः।
वीर्येऽथ तारावलतः शुभोविधुर्विधोर्वलेऽर्कोऽर्कवले कुजादयः॥

अन्वयः—रवेः (सकाशात्) वीर्ये (क्रमेण) नृपेक्षणं, सर्वकृतिः, संगरः, शास्त्रं, विवाहः, गमदीक्षणे (शुभे भवतः) तारावलतः विधुः (शुभः) विधोः वलात् रविः (शुभः) तद्बलतः परे शुभाः (भवन्ति)॥ १९ ॥

भाषा—सूर्य के वली रहते अथवा रविवार को राजा का दर्शन, चन्द्रमा के बली रहते अथवा सोमवार को सव कार्य, मङ्गल के बली रहते अथवा मङ्गल के दिन युद्ध, बुध के बली रहते अथवा बुधवार को शास्त्र पढ़ना बृहस्पति के बली रहते अथवा बृहस्पति के दिन विवाह करना, शुक्र के बली रहते अथवा शुक्र के दिन यात्रा करना और शनैश्चर के बली रहते अथवा शनैश्चर के दिन यज्ञादि की दीक्षा लेनी चाहिए। यदि चन्द्रमा की संक्रान्ति के काल में तारा बली हो तो अशुभ भी चन्द्रमा सवा दो दिन तक शुभदायक होता है। सूर्य की संक्रान्ति के समय यदि चन्द्रमा बली हो तो अशुभ भी सूर्य एक महीने तक शुभ होता है। मंगल की संक्रान्ति के काल में यदि सूर्य बली हो तो अशुभ भी मंगल डेढ़ महीने तक शुभ होता है। ऐसे ही बुधादि को भी जानना चाहिए॥१९॥

अधिकमास और क्षयमास का निर्णय।

स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीन उक्तो मासोऽधिमासः च्चयमासकस्तु।
द्विसंक्रमस्तत्र विभागयोः स्तस्तिथेर्हि मासौ प्रथमान्त्यसंज्ञौ॥२०॥

अन्वयः—स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीनः मासः अधिमासः उक्तः, तु (तथा) द्विसंक्रमः मासः क्षयमासकः (स्यात्) तत्र तिथेः विभागयोः प्रथमान्त्यसंज्ञौ मासौ स्तः॥ २०॥

भाषा—शुक्लपच्च की परीवा से लेकर अमावास्या पर्यन्त चान्द्रमास होता है। जिस चान्द्रमास में स्पष्ट सूर्य संक्रान्ति न हो वह मास अधिमास अर्थात् मलमास कहा जाता है और जिस मास में स्पष्ट सूर्य की दो संक्रान्तियाँ हों वह च्चयमास कहा जाता है। क्षयमास में तिथि के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध भागों के सम्वन्ध से पहिला और दूसरा मास जानना

चाहिए अर्थात उस एक ही क्षयमास में दो मास माने जाते हैं। शुक्लपक्ष को पहिला और कृष्णपक्ष को दूसरा मास। यदि तिथि के पूर्वार्द्ध में किसी का जन्म अथवा मरण हुआ हो तो उसका जन्मदिन अथवा क्षयाहश्राद्ध पहिले मास में और यदि तिथि के उत्तरार्द्ध में किसी का जन्म अथवा मरण हुआ हो तो उसका जन्मदिन अथवा क्षयाहश्राद्ध दूसरे मास में होता है॥ २०॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ संक्रान्तिप्रकरणं समाप्तम्॥३॥

गोचरप्रकरणम्।

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे शिवाक्षयोर्भौमशनी तमश्च।
रसाङ्कयोर्लाभशरे गुणान्त्ये चन्द्रोऽम्बराब्धौ गुणनन्दयोश्च॥१॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये नगद्वये ज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे।
रसाङ्कयोर्नागविधौ खनागे लाभव्यये देवगुरुः शराब्धौ॥ २॥
द्वयन्त्ये नवांशे द्विगुणे शिवाग्नौ शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे।
वेदाऽम्बरे पञ्चनिधौ गजेषौ नन्देशयोर्भानुरसे शिवाग्नौ॥ ३॥
क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्यात्पितुः सुतस्यात्र न वेधमाहुः।

अन्वयः—स्वजन्मराशेः सूर्यः रसान्त्ये, खयुगे, अग्निनन्दे, शिवाक्षयोः, च (तथा) भौमशनी (तथा) तमः रसाङ्कयोः लाभशरे, गुणान्त्ये, च (तथा) चन्द्रः अम्बराब्धौ गुणनन्दयोः, लाभाष्टमे, आद्यशरे, रसान्त्ये, नगद्वये, (तथा) ज्ञः द्विशरे, अब्धिरामे, रसाङ्कयोः, नागविधौ, खनागे, लाभव्यये। (तथा) देवगुरुः शराब्धौ, द्वयन्त्ये, नवांशे, अद्विगुणे, शिवाग्नौ (तथा) शुक्रः कुनागे, द्विनगे, अग्निरूपे, वेदाम्बरे, पञ्चनिधौ, गजेषौ, नन्देशयोः, भानुरसे शिवाग्नौ, इति (एवं) क्रमात् ग्रहः शुभः विद्धश्च स्यात्। अत्र पितुः सुतस्य वेधं न आहुः॥ १-३॥

भाषा—सूर्यादि ग्रह छठें-बारहवें आदि स्थानों में क्रम से शुभ

और विद्ध होते हैं अर्थात् जन्मराशि से छठीं राशि में स्थित सूर्य शुभ और यदि जन्मराशि से बारहवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है। ऐसे ही दशवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि चौथे स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है। ऐसे ही तीसरे स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि नवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो सूर्य विद्ध हो जाता है। ऐसे ही ग्यारहवें स्थान में स्थित सूर्य शुभ और यदि पाँचवें स्थान में शनैश्चर को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। मंगल, शनैश्चर, राहु, केतु ये ग्रह जन्मराशि से छठें स्थान में शुभ और यदि नवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो विद्ध हो जाते हैं। ग्यारहवें स्थान में शुभ और पाँचवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो विद्ध हो जाते हैं। तीसरे स्थान में शुभ और यदि बारहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो विद्ध हो जाते हैं। परन्तु शनैश्चर भी सूर्य से विद्ध नहीं होता। क्योंकि आगे कहा है कि गोचर में पिता पुत्र का वेध नहीं होता। जन्मराशि से दसवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ और यदि चौथे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही तीसरे स्थान में शुभ और नवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध होजाता है ऐसेही ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा शुभ और यदि आठवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही पहले स्थान में चन्द्रमा शुभ और यदि पाँचवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही छठें स्थान में चन्द्रमा शुभ और बारहवें स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही सातवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ और यदि दूसरे स्थान में बुध को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। जन्मराशि से दूसरे स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि पाँचवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही चौथे स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि तीसरे स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है। ऐसे ही छठें स्थान में स्थित बुध

शुभ और यदि नवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही आठवें स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि पहले स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दसवें स्थान में स्थित बुध शुभ और आठवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही ग्यारहवें स्थान में स्थित बुध शुभ और यदि बारहवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । जन्मराशि से पाँचवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि चौथे स्थान में कोई अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि बारहवें स्थान में कोई अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही नवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि दशवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि तीसरे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही ग्यारहवें स्थान में स्थित बृहस्पति शुभ और यदि तीसरे स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । जन्मराशि से पहिले स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि आठवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही दूसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि सातवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों हो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही तीसरे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि पहिले स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । चौथे स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि दशवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाया है । पाँचवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि नवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । आठवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि पाँचवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । ऐसे ही नवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि ग्यारहवें स्थान में अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है । बारहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि छठें स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो ज़ाता है । ग्यारहवें स्थान में स्थित शुक्र शुभ और यदि तीसरे स्थान में कोई ग्रह स्थित हों तो विद्ध हो जाता है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

वामवेध और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का बल

दुष्टोऽपि खेटो विपरीतवेधाच्छुभो द्विकोणे शुभदः सितेऽब्जः ॥४॥

अन्वयः—(तथा) दुष्टः अपि खेटः विपरीतवेधात् शुभः (स्यात्)। तथा सिते [शुक्लपक्षे] अब्जः द्विकोणे शुभदः स्यात् ॥ ४ ॥

भाषा—अशुभ भी ग्रह विपरीत वेध से शुभ हो जाता है, अर्थात् जन्मराशि से बारहवें, चौथे, नवें, पाँचवें स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है। परन्तु यदि छठें, दसवें, तीसरे, ग्यारहवें स्थान में कोई ग्रह स्थित हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही नवें, पाँचवें, बारहवें स्थान में स्थित मङ्गल, शनैश्चर, राहु, केतु ये ग्रह अशुभ होते हैं, परन्तु छठें, तेरहवें और तीसरे स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हों तो शुभ हो जाते हैं। ऐसे ही चौथे, नवें, आठवें, पाँचवें, बारहवें और दूसरे स्थान में स्थित चंद्रमा अशुभ होता है। परन्तु दसवें, तीसरे, ग्यारहवें, पहिले, छठें, सातवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही पाँचवें, तीसरे, नवें, पहिले, आठवें, बारहवें स्थान में स्थित बुध अशुभ होता है, परन्तु दूसरे, चौथे, छठें, आठवें, दसवें, ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही चौथे, बारहवें, दसवें, तीसरे स्थान में स्थित बृहस्पति अशुभ होता है परन्तु पाँचवें, दूसरे, नवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही आठवें, सातवें, पहिले, दसवें, नवें, पाँचवें, ग्यारहवें, छठें और तीसरे स्थान में स्थित शुक्र अशुभ होता है, परन्तु पहिले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, बारहवें, ग्यारहवें स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध हो तो शुभ हो जाता है। शुक्लपक्ष में छठें, आठवें, चौथे स्थान में स्थित किसी ग्रह से यदि विद्ध न हो तो दूसरे, नवें, पाँचवें स्थान में स्थित चन्द्रमा शुभ होता है। इस वामवेध में पिता-पुत्र का वेध नहीं होता ॥ ४ ॥

क्रमवेध और विपरीत वेध में मतभेद

स्वजन्मराशेरिह वेधमाहुरन्ये ग्रहाधिष्ठितराशितः सः।
हिमाद्रिविन्ध्यान्तर एव वेधो न सर्वदेशेष्विति काश्यपोक्तिः ॥५॥

अन्वयः—इह अन्ये (आचार्याः) स्वजन्मराशेः वेधं आहुः, स वेधः ग्रहाधिष्ठितराशित एव तथा हिमाद्रिविन्ध्यान्तरे [देशे] एव ज्ञेयः, सर्वदेशेषु न इति काश्यपोक्तिः ॥ ५ ॥

भाषा—नारदादि आचार्यों ने जन्मराशि से उक्त दोनों वेध कहा है और कश्यपादि आचार्यों ने जिस राशि में ग्रह स्थित हो उस राशि से उक्त दोनों वेध कहा है । यथा जन्मराशि से छठें स्थान में स्थित सूर्य शुभ होता है. परन्तु जिस राशि में वह स्थित हो उससे बारहवीं राशि में शनि को छोड़ अन्य ग्रह स्थित हों तो विद्ध अर्थात् शुभ भी अशुभ हो जाता है । ऐसे ही जन्मराशि से बारहवें स्थान में स्थित सूर्य अशुभ होता है, परन्तु वह जिस राशि में स्थित हो उससे छठीं राशि में शनि को छोड़ अन्य ग्रह यदि स्थित हों तो शुभ हो जाता है। ऐसे ही चन्द्रादि के भी दोनों प्रकार के वेधों को जानना चाहिए। इन वेधों का दोष हिमालय और विन्ध्याचल के मध्यवर्ती देशों में ही होता है, अन्य देशों में नहीं, ऐसा कश्यपजी का वचन है । परन्तु बृहस्पतिजी ने क्रमवेध जन्मराशि से और विपरीतवेध ग्रह-स्थान से कहा है । यही माननीय भी है ॥ ५ ॥

ग्रहण-नक्षत्र का फल

जन्मर्क्षे निधनं ग्रहे जनिभतो घातः क्षतिः श्रीर्व्यथा
चिन्तासौख्यकलत्रदौस्थ्यमृतयः स्युर्माननाशः सुखम् ।
लाभोऽपाय इति क्रमात्तदशुभध्वस्त्यै जपः स्वर्णगो-
दानं शान्तिरथो ग्रहं त्वशुभदं नो वीक्ष्यमाहुः परे ॥ ६ ॥

अन्वयः—जन्मर्क्षे ग्रहे निधनं, जनिभतः ग्रहणे घातः, क्षतिः, श्रीः, व्यथा, चिन्ता, सौख्य-कलत्रदौस्थ्यमृतयः, माननाशः, सुखं, लाभः, अपाय इति क्रमात् स्युः । तदशुभध्वस्त्यै जपः, स्वर्णगोदानं, शान्तिः, अथो परे (आचार्याः) अशुभदं ग्रहं नो वीक्ष्यं आहुः ॥ ६ ॥

भाषा—जिसके जन्मनक्षत्र में सूर्य या चन्द्रमा का ग्रहण हो उसका मरण होता है । जन्मराशि से लेकर बारह राशियों में ग्रहण हो तो इस क्रम से घातादि फल होता है, अर्थात् जन्मराशि में चन्द्रमा या सूर्य का

ग्रहण हो तो शरीरपीड़ा, जन्मराशि से दूसरी राशि में हो तो हानि, तीसरी में लक्ष्मी, चौथी में व्यथा, पाँचवीं में पुत्रादि की चिंता, छठीं में सौख्य, सातवीं में स्त्रीमरण, आठवीं राशि में अपना मरण, नवीं राशि में माननाश, दसवीं राशिमें सुख, ग्यारहवीं राशि में लाभ और बारहवीं राशि में मरण होता है। चन्द्र सूर्य ग्रहण दोष के नाश के लिए त्र्यम्बकादि मन्त्रों का जप, सोने वा गौ का दान यही शान्ति है। अशुभ फल देनेवाले ग्रहण को नहीं देखना चाहिए, ऐसा भी कोई आचार्य कहते हैं ॥ ६ ॥

चन्द्रमा का विशेष शुभाशुभत्व

पापान्तः पापयुग्द्यूने पापाच्चन्द्रः शुभोऽप्यसत् ।
शुभांशे चाधिमित्रांशे गुरुदृष्टोऽशुभोऽपि सत् ॥ ७ ॥

अन्वयः—चन्द्रः पापान्तः, पापयुक्, पापात् द्यूने, शुभोऽपि असत् [अशुभः], वा शुभांशे, अधिमित्रांशे वा गुरुदृष्टः, अशुभोऽपि सत् (शुभः स्यात्) ॥ ७ ॥

भाषा--दो पापग्रहों के मध्य में स्थित, अथवा पापग्रह संयुक्त, अथवा पापग्रह के स्थान से सातवें स्थान में स्थित शुभ भी चन्द्रमा अशुभ फल देता है। यदि शुभ ग्रहों के नवांश में, अथवा अपने अधिमित्र के नवांश में स्थित हो और वृहस्पति देखता हो तो अशुभ भी चन्द्रमा शुभ फल देता है ॥ ७ ॥

प्रकारान्तर से चन्द्रमा का शुभाशुभ फल।

सितासितादौ सद्दृष्टे चन्द्रे पक्षौ शुभावुभौ ।
व्यत्यासे चाशुभौ प्रोक्तौ संकटेऽब्जवलं त्विदम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—सितासितादौ सद्दृष्टे चन्द्रे उभौ पक्षौ शुभौ प्रोक्तौ। व्यत्यासे च अशुभौ प्रोक्तौ, इदं अब्जबलं संकटे विचार्यम् ॥ ८ ॥

भाषा–शुक्लपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा शुभ होता है, उसका पक्ष भर शुभ ही रहता है और कृष्णपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा अशुभ होता है उसको भी पक्षभर शुभ ही रहता है और इससे विपरीत अर्थात

शुक्लपक्ष की परीवामें जिसका चन्द्रमा होता है, उसका सम्पूर्ण पक्ष अशुभ रहता है और कृष्णपक्ष की परीवा में जिसका चन्द्रमा शुभ होता है उसका सम्पूर्ण पक्ष भर अशुभ रहता है । यह चन्द्रमा का बल किसी संकट के समय अर्थात् अत्यन्त आवश्यक विवाह वा यात्रादि करने में यदि तात्कालिक चन्द्रशुद्धि न हो तो विचारना चाहिये, अन्यथा नहीं ॥ ८ ॥

ग्रहों की शान्ति के लिए नवरत्न धारण

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ता प्रवालं भौमेऽगौ गोमेदमार्कौ सुनीलम् ।
केतौ वैदूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्ये ॥९॥

अन्वयः—शुक्रे वज्रं, अब्जे सुमुक्ता, भौमे प्रवालं, अगौ गोमेदं, आर्कौ सुनीलं, केतौ वैदूर्यं, गुरौ पुष्पकं, ज्ञे पाचिः (इति) प्राक् (क्रमेण रत्नानि धार्याणि) अर्के मध्ये माणिक्यं (धार्यम्) ॥ ९ ॥

भाषा—नौ कोष्ठोंवाला एक सोने का यंत्र बनवाकर उसके पूर्व कोष्ठ में शुक्र की प्रसन्नता के लिए हीरा, आग्नेय कोष्ठ में चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए मोती, दक्षिण कोष्ठ में मंगल की प्रसन्नता के लिए मूँगा, नैर्ऋत्य कोष्ठ में राहु की प्रसन्नता के लिए गोमेद, पश्चिम कोष्ठ में शनैश्चर की प्रसन्नताके लिए नीलम, वायव्य कोष्ठ में केतु की प्रसन्नता के लिए वैदूर्य, उत्तर कोष्ठ में वृहस्पति की प्रसन्नता के लिए पुखराज, ईशान कोष्ठ में बुध की प्रसन्नता के लिए मरकत मणि और मध्य कोष्ठ में सूर्य की प्रसन्नता के लिए माणिक्य जड़ाकर धारण करे ॥ ९ ॥

हरएक ग्रह की प्रसन्नता के लिए माणिक्यादि के धारण की विधि ।

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् ।
गोमेदवैदूर्यकमर्कतः स्यू रत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् ॥ १० ॥
धार्यं लाजावर्तकं राहुकेत्वो रौप्यं शुक्रेन्द्वोश्च मुक्ता गुरोस्तु ।
लोहं मन्दस्यारभान्वोःप्रवालं तारा जन्मर्क्षात्त्रिराद्वत्तितः स्यात्

अन्वयः—माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि, गारुत्मकं, पुष्पकवज्रनीलं, गोमेद-वैदूर्यकम् (क्रमेण) अर्कतः सकाशात् रत्नानि (धार्याणि) अथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् (धार्यम्) । राहुकेत्वोः (मुदे) लाजावर्तकं धार्यम्, शुक्रेन्द्वोः रौप्यं

गुरोश्च मुक्ता, तु (तथा) मन्दस्य लोहं, आरभान्वोः प्रवालं (धार्यम्) तथा जन्मर्क्षात् त्रिरावृत्तितः तारा स्यात् ॥ १०-११ ॥

भाषा—माणिक्य, मोती, मूँगा, मरकत, पुखराज, हीरा, नीलम, गोमेद, वैदूर्य, ये रत्न सूर्यादि प्रत्येक ग्रहों की प्रसन्नता के लिए धारण करना चाहिए। बहुमूल्य रत्न न मिलें तो अल्प मूल्य वस्तुएँ धारण करने को कहते हैं। बुध की प्रसन्नता के लिए सुवर्ण, राहु और केतु की प्रसन्नता के लिए लाजावर्त मणि, शुक्र और चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए चाँदी, बृहस्पति की प्रसन्नता के लिए मोती, शनैश्चर की प्रसन्नता के लिए लोहा, मंगल और सूर्य की प्रसन्नता के लिए मूँगा धारण करना चाहिए। अब तारा कहते हैं। जन्मनक्षत्र से दिननक्षत्र तक तीन आवृत्ति करने से तारा सिद्ध होती है अर्थात् जिस दिन जिसकी तारा विचारनी हो, उसके जन्मनक्षत्र से उस दिन के नक्षत्र तक गिने, जितनी संख्या हो उसमें नौ का भाग देने पर जितने शेष रहें वही तारा होगी ॥१०-११॥

ताराओं के नाम और फल

जन्माख्यसंपद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः ।
वधमैत्रातिमैत्राः स्युस्तारा नामसदृक्फलाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—जन्माख्यसंपद्विपदः क्षेमप्रत्यरिसाधकाः वधमैत्रातिमैत्राः (एताः) नामसदृक्फलाः ताराः स्युः ॥ १२ ॥

भाषा—एक शेष हो तो तारा का नाम जन्म, दो शेष हों तो संपत, तीन शेष हों तो विपत्, चार शेष हों तो क्षेम, पांच शेष हों तो प्रत्यरि, छः शेष हों तो साधक, सात शेष हों तो वध, आठ शेष हों तो मैत्र, नौ शेष हों तो अतिमैत्र होता है। ये सब तारायें नाम के समान फल देनेवाली होती हैं ॥ १२ ॥

दुष्ट तारा का परिहार

मृत्यौ स्वर्णतिलान्विपद्यपि गुडं शाकं त्रिजन्मस्वथो-
दद्यात्प्रत्यरितारकासु लवणं सर्वे विपत्प्रत्यरिः ।
मृत्युश्चादिमपर्यये न शुभदोऽथैषां द्वितीयेंऽशका-
नादिमान्त्यतृतीयका अथ शुभाः सर्वे तृतीये स्मृताः ॥१३॥

अन्वयः—मृत्यौ (वधतारायां) स्वर्णतिलान् दद्यात्, विपदि (तारायां) गुडं, त्रिजन्मसु शाकं, प्रत्यरितारकासु लवणं दद्यात् । (अथ) आदिमपर्यये विपत्, प्रत्यरिः मृत्युश्च, सर्वः न शुभदः । अथ एषां [विपत्प्रत्यरिमृत्यूनां] द्वितीये [द्वितीयावृत्तौ] आदिप्रान्त्यतृतीयकाः अंशकाः (क्रमेण) न (शुभदाः) अथ तृतीये [पर्यये] सर्वे शुभाः स्मृताः ॥ १३ ॥

भाषा—मृत्यु नामक सातवीं तारा हो तो सुवर्णयुक्त तिलों का, विपत् नामक तीसरी तारा हो तो गुड़ का, जन्मसंज्ञक तारा में शाक का और प्रत्यरि नामक पाँचवीं तारा हो तो नमक का दान करने से तारा-दोष शान्त होता है। अब तारादोष का दूसरा परिहार कहते हैं। जन्मनक्षत्र से सत्ताईसवें नक्षत्र तक तीन आवृत्ति होती हैं, अठारहवें तक दो आवृत्ति और नवें नक्षत्र तक एक आवृत्ति होती है। पहिली आवृत्ति में विपत्, प्रत्यरि, मृत्यु अर्थात् तीसरी, पाँचवीं, सातवीं तारा सम्पूर्ण अशुभ है। दूसरी आवृत्ति में इन्हीं तीनों ताराओं का पहिला, दूसरा और तीसरा अंश शुभ नहीं होता अर्थात् तीसरी तारा के पहिले वीस अंश अशुभ और चालीस अंश शुभ होते हैं। पाँचवीं तारा में मध्य के वीस अंश अशुभ और आदि के वीस अंश तथा अंत के बीस अंश शुभ होते हैं। सातवीं तारा में अंत के बीस अंश अशुभ और आदि के चालिस अंश शुभ होते हैं। तीसरी आवृत्ति में तीसरी, पाँचवीं तथा सातवीं तारा सम्पूर्ण शुभ होती है ॥ १३ ॥

चन्द्रमा की अवस्था ।

षष्टि ६० घ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगा४हतम् ।
शराब्धि ४५ हृल्लब्धतोऽर्कशेषेऽवस्थाः क्रमाद्विधोः ॥१४॥

अन्वयः—गतभं षष्टिघ्नं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतं, शराब्धिहृल्लब्धतः अर्कशेषे क्रमात् । (मेषात् क्रमेण) विधोः अवस्थाः स्युः ॥ १४ ॥

भाषा—अश्विन्यादि व्यतीत नक्षत्रों की संख्या को साठ से गुणा करके वर्त्तमान नक्षत्र की भुक्तघटी जोड़े। फिर उसे चार से गुणा करे और पैंतालिस का भाग दे। जो लब्ध हों वे मेषादि राशियों में स्थित चन्द्रमा की भुक्त अवस्थायें होंगी और शेष वर्त्तमान अवस्था होगी।

यदि लब्ध बारह से अधिक हों तो उनमें बारह का भाग देकर जो शेष रहें वह भुक्त अवस्था होंगी ॥ १४ ॥

अवस्थाओं के नाम और फल।

प्रवासनाशौ मरणं जयश्च हास्यारतिः क्रीडितसुप्तभुक्ताः।
ज्वराख्यकम्पस्थिरता अवस्था मेषात्क्रमान्नामसदृक्फलाः स्युः

अन्वयः—प्रवासनाशौ मरणं जयः हास्यारतिक्रीडितसुप्तभुक्ताः ज्वराख्यकम्पस्थिरताः (एताः) मेषात् क्रमात् नामसदृक्फला अवस्था स्युः ॥ १५ ॥

भाषा—प्रवास, नाश, मरण, जय, हास्य, रति, क्रीड़ा, सुप्त, भुक्त, ज्वर, कम्प, स्थिरता, ये उक्त अवस्थाओं के नाम हैं। ये मेषादि क्रम से अर्थात् चन्द्रमा मेष में हो तो प्रवासादि क्रम से, वृष में हो तो नाशादि क्रम से, मिथुन में हो तो मरणादि क्रम से, कर्क में हो तो जयादि क्रम से, सिंह में हो तो हास्यादि क्रम से, कन्या में हो तो रत्यादि क्रम से, तुला में हो तो क्रीड़ादि क्रम से, वृश्चिक में हो तो सुप्तादि क्रम से, धन में हो तो भुक्तादि क्रम से, मकर में हो तो ज्वरादि क्रम से, कुम्भ में हो तो कम्पादि क्रम से और मीन में हो तो स्थिरतादि क्रम से होती हैं। इनका फल इन्हीं नामों के समान होता है ॥ १५ ॥

ग्रह-दोष-शान्ति के लिए औषधयुक्त जल से स्नान

लाजाकुष्ठबलाप्रियंगुघनसिद्धार्थैर्निशादारुभिः
पुङ्खालोध्रयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थाघहृत्।
धेनुःकम्बुररुणो वृषश्च कनकं पीताम्बरं घोटकः
श्वेतो गौरसिता महासिरज इत्येता रवेर्दक्षिणाः १६

अन्वयः—लाजाकुष्ठबलाप्रियंगुघनसिद्धार्थैः, निशादारुभिः पुङ्खालोध्रयुतैः जलैः ग्रहोत्थाघहृत् स्नानं निगदितम्, धेनुः कम्बु अरुणो वृषः च कनकं, पीताम्बरं, श्वेतः घोटकः, असिता गौः, महासिः, अजः इति एताः रवेः (क्रमेण) दक्षिणाः (ज्ञेयाः) ॥ १६ ॥

भाषा—लज्जावती, कूट, बरियारा, काकुनि, मुस्ता, सरसों, हल्दी, देवदारु, शरपुङ्खा और लोध इन औषधियों से युक्त जल से स्नान करना

ग्रहों के दोष का हरण करनेवाला कहा गया है। अत्र सूर्यादि ग्रहों की दक्षिणा कहते हैं–सूर्य की प्रसन्नता के लिए धेनु, चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए शङ्ख, मंगल की प्रसन्नता के लिए लाल बैल, बुध की प्रसन्नता के लिए सुवर्ण, बृहस्पति की प्रसन्नता के लिए पीताम्बर, शुक्र की प्रसन्नता के लिए श्वेत घोड़ा, शनैश्चर की प्रसन्नता के लिए काली गौ, राहु की प्रसन्नता के लिए तलवार और केतु की प्रसन्नता के लिए बकरा ब्राह्मण को देना चाहिए॥ १६॥

कौन ग्रह गन्तव्य राशि का फल कितने दिन पहले देने लगते हैं।

सूर्यारसौम्यास्फुजितोक्षनाग-
सप्ताद्रिपस्त्रान्विधुरग्निनाडी।
तमोयमेज्यास्त्रिरसाश्विमासान्
गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात्॥ १७॥

अन्वयः––सूर्यारसौम्यास्फुजितः गन्तव्यराशेः पुरस्तात् (क्रमेण) अक्षनागसप्ताद्रिवस्त्रान् फलदाः, विधुः अग्निनाड़ीः (फलदः) तमोयमेज्याः (क्रमेण) त्रिरसाश्विमासान् फलदाः॥ १७॥

भाषा––सूर्य अगली राशि में जाने से पाँच दिन पहले, मंगल आठ दिन, बुध सात दिन, शुक्र सात दिन, चन्द्रमा तीन दण्ड, राहु तीन मास, शनैश्चर छः मास और बृहस्पति दो मास पहले उस राशि का फल देने लगते हैं॥ १७॥

दुष्ट योगादि की शान्ति के लिए दान।

दुष्टे योगे हेम चन्द्रे च शङ्खं धान्यं तिथ्यर्द्धे तिथौ तण्डुलांश्च।
वारे रत्नं भे च गां हेम नाड्यां दद्यात्सिन्धूत्थं च तारासु राजा॥१८॥

अन्वयः––योगे दुष्टे हेम, चन्द्रे दुष्टे शङ्खं, तिथ्यर्धे धान्यं, तिथौ तण्डुलान्, वारे रत्नं, भे गां, नाड्यां हेम, तारासु [दुष्टासु] राजा सिन्धूत्थं दद्यात्॥१८॥

भाषा––यदि किसी आवश्यक यात्रादि काल में दुष्ट योग हो तो सुवर्ण, चन्द्रमा अशुभ हो तो शंख, करण दुष्ट हो तो धान्य, तिथि दुष्ट हो तो चावल, वार दुष्ट हो तो रत्न, राशि दुष्ट हो तो गौ, नाड़ी

अर्थात् मुहूर्त दुष्ट हो तो सुवर्ण और तारा दुष्ट हो तो सेंधा नमक देकर राजा यात्रादि करे ॥ १८ ॥

राश्यन्तर में गये हुए ग्रहों के फल देने का काल।

राश्यादिगौ रविकुजौ फलदौ सितेज्यौ
मध्ये सदाशशिसुतश्चरमेऽब्जमन्दौ।
अध्वान्नवह्निभयसंमतिवस्त्रसौख्य-
दुःखानि मासि जनिभे रविवासरादौ ॥ १९ ॥

अन्वयः—रविकुजौ राश्यादिगौ फलदौ, सितेज्यौ मध्ये फलदौ, शशिसुतः सदा फलदः, अब्जमन्दौ चरमे फलदौ, (तथा) रविवासरादौ जनिभे (सति) मासि [तस्मिन् मासे] (क्रमेण) अध्वान्नवह्निभयसन्मतिवस्त्रसौख्यदुःखानि भवन्ति ॥ १९ ॥

भाषा—सूर्य और मंगल राशि के पहले दशांश में फलदायक होते हैं। बृहस्पति और शुक्र राशि के मध्य दशांश में और बुध सदा अर्थात् जब तक राशि में रहे तब तक फलदायक होता है। चन्द्रमा और शनैश्चर राशि के अन्तिम दशांश में फल देते हैं। अब चान्द्रमास में जिस वासर में जन्मनक्षत्र का प्रवेश हो, उस वासर का फल कहते हैं। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक जन्मनक्षत्र का प्रवेश यदि रविवार में हो तो रास्ता चलना पड़े, सोमवार में हो तो उत्तम अन्न मिले, मङ्गल में हो तो अग्निभय, बुधवार में हो तो उत्तम मति, बृहस्पति में हो तो वस्त्रप्राप्ति, शुक्रवार में हो तो सौख्य और शनैश्चर में हो तो दुःख मिलता है ॥ १९ ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ गोचरप्रकरणं समाप्तम् ॥ ४ ॥

संस्कारप्रकरणम् ।



आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेषफाल्गुने ।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥ १ ॥

अन्वयः—माघमार्गराधेषफाल्गुने ज्येष्ठश्रावणयोः, शुक्ले, सद्वारे, सत्तनौ, दिवा (दिवसे) आद्यं रजः शुभम् ॥ १ ॥

भाषा—माघ, अगहन, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण इन महीनों में, शुक्लपक्ष में, शुभग्रहों के वासर में, शुभग्रह से दृष्ट, युत वा शुभग्रह की लग्न में और दिन में पहिले पहिल रजोदर्शन हो तो शुभ होता है ॥ १ ॥

प्रथम रजोदर्शन में उत्तम, मध्यम, निकृष्ट नक्षत्र ।

श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे ।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥ २ ॥

अन्वयः—श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे (आद्यं रजः शुभं स्यात्) मूलादितिभे पितृमिश्रे मध्यं (स्यात्) परेषु (नक्षत्रेषु) असत् (स्यात्) ॥२॥

भाषा—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, स्वाती, इन नक्षत्रों में प्रथम रजोदर्शन हो तो शुभ; मूल, पुनर्वसु, मघा, विशाखा, कृत्तिका, इन नक्षत्रों में मध्यम और भरणी, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा, इन नक्षत्रों में अशुभ होता है । श्वेत वस्त्र पहिने हुई स्त्री का प्रथम रजोदर्शन हो तो शुभदायक होता है ॥ २ ॥

निन्दित प्रथम रजोदर्शन ।

भद्रानिद्रासंक्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु ।
रोगेऽष्टम्यां चन्द्रसूर्योपरागे पाते चाद्यं नो रजोदर्शनं सत् ॥ ३ ॥

अन्वयः—भद्रानिद्रासंक्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु, रोगे, अष्टम्यां, चन्द्रसूर्योपरागे, पाते च आद्यं रजोदर्शनं नो सत् ॥ ३ ॥

भाषा—भद्रा में, सोते समय, संक्रान्तिकाल में, अमावास्या में, चौथ, नवमी, चतुर्दशी तिथि में, सन्ध्याकाल में, छठ अथवा द्वादशी तिथि में, वैधृतियोग में, अष्टमी में, चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहणकाल में तथा व्यतीपात में स्त्रियों का प्रथम रजोदर्शन शुभ नहीं होता ॥३॥

प्रथम रजस्वला के स्नान का मुहूर्त ।

हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः
शक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च ।
स्नायादथार्तववती मृगपौष्णवायु-
हस्ताश्विधातृभिररं लभते च गर्भम् ॥ ४ ॥

अन्वयः—हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः शक्रान्वितैः शुभतिथौ च शुभवासरे आर्त्तववती स्नायात् (तथा) मृगपौष्णवायुहस्ताश्विधातृभिः (स्नातार्त्तववती) अरं गर्भं लभते ॥ ४ ॥

भाषा—हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, रोहिणी, तीनों उत्तरा और ज्येष्ठा नक्षत्र में; शुभ तिथियों में अर्थात् अमावास्या, चतुर्दशी, द्वादशी, नवमी, अष्टमी, छठ, चौथ इन तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में; चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्रवार में पहिले पहिल रजस्वला हुई स्त्री स्नान करे। यदि मृगशिरा, रेवती, स्वाती, हस्त, अश्विनी वा रोहिणी नक्षत्र में स्नान करे तो शीघ्र गर्भवती हो ॥ ४ ॥

गर्भाधान मुहूर्त ।

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्द्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥५॥

भद्राषष्ठी पर्वरिक्ताश्च सन्ध्या भौमार्कार्की नाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥ ६ ॥

अन्वयः—त्रिविधं गण्डान्तं, निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं दास्रं पौष्णं अथ

उपरागदिवसान् पातं तथा वैधृतिं, पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं उत्पातहतानि भानि जन्मर्क्षतः मृत्युभवनम् (तथा) पापभं (एतानि) स्वपत्नीगमे त्यजेत । भद्रापष्ठीपर्वरिक्ताः, च सन्ध्याभौमार्कार्कीन्, चतस्रः आद्यरात्रीः (स्वपत्नीगमे त्यजेत्), त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे गर्भाधानं सत् ॥ ६ ॥

भाषा—रजोदर्शन से चार दिन वाद अपनी स्त्री के गमन में नक्षत्रगण्डान्त, तिथिगण्डान्त, लग्नगण्डान्त, जन्मनक्षत्र से सातवाँ नक्षत्र, जन्मनक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, ग्रहण का दिन, व्यतीपात और वैधृतियोग, मातापिता का श्राद्धदिन, दिन, परिघयोग का पूर्वार्द्ध, उत्पात से दूषित नक्षत्र, जन्मराशि, जन्मलग्न से आठवीं लग्न पापग्रहयुक्त नक्षत्र अथवा लग्न, इन सवका त्याग करे ॥ ५ ॥ भद्रा, छठ, पर्व अर्थात् चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा, सूर्यसंक्रान्ति और रिक्ता अर्थात् चौथ, नवमी, चतुर्दशी, सन्ध्याकाल, मंगल, रविवार, शनैश्चर दिन, इन सवको छोड़ शुभ तिथि, वासर, लग्न और योगादि में, रात्रि में, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, इन नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ होता है ॥ ६ ॥

गर्भाधान में लग्नवल ।

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापैस्त्र्यायारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने ।
ओजांशगेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥

अन्वयः--शुभैः केन्द्रत्रिकोणेषु (स्थितैः) पापैः त्र्यायारिगैः पुङ्ग्रहदृष्टलग्ने अब्जे ओजांशगे च युग्मरात्रौ (गर्भाधानं शुभम्), च (पुनः) चित्रादितीज्याश्विषु (नक्षत्रेषु) मध्यमं स्यात् ॥ ७ ॥

भाषा--पहिले, चौथे, सातवें, दसवें, नवें और पाँचवें स्थान में शुभ ग्रह स्थित हो; तीसरे, छठें, ग्यारहवें स्थान में पापग्रह हों; सूर्य, मंगल वा बृहस्पति लग्न को देखते हों; विषमराशि वा विषम नवांश में चन्द्रमा स्थित हो, ऐसे लग्न में और रजोदर्शन के वाद चौथी, छठीं, आठवीं, बारहवीं, चौदहवीं तथा सोलहवीं रात्रि में गर्भाधान शुभ होता है । चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र में गर्भाधान मध्यम फलदायक होता है ॥ ७ ॥

सीमन्तोन्नयन मुहूर्त ।

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभै
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे ।
सीमन्तोऽष्टमषष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे लग्ने च पुंभांशके ॥८॥

अन्वयः--जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः, रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिः, मासाधिपे पीवरे, अष्टमषष्ठमासि, शुभदैः (शुभग्रहैः) केन्द्रत्रिकोणे, खलैः (पापग्रहैः) लाभारित्रिषु (स्थितैः) वा ध्रुवान्त्यसदहे, पुंभांशके लग्ने सीमन्तः शुभः ॥ ८ ॥

भाषा--बृहस्पति, रविवार और मंगलवार में; मृगशिरा, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु और हस्त नक्षत्रों में; चौथ, नवमी, चतुर्दशी अमावास्या, द्वादशी, छठि और अष्टमी को छोड़ अन्य तिथियों में; मासेश्वर के बली रहते; गर्भाधान से आठवें या छठें मास में केन्द्रत्रिकोण अर्थात् लग्न, चौथा, सातवाँ, दसवाँ, नवाँ, पाँचवाँ, इन स्थानों में शुभग्रहों के रहते; ग्यारहवें, छठें, तीसरे स्थान में क्रूरग्रहों के रहते और पुरुषसंज्ञक ग्रहों के लग्न वा नवांश में सीमन्तोन्नयन कर्म श्रेष्ठ है। अथवा तीनों उत्तरा, रोहिणी और रेवती इन नक्षत्रों में और चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र इन ग्रहों के वासर में और दोपहर से पूर्व शुक्लपक्ष में सीमन्तोन्नयन कर्म करना श्रेष्ठ कहा है। छठें, आठवें मास होने के कारण इनमें गुरु-शुक्रास्तादि का विचार कम किया जाता है ॥ ८ ॥

गर्भाधान से प्रसव पर्यन्त महीनों के स्वामी ।

मासेश्वराः सितकुजेज्यरवीन्दुसौरि-
चन्द्रात्मजास्तनुपचन्द्रदिवाकराः स्युः ।
स्त्रीणां विधोर्बलमुशन्ति विवाहगर्भ-
संस्कारयोरितरकर्मसु भर्तुरेव ॥ ९ ॥

अन्वयः--सितकुजेज्यरवीन्दुसौरिचन्द्रात्मजाः तनुपचन्द्रदिवाकराः (क्रमेण) मासेश्वराः स्युः । विवाहगर्भसंस्कारयोः स्त्रीणां विधोः बलं उशन्ति । इतरकर्मसु भर्तुः एव विधोः बलम् (ग्राह्यम्) ॥ ९ ॥

भाषा—पहिले मास का शुक्र, दूसरे मास का मंगल, तीसरे मास का बृहस्पति, चौथे मास का सूर्य, पाँचवें मास का चन्द्रमा, छठें मास का शनैश्चर, सातवें मास का बुध, आठवें मास का गर्भाधानलग्नेश, नवें मास का चन्द्रमा और दसवें मास का सूर्य स्वामी होता है। प्रयोजन यह है कि यदि मासेश्वर अस्त, निर्बल वा किसी अन्य ग्रह से पीड़ित हो तो गर्भपात हो जाता है। इसलिए पहिले ही उसका उपाय करे। अब स्त्रियों का चन्द्रबल कहते हैं। विवाह और गर्भसम्बन्धी संस्कारों में स्त्री की जन्मराशि से अन्य यात्रादि कार्यों में स्वामी की जन्मराशि से और यदि पति मर गया हो तो यात्रादि कार्यों में भी स्त्री की ही जन्मराशि से चन्द्रबल विचारना चाहिए॥ ९॥

पुंसवनमुहूर्त्त।

पूर्वोदितैः पुंसवनं विधेयं मासे तृतीये त्वथ विष्णुपूजा।
मासेऽष्टमे विष्णुविधातृजीवैर्लग्ने शुभे मृत्युगृहे च शुद्धे॥१०॥

अन्वयः—पूर्वोदितैः (सीमन्तोक्तैः तिथ्यादिभिः) तृतीये मासे पुंसवनं विधेयम्, अथ अष्टमे मासे विष्णुविधातृजीवैः (नक्षत्रैः) शुभे लग्ने मृत्युगृहे शुद्धे [सति] विष्णुपूजा (कार्या) ॥ १० ॥

भाषा—सीमन्तोन्नयन मुहूर्त में कहे हुए तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न में तथा गर्भाधान से तीसरे मास में पुंसवन कर्म करना चाहिए। अब गर्भ की रक्षा के लिए विष्णुपूजा का मुहूर्त कहते हैं—श्रवण, रोहिणी और पुष्य नक्षत्र में; शुभ ग्रहों के दिन में; गर्भाधान से आठवें मास में; शुभ ग्रह से दृष्ट, युत वा शुभ ग्रहसम्बन्धी लग्न में और लग्न से आठवें स्थान में किसी ग्रह के न रहते, दोपहर के पूर्व विष्णु की पूजा करनी चाहिए॥ १०॥

जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त।

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात्॥११॥

अन्वयः—पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ, शुभेह्नि, एकादशे अपि द्वादशके घस्रे, मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु शिशोः तत् जातकर्मादि विधेयं स्यात्॥ ११॥

भाषा—यदि जन्मकाल में किसी कारणवश जातकर्म न किया गया हो तो पर्व अर्थात् अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पौर्णमासी, सूर्यसंक्रान्ति तथा चौथ और नवमी को छोड़ अन्य तिथियों में, व्यतीपातादि दोषरहित शुभ ग्रहों के दिन में, जन्मकाल से ग्यारहवें या बारहवें दिन में; मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में जातकर्म करे आदि पद से नामकर्म का भी ग्रहण है, अर्थात् इसी मुहूर्त में नामकर्म भी करना चाहिए ॥ ११ ॥

प्रसूता स्त्री के स्नान का मुहूर्त्त

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूतीस्नानं
समित्रभरवीज्यकुजेषु शस्तम् ।
नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्ट्रे
ज्ञसौरिवसुपड्विरिक्ततिथ्याम् ॥ १२ ॥

अन्वयः—समित्रभरवीज्यकुजेषु, पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु, सूतीस्नानं शस्तम् । आर्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुपड्विरिक्ततिथ्यां सूतीस्नानं न शस्तम् ॥ १२ ॥

भाषा—रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, स्वाती, अश्विनी और अनुराधा नक्षत्र में, रविवार, मङ्गल वा बृहस्पतिवार में प्रसूता स्त्री का स्नान करना शुभ है । आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा नक्षत्र में; बुध और शनिवार में; अष्टमी, छठ, द्वादशी, चौथ, नवमी और चतुर्दशी तिथि में प्रसूता स्त्री स्नान न करे, इनमें स्नान करने से फिर सन्तान नहीं होती ॥

प्रथम आदि महीनों में बालक के दाँत निकलने का फल

मासे चेत्प्रथमे भवेत्सदशनो बालो विनश्येत्स्वयं
हन्यात्संक्रमतोऽनुजातभगिनीं मात्रग्रजान् द्व्यादिके ।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात्सुखं पुष्टतां
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वं स्वपित्रादिहा ॥१३॥

अन्वयः— चेत् [यदि] प्रथमे मासे बालः सदशनः भवेत् (तदा) सः स्वयं नश्येत् । द्वयादिके मासे (चेत् सदशनः) तदा क्रमतः अनुजातभगिनीमातृअग्रजान् हन्यात् । षष्ठादौ (क्रमेण) अतुलं भोगं, तातात् सुखं, पुष्टतां, लक्ष्मीं, सौख्यं लभते । अथो जनौ (जन्मसमये) सदशनः (बालः) स्वपित्रादिहा (भवति) वा ऊर्ध्वं (ऊर्ध्वपङ्क्तौ) सदशनः बालः स्वपित्रादिहा (भवति) ॥१३॥

भाषा--पहिले मास में यदि बालक के दाँत निकलें तो वह बालक मर जाता है । यदि दूसरे मास में निकलें तो छोटे भाई को, तीसरे मास में निकलें तो बहिन को, चौथे मास में निकलें तो माता को और पाँचवें मास में निकलें तो जेठे भाई को मारता है । यदि छठें मास में दाँत उगें तो वह बालक उत्तम भोग, सातवें मास में पिता से सुख, आठवें मास में देह की पुष्टता, नवें मास में लक्ष्मी, दशवें मास में सौख्य, ग्यारहवें मास में अतिसौख्य और बारहवें मास में दाँत निकलें तो धन-सम्पत्ति को प्राप्त होता है । यदि गर्भ ही में उगे हुए दाँतों के सहित बालक उत्पन्न हो, अथवा ऊपर की पंक्ति में पहले दाँत उगें तो वह बालक अपने माता-पिता-भाई इत्यादिकोंका विनाश करता है ॥ १३ ॥

दोलारोहणमुहूर्त्त ।

दोलारोहेऽर्कभात्पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः ।
नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्यं क्रमाच्छिशोः ॥१४॥

अन्वयः—अर्कभात् पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः [नक्षत्रैः] दोलारोहे [सति] क्रमात् शिशोः नैरुज्यं, मरणं, कार्श्यं, व्याधिः सौख्यं स्यात् ॥ १४ ॥

भाषा--सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हो उस नक्षत्र से पाँच नक्षत्र पर्यन्त बालक को पालनेपर चढ़ाकर झुलावे तो वह नीरोग हो, फिर पाँच नक्षत्रों में उस बालक का मरण हो, फिर पाँच नक्षत्रों में वह बालक दुबला हो, फिर पाँच नक्षत्रों में उस बालक के व्याधि हो और फिर सात नक्षत्रों में उस बालक को सौख्य हो ॥ १४ ॥

दन्तार्कभूपधृतिदिग्जितवासरे स्या-
द्वारे शुभे मृदुलघुध्रुवभैः शिशूनाम् ।

दोलाधिरूढिरथ निष्क्रमणं चतुर्थे-
मासे गमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात् ॥१५॥

अन्वयः—दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे, शुभे वारे, मृदुलघुध्रुवभैः (नक्षत्रैः) शिशोः दोलाधिरूढिः स्यात्। अथ चतुर्थमासे वा अर्कमिते अह्नि गमोक्तसमये शिशोः निष्क्रमणं (शुभं) स्यात् ॥ १५ ॥

भाषा--जन्मदिन से बत्तीसवें, बारहवें सोलहवें, अठारहवें वा दसवें दिन; चन्द्र, बुध, बृहस्पति वा शुक्रवार और मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, तीनों उत्तरा वा रोहिणी नक्षत्र में पहिले पहिल बालकों को पालने पर चढ़ाना शुभ होता है। अब शिशुनिष्क्रमण मुहूर्त्त कहते हैं। जन्म से चौथे मास में और यात्रा में कहे हुए तिथि, वार, नक्षत्र और लग्न में पहिले पहिल बालक को घर से बाहर निकालना शुभ होता है। अथवा जन्म दिन से बारहवें दिन यात्रोक्त समय में शुभ होता है ॥ १५ ॥

जलपूजामुहूर्त।

कवीज्यास्तचैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत्सूतिकामासपूर्तौ।
बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः

अन्वयः--कवीज्यास्तचैत्राधिमासे, पौषे मासे, मासपूर्तौ (अपि) सूतिका जलं न पूजयेत्। बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः जलं पूजयेत् ॥ १६ ॥

भाषा—बृहस्पति वा शुक्र के अस्त में तथा चैत्र, पौष वा मलमास में सूतिका जल की पूजा न करे और बुधवार, सोमवार, बृहस्पतिवार में; चौथ, नवमी, चतुर्दशी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में; श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा नक्षत्र में और पहिले महीने की समाप्ति में सूतिका जल की पूजा करे ॥ १६ ॥

अन्नप्राशनमुहूर्त।

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारॉं-
ल्लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च।

हित्वा षष्ठात्समे मास्यथ हि मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरैर्बालकान्नाशनं सत् ॥१७॥

अन्वयः--रिक्तानन्दाष्टदर्शं, हरिदिवसं, सौरिभौमार्कवारान्, जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं लग्नं, मीनमेषालिकं लग्नं (एतत् सर्वं) हित्वा, षष्ठात् समे मासि अथ हि मृगदृशां (कन्यानां) पञ्चमात् ओजमासे समृदुलघुचरैः स्थिराख्यैः नक्षत्रैः बालकान्नाशनं सत् ॥ १७ ॥

भाषा—चौथ, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, छठ, एकादशी, अष्टमी, अमावास्या और द्वादशी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में; शनैश्चर, मंगल, रविवार को छोड़ अन्य दिनों में; जन्मराशि वा जन्मलग्न से आठवीं राशि, आठवाँ नवांश, मीन मेष और वृश्चिक को छोड़ अन्य लग्न में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में; छठें मास से लेकर सम मास में अर्थात् छठें, आठवें, दसवें इत्यादि मासों में बालकों का और पाँचवें मास से लेकर विषम मास में अर्थात् पाँचवें, सातवें, नवें इत्यादि मासों में कन्याओं का अन्नप्राशन शुभ होता है सो भी शुक्लपक्ष में और दोपहर से पूर्व होना चाहिए ॥१७॥

अन्नप्राशन के लिए लग्नशुद्धि।

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्ध-
लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं
मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित् ॥ १८ ॥

अन्वयः--शुभैः केन्द्रत्रिकोणसहजेषु (स्थितैः) खशुद्धे लग्ने त्रिलाभरिपुगैः पापैः, लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं (अन्नाशने) प्रशस्तं वदन्ति। केचित् मैत्राम्बुपानिलजनुर्भं असत् वदन्ति ॥ १८ ॥

भाषा--लग्न से पहिले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थान में शुभ ग्रह हों; दसवें स्थान में कोई ग्रह न हो; तीसरे, छठें, ग्यारहवें स्थान में पापग्रह हों और लग्न, आठवें और छठें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों

में चन्द्रमा स्थित हो, ऐसे लग्न में अन्नप्राशन शुभ होता है। कोई २ आचार्य अनुराधा, शतभिषा और जन्मनक्षत्र को अन्नप्राशन में अशुभ कहते हैं ॥ १८ ॥

अन्नप्राशनमुहूर्त में ग्रहों का फल।

क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः।
त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैरुक्तं फलं ग्रहैः ॥ १९ ॥
भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक्।
कुष्ठी चान्नक्लेशवातव्याधिमान्भोगभागिति ॥ २० ॥

अन्वयः—क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्किभार्गवैः ग्रहैः त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैः (क्रमेण) भिक्षाशी, यज्ञकृत्, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरुक्, कुष्ठी, च अन्नक्लेशवातव्याधिमान्, भोगभाग्, इति उक्तं फलं ज्ञेयम् ॥ १९ ॥ २० ॥

भाषा—जिस लग्न में अन्नप्राशन इष्ट हो उससे नवें, पाँचवें, बारहवें, पहिले, चौथे, सातवें वा आठवें स्थान में यदि क्षीणचन्द्रमा स्थित हो तो वह बालक भीख माँगकर जीविका करता है; पूर्णचन्द्रमा स्थित हो तो यज्ञ करता है, बृहस्पति स्थित हो तो दीर्घायु होता है, बुध स्थित हो तो ज्ञानी, मंगल स्थित हो तो पित्तरोगी, सूर्य स्थित हो तो कुष्ठरोगी, शनैश्चर, राहु वा केतु स्थित हों तो अन्न का क्लेश और वातरोगी और शुक्र स्थित हो तो वह बालक भोगी होता है ॥ १९ ॥ २० ॥

बालकों को भूमि में बैठाने का मुहूर्त

पृथ्वीं वराहमभिपूज्य कुजे विशुद्धेऽ-
रिक्ते तिथौ व्रजति पञ्चममासि बालम्।
बद्ध्वा शुभेऽह्नि कटिसूत्रमथ ध्रुवेन्दु-
ज्येष्ठर्क्षमैत्रलघुभैरुपवेशयत्कौ ॥ २१ ॥

अन्वयः—पृथ्वीं वराहं अभिपूज्य, कुजे विशुद्धे, अरिक्ते तिथौ, पञ्चममासि व्रजति, शुभेऽह्नि, ज्येष्ठर्क्षमैत्रलघुभैः, कटिसूत्रं बद्ध्वा बालं कौ [पृथिव्यां] उपवेशयेत् ॥ २१ ॥

भाषा—मङ्गल के बली रहते; जन्म से पाँचवें महीने में और चौथ, नवमी, चतुर्दशी को छोड़ अन्य तिथियों में, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी वा पुष्य नक्षत्र में; पृथ्वी और वराह की पूजा करके कटिसूत्र बाँधकर बालक को भूमि में बैठावे ॥२१॥

वालक की जीविका-परीक्षा ।

तस्मिन्काले स्थापयेत्तत्पुरस्ताद्वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं च ।
स्वर्णं रौप्यं यच्च गृह्णाति वालस्तैराजीवैस्तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥२२॥

अन्वयः—तस्मिन् काले तत्पुरस्तात् वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं स्वर्णं रौप्यं च स्थापयेत् । वालः यत् गृह्णाति तैः आजीवैः तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥ २२ ॥

भाषा—बालक को भूमि में बैठाकर उसके आगे वस्त्र, अस्त्र, पुस्तक, लेखनी, सुवर्ण और चाँदी धरे । वह बालक पहिले जिस वस्तु को उठावे, उसी वस्तु के द्वारा उसकी जीविका पण्डितों ने कही है ॥ २२ ॥

ताम्बूल-भक्षणमुहूर्त ।

वारे भौमार्किहीने ध्रुवमृदुलघुभैर्विष्णुमूलादितीन्द्र-
स्वातीवस्वभ्युपेतैर्मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने ।
सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैरशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थै-
स्ताम्बूलं सार्द्धमासद्वयमितसमये प्रोक्तमन्नाशने वा ॥२३॥

अन्वयः—भौमार्किहीने वारे ध्रुवमृदुलघुभैः विष्णुमूलादितीन्द्रस्वातीवस्वभ्युपेतैः, मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने, सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैः, अशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थैः सार्धमासद्वयमितसमये वा अन्नाशने ताम्बूलं प्रोक्तम् ॥ २३ ॥

भाषा—संगल और शनैश्चर को छोड़ अन्य दिनों में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, मूल, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, स्वाती वा धनिष्ठा नक्षत्र में; मिथुन, मकर, कन्या, कुम्भ, वृष, मीन लग्न में; चौथे, सातवें, दसवें, पाँचवें, नवें स्थान में और लग्न में शुभ ग्रहों के रहते; छठें, ग्यारहवें और तीसरे स्थान में पापग्रहों के रहते, जन्म से अढ़ाई महीने पर अथवा अन्नप्राशन मुहूर्त्त में बालक का ताम्बूल भक्षण शुभ होता है ॥ २३ ॥

कर्णवेध मुहूर्त ।

हित्वैतांश्चैत्रपौषावथ हरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतुमुनिवसुभिः संमिते मास्यथो वा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥२४॥

अन्वयः—चैत्रपौषावथ हरिशयनं, जन्ममासं, रिक्तां च युग्माब्दं, जन्मतारां, एतान् हित्वा, ऋतुमुनिवसुभिः सम्मिते मासि अथो वा जन्माहात् सूर्यभूपैः परिमितदिवसे, ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे, अथ ओजाब्दे, विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः, कर्णवेधः प्रशस्तः ॥ २४ ॥

भा०—चैत्र, पौष, हरिशयन अर्थात् आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्तिक शुक्ल एकादशी तक, जन्ममास अर्थात् जन्मदिन से तीस दिन पर्यन्त, रिक्ता तिथि, सम वर्ष और जन्मतारा को छोड़कर जन्म से छठें, सातवें, आठवें महीने में, अथवा बारहवें या सोलहवें दिन, बुधवार, बृहस्पति, शुक्र, सोमवार में, और विषम वर्ष में; और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में बालक का कर्णवेध शुभ होता है ॥ २४ ॥

कर्णवेध में लग्नशुद्धि

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्र-
त्र्यायस्थैः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थैर्लग्नस्थे
त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥ २५ ॥

अन्वयः—मृतिभवने संशुद्धे, शुभखचरैः त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थैः, कवीज्यलग्ने, पापाख्यैः अरिसहजायगेहसंस्थैः, त्रिदशगुरौ लग्नस्थे, (कर्णवेधः) शुभावहः स्यात् ॥ २५ ॥

भाषा—लग्न से आठवें स्थान में कोई ग्रह न हो, नवें, पाँचवें, पहिले, चौथे, सातवें, दसवें, तीसरे और ग्यारहवें स्थान में शुभ ग्रह हों; तीसरे, छठें, ग्यारहवें स्थान में पापग्रह और लग्न में बृहस्पति हो; वृष,

तुला, धन वा मीन लग्न हो तो बालक का कर्णवेध शुभ होता है ॥२५॥

मुंडन आदि में निषिद्ध काल

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहनाधानगेहप्रवेशा-
श्चौलं राजाभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा बाल्यास्तवार्ध्ये सुरगुरुसितयोर्नैव केतूदये स्या-
त्पक्षं वार्द्धं च केचिज्जहति तमपरे यावदीक्षां तदुग्रे ॥२६॥

अन्वयः—याम्यायने गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहनाधानगेहप्रवेशाः चौलं, राजाभिषेकः व्रतं अपि नैव शुभदं स्यात् । सुरगुरुसितयोः बाल्यास्तवार्धे अपि नैव शुभदं, वा केतूदये (अपि) नैव शुभदं स्यात् । तं [केतूदयं] केचित् पक्षं वा अर्धं [पक्षार्धं] जहति, अपरे तदुग्रे [ब्रह्मपुत्राख्ये केतौ] ईक्षां [दर्शनं] यावत् जहति ॥ २६ ॥

भाषा—देवप्रतिष्ठा, जलाशयप्रतिष्ठा, विवाह, अग्न्याधान, चूडाकर्म, यज्ञोपवीत, राज्याभिषेक, गृहप्रवेश और भी जिनका कोई नियत काल नहीं है, वे सब शुभ कर्म याम्यायन अर्थात् कर्कसंक्रान्ति से मकर-संक्रान्ति तक शुभ नहीं होते । बृहस्पति और शुक्र की बाल्यावस्था, अस्त और वृद्धावस्था में और केतु के उदय में भी उक्त कर्म शुभ नहीं होते । कोई आचार्य केतु के उदय में पक्ष भर और कोई आधा पक्ष उक्त कर्म करने में त्याग करते हैं । कोई कहते हैं कि जब तक केतु दीख पड़े, तब तक ये उक्त कर्म नहीं करना चाहिए । यह उनका कहना उग्र अर्थात् ब्रह्मपुत्र नामक अति दुष्ट फल देनेवाले केतु के उदय में समझना चाहिए । ब्रह्मपुत्र नामक केतु का लक्षण वशिष्ठजी ने कहा है कि तीन शिखा और तीन वर्णों से संयुक्त, ब्रह्मदण्ड के सदृश, किसी भी दिशा में उदय होनेवाला ब्रह्मसुत नामक केतु होता है । यह उदय होकर ब्रह्मा का भी नाश करता है, फिर दूसरों के लिए क्या कहना है । वराहजी ने भी इसका ऐसा ही लक्षण कहा है । अन्य केतुओं के लक्षण गर्गजी ने कहा है । तीन शिखा, लाल वर्ण, लाल किरण, सदा उत्तर ही दिशा में उदय होने वाले लोहितांगात्मज और कौंकुम नाम के साठ प्रकार के केतु होते हैं । उनके उदय होने से राजाओं में परस्पर संग्राम होता है ।

कृष्णवर्ण मिली हुई काली किरणोंवाले कीलक नाम के तैंतीस प्रकार के केतु होते हैं, वे उदय होने पर अतिदारुण होते हैं ॥ २६ ॥

शुक्र और बृहस्पति की बाल्य और वृद्धावस्था

पुरः पश्चाद्भृगोर्बाल्यं त्रिदशाहं च वार्धकम् ।
पक्षं पंचदिनं ते द्वे गुरोः पक्षमुदाहृते ॥ २७ ॥

अन्वयः—भृगोः पुरः पश्चात् (क्रमेण) त्रिदशाहं बाल्यं, पक्षं पञ्चदिनं च वार्धकं (प्रोक्तम्) । गुरोः ते द्वे [बाल्यवार्धके] पक्षं उदाहृते ॥ २७ ॥

भाषा—यदि शुक्र का उदय पूर्व दिशा में हो तो तीन दिन बाल और पन्द्रह दिन वृद्ध तथा पश्चिम में हो तो दस दिन बाल और पाँच दिन वृद्ध रहता है । बृहस्पति दोनों दिशाओं में उदय से पन्द्रह दिन तक बाल और अस्त से पूर्व पन्द्रह दिन वृद्ध रहता है ॥ २७ ॥

मतान्तर से बाल्य और वृद्धावस्था

ते दशाहं द्वयोः प्रोक्ते कैश्चित्सप्तदिनं परैः ।
त्र्यहं त्वात्ययिकेऽप्यन्यैरर्धाहं च त्र्यहं विधोः ॥ २८ ॥

अन्वयः—कैश्चित् द्वयोः (गुरुशुक्रयोः) ते [बाल्यवार्धके] दशाहं प्रोक्ते, परैः सप्तदिनं प्रोक्ते । अन्यैः आत्ययिके [आवश्यके] त्र्यहं प्रोक्ते । विधोः च अर्धाहं बाल्यं, त्र्यहं वार्धकं (प्रोक्तम्) ॥ २८ ॥

भाषा—कोई आचार्य शुक्र और बृहस्पति दोनों की बाल्य और वृद्धावस्था दस दिन की कहते हैं । कोई सात दिन की कहते हैं और कोई कहते हैं कि यदि किसी कार्य की अति आवश्यकता हो तो तीन ही दिन की मानना चाहिए । चन्द्रमा की बाल्यावस्था आधा दिन और वृद्धावस्था तीन दिन की होती है ॥ २८ ॥

चूड़ाकर्म का मुहूर्त

चूड़ावर्षात्तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टाद्यरिक्तार्कषष्ठी
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।
वारे लग्नांशयोश्च स्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते

शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः ॥ २९ ॥
क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैर्मृत्युशस्त्रमृतिपङ्गुताज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥३०॥

अन्वयः—तृतीयात् वर्षात् विषमे वर्षे, अष्टाद्यरिक्तार्कषष्ठीपर्वोनाहे, विचैत्रोदगयनसमये, ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानां वारे लग्नांशयोश्च, स्वभनिधनतनौ, नैधने शुद्धियुक्ते (सति) शाक्रोपेतैः विमैत्रैः मृदुचरलघुभैः, आयषट्त्रिस्थपापैः चूड़ा शुभा भवति ॥२९॥ क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करैः केन्द्रगैः क्रमेण मृत्युशस्त्रमृतिपंगुताज्वराः स्युः । (तथा) बुधजीवभार्गवैः केन्द्रगैः इष्टतारया च (चौलं) शुभं भवति ॥३०॥

भाषा—जन्म से अथवा गर्भाधान से तीसरे, पाँचवें, सातवें इत्यादि विषम वर्षों में; अष्टमी, द्वादशी, चौथ, नवमी, चतुर्दशी, परीवा, छठ, अमावास्या, पूर्णमासी और सूर्यसंक्रान्ति को छोड़ अन्य तिथियों में; चैत्र महीने को छोड़ उत्तरायण में; बुध, चन्द्र, शुक्र और बृहस्पतिवार में; इन्हीं शुभ ग्रहों के लग्न वा नवांश में; जिसका मुण्डन कराना हो, उसके जन्मलग्न वा जन्मराशि से आठवीं राशि को छोड़ अन्य लग्न में; लग्न से आठवें स्थान में शुक्र को छोड़ अन्य ग्रहों के न रहते अनुराधा को छोड़ ज्येष्ठा सहित मृदु, चर, लघुसंज्ञक नक्षत्रों में अर्थात् ज्येष्ठा, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में; लग्न से ग्यारहवें, छठें, तीसरे स्थान में पापग्रहों के रहते मुण्डन कराना शुभ होता है ॥ २९ ॥ यदि चन्द्रमा क्षीण हो तो सोमवार को मुण्डन कराने से उस बालक की मृत्यु, मंगल को अस्त्र से मृत्यु, शनैश्चर को पंगु और रविवार को ज्वर होता है । बुध, बृहस्पति तथा शुक्र केन्द्र स्थान में हों और दूसरी, चौथी, छठीं तथा आठवीं तारा हो तो मुण्डन शुभ होता है ॥ ३० ॥

जिसकी माता गर्भवती हो उसके मुण्डन का मुहूर्त ।

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ ३१ ॥

अन्वयः—पञ्चमासाधिके मातुः गर्भे शिशोः चौलं न सत् । पञ्चवर्षाधिकस्य मातरि गर्भिण्यां अपि चौलं इष्टं स्यात् ॥ ३१ ॥

भाषा--यदि माता के पाँच महीने से अधिक दिनों का गर्भ हो तो बालक का मुण्डन शुभ नहीं होता और यदि पाँच वर्ष से अधिक दिनों का बालक हो गया हो तो माता के गर्भवती रहते भी मुण्डन शुभ होता है ॥ ३१ ॥

तारादोष का अपवाद ।

दौष्ट्येऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे ।
सौम्ये भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ३२

अन्वयः—तारादौष्ट्ये (अपि) अब्जे (चन्द्रे) त्रिकोणोच्चगे वा सौम्यमित्रस्ववर्गे (स्थिते) क्षौरं सत् स्यात् । शोभने अब्जे सौम्ये भे (सति) क्षौरयात्रादिकृत्ये दुष्टतारापि शस्ता ज्ञेया ॥ ३२ ॥

भाषा--यदि तारा दुष्ट भी हो, अर्थात् पहिली, तीसरी, पाँचवीं, सातवीं भी हो और चन्द्रमा नवें, पाँचवें या अपने उच्च स्थान में अथवा बुध, वृहस्पति, शुक्र के षड्वर्ग में, अथवा अपने ही षड्वर्ग में स्थित हो तो मुण्डन शुभ होता है । विहित शुभ नक्षत्र हो चन्द्रमा गोचर से शुभ हो, अर्थात् जन्मराशि से चौथे, छठें, आठवें, बारहवें, स्थान को छोड़ अन्य स्थान में स्थित हो तो दुष्ट भी तारा मुण्डन और यात्रा आदि में शुभ हो जाती है ॥ ३२ ॥

मुण्डनादि कार्यों में निषिद्ध काल ।

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥ ३३ ॥

अन्वयः—ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोः चौलादि न आचरेत् । ज्येष्ठापत्यस्य ज्येष्ठे चौलं न चाचरेत् । कैश्चित् मार्गेऽपि न इष्यते ॥ ३३ ॥

भाषा--जब माता रजस्वला हो अथवा माता के लड़का हुए महीने से कम अथवा लड़का हुए बीस दिन से कम दिन बीते हों तो लड़के का मुण्डनादि संस्कार न करे। जेठे लड़के और जेठी लड़की का ज्येष्ठ महीने में विवाहादि शुभ कार्य न करे। कोई आचार्य अगहन में भी जेठे लड़के और लड़की के विवाहादि संस्कार को निषिद्ध कहते हैं ॥ ३३ ॥

साधारण क्षौरादि का मुहूर्त्त और निषेध

दन्तक्षौरनखक्रियात्र विहिता चौलोदिते वारभे
पातंग्यारवीन् विहाय नवगं घस्रं च सन्ध्यां तथा।
रिक्तां पर्वनिशां निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यतः
स्नाताभ्यक्तकृतासनैर्नहि पुनः कार्या हितप्रेप्सुभिः ॥३४॥

अन्वयः—पातंग्यारवीन् विहाय च नवमं घस्रं, सन्ध्यां, रिक्तां पर्वनिशां विहाय, चौलोदिते वारभे, दन्तक्षौरनखक्रिया विहिता । अत्र निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यतः स्नाताभ्यक्तकृताशनैः हितप्रेप्सुभिः (जनैः) दन्तक्षौरनखक्रिया नहि कार्या ॥

भाषा—शनैश्चर, मङ्गल, रविवार, नवम दिन, संध्याकाल, चौथ, नवमी, चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णमासी, अमावास्या, सूर्यसंक्रान्ति और रात्रि को छोड़ मुण्डन में कही हुई तिथि, वार नक्षत्र और लग्न में दाँतों को साफ कराना, बाल बनवाना और नख कटाना शुभ कहा है । जिनको अपने हित की इच्छा हो वे बिना आसन के रणभूमि में, किसी अन्य गाँव में यात्रा की तैयारी कर चुकने पर, स्नान करके उबटन या तेल लगाकर और भोजन करके उक्त तीनों काम न करें ॥ ३४ ॥

निमित्तवश क्षौरकर्म ।

क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विजनृपाज्ञयाचरेत् ।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः ॥

अन्वयः—क्रतुपाणिपीडमृतिबन्धमोक्षणे द्विजनृपाज्ञया क्षुरकर्म आचरेत् । खलु गर्भिणीपतिः शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरं न आचरेत् ॥ ३५ ॥

भाषा—यज्ञ में, विवाह में, माता-पिता के मरणमें, बन्धन से छूटने पर अथवा ब्राह्मण वा राजा की आज्ञा से सदा बाल बनवावे । चाहे निषिद्ध भी वारादि हो तो भी कुछ दोष नहीं । अब गर्भिणीपति के त्याज्य कर्म कहते हैं । शव का ले जाना, तीर्थयात्रा, समुद्र में स्नान और क्षौरकर्म जिसकी स्त्री गर्भवती हो वह पुरुष इतने कर्म न करे ३५

क्षौरकर्म में राजाओं के लिए विशेष ।

नृपाणां हितं क्षौरभे श्मश्रुकर्म दिने पञ्चमे पञ्चमेऽस्योदये वा ।

षडग्निस्त्रिमैत्रोऽष्टकः पञ्चपित्र्योऽब्दतोऽब्ध्यर्यमाक्षौरकृन्मृत्युमेति ॥

अन्वयः—क्षौरभे तथा पञ्चमे दिने वा अस्य (नक्षत्रस्य) उदये (मुहूर्ते) नृपाणां श्मश्रुकर्म हितम् । तथा षडग्निः त्रिमैत्रः, अष्टकः, पञ्चपित्र्यः अब्ध्यर्यमा क्षौरकृत् अब्दतः मृत्युं एति ॥ ३६ ॥

भाषा—साधारण क्षौर कर्मके लिए कहे हुए नक्षत्रों में पाँचवें दिन दाढ़ी के बाल बनवाना राजाओं का हितकारक होता है। अब सर्वथा क्षौर में त्याज्य नक्षत्र कहते हैं– कृत्तिका नक्षत्र में छः बार, अनुराधा में तीन बार, रोहिणी में आठ बार, मघा में पाँच बार और उत्तराफाल्गुनी में चार बार बाल बनवानेवाला पुरुष एक वर्ष के अनन्तर मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ३६ ॥

अक्षरारम्भ का मुहूर्त्त

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके
तिथौ शिवार्कदिक्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥ ३७ ॥

अन्वयः—पञ्चमाब्दके, शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके तिथौ रवौ उदक् लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे, चरोनसत्तनौ, सतां दिने, गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य, शिशोः लिपिग्रहः शुभः स्यात् ॥ ३७ ॥

भाषा–जन्म से पाँचवें वर्ष में, एकादशी, द्वादशी, दशमी, दुइज, छठ, पञ्चमी वा तीज तिथि में, उत्तरायण में सूर्य के रहते, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा या अनुराधा नक्षत्र में; चर अर्थात् मेष, कर्क, तुला और मकर को छोड़ शुभ ग्रहों के लग्न में; शुभ ग्रहों के दिन में; गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी की पूजा करके बालक का अक्षरारम्भ शुभ होता है ॥ ३७ ॥

विद्यारम्भ का मुहूर्त्त

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि षट् शरत्रिके ।

शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ॥३८॥

अन्वयः—मृगात् करात् श्रुतेः त्रये गुरुद्वये, अर्कजीवविसिते अह्नि, षट्-शरत्रिके शिवार्कदिग्द्विके तिथौ, परैः ध्रुवान्त्यमित्रभे, शुभैः त्रिकोणकेन्द्रगैः अधीतिः उत्तमा स्मृता ॥ ३८ ॥

भाषा--मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य वा आश्लेषा नक्षत्र में; रविवार, बृहस्पति वा शुक्रवार में, छठ, पञ्चमी, तीज, एकादशी, द्वादशी, दशमी वा दुइज तिथि में; लग्न से नवें, पाँचवें, पहिले, चौथे, सातवें और दसवें शुभ ग्रहों के रहते विद्यारम्भ शुभ होता है । कोई आचार्य तीनों उत्तरा, रेवती और अनुराधा में भी विद्यारम्भ शुभ कहते हैं ॥ ३८ ॥

वर्णक्रम से यज्ञोपवीत का समय

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाऽष्टमे
वर्षे वाप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे ।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद्द्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदितं गौणं तदाहुर्बुधाः ॥३९॥

अन्वयः—गर्भात् वा जनेः [जन्मसमयात्] अष्टमे, अपि वा पञ्चमे वर्षे विप्राणां, (एवं) षष्ठे तथा एकादशे वर्षे क्षितिभुजाम्, पुनः अष्टमे वा द्वादशे वत्सरे वैश्यानाम् व्रतबन्धनं (शुभं) निगदितम् । अथ निगदिते काले द्विगुणे गते सति तत् व्रतं बुधाः गौणं आहुः ॥ ३९ ॥

भाषा—गर्भाधान से अथवा जन्मकाल से आठवें वा पाँचवें वर्ष में ब्राह्मणों का, छठें अथवा ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों का, आठवें अथवा बारहवें वर्ष में वैश्यों का यज्ञोपवीत श्रेष्ठ कहा गया है । उक्तकाल के द्विगुणकाल में अर्थात् सोलहवें वर्ष ब्राह्मण का, बाइसवें वर्ष क्षत्रिय का और चौबीसवें वर्ष वैश्य का यज्ञोपवीत मध्यम कहा गया है ॥ ३९ ॥

यज्ञोपवीत के नक्षत्रादि ।

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रेऽर्क-
विद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत् ।
द्वित्रीन्दुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ॥ ४० ॥

अन्वयः--क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रे, अर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने, द्वित्रीन्दुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ, व्रतं सत् स्यात्, च (पुनः) कृष्णादिमत्रिलवके अपि सत्, च (तथा) अपराह्णे व्रतं न सत् ॥ ४० ॥

भाषा–हस्त, अश्विनी, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, आश्लेषा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा और आर्द्रा नक्षत्र में; सूर्य, बुध, बृहस्पति, शुक्र वा चन्द्रमा के दिन में, दुइज, तीज, पञ्चमी, एकादशी, द्वादशी वा दशमी तिथि में, शुक्लपक्ष में, पञ्चमी तिथि पर्यन्त कृष्णपक्ष में भी दोपहर से पूर्व ही यज्ञोपवीत शुभ होता है। यद्यपि ग्रन्थकार ने महीने यहाँ नहीं कहे हैं उन्हें ग्रन्थान्तर से जानना चाहिए। वसन्त ऋतु में ब्राह्मण का, ग्रीष्म ऋतु में क्षत्रिय का और शरद् ऋतु में वैश्य का यज्ञोपवीत श्रेष्ठ होता है। यद्यपि सब वर्णों के लिये हस्त-अश्विनी आदि नक्षत्र कहे हैं, किंतु ब्राह्मण का यज्ञोपवीत पुनर्वसु नक्षत्र में न करना चाहिए ॥४०॥

यज्ञोपवीत में लग्नदोष

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः ।
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥ ४१ ॥

अन्वयः--कवीज्यचन्द्रलग्नपाः रिपौ मृतौ स्थिता व्रते अधमा भवन्ति, तथा अब्जभार्गवौ व्यये, तथा खलाः तनौ मृतौ सुते स्थिताः अशुभा भवन्ति ॥ ४१ ॥

भाषा—यज्ञोपवीत में लग्न से छठें वा आठवें स्थान में स्थित शुक्र, बृहस्पति, चन्द्रमा वा लग्नेश तथा बारहवें स्थान में स्थित चन्द्रमा वा शुक्र तथा लग्न में अथवा आठवें वा पाँचवें स्थान में स्थित चन्द्रमा वा

शुक्र तथा लग्न में अथवा आठवें वा पाँचवें स्थान में स्थित पापग्रह अधम अर्थात् बालक के मरणकारक होते हैं ॥ ४१ ॥

यज्ञोपवीत में लग्न के गुण

व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फवर्जिताः शोभनाः शुभाः ।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥ ४२ ॥

अन्वयः——शुभाः [शुभग्रहाः] अष्टषड्रिष्फवर्जिताः व्रतबन्धे शोभना भवन्ति । तथा खलाः त्रिषडाये, शोभनाः भवन्ति । पूर्णः विधुः गोकर्कस्थः तनौ मूर्तौ शोभनो भवति ॥ ४२ ॥

भाषा—यज्ञोपवीत में लग्न से आठवें, छठें वा बारहवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में शुभग्रह स्थित हों और तीसरे छठें वा ग्यारहवें स्थान में पापग्रह स्थित हों तो शुभ होते हैं । वृष वा कर्क राशि में स्थित पूर्ण चन्द्रमा यदि लग्न में हो तो शुभ होता है ॥ ४२ ॥

वर्णेश व शाखेश ।

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ
राजन्यानामोषधीशो विशां च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्या-
च्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥ ४३ ॥

अन्वयः——भार्गवेज्यौ विप्राधीशौ, कुजार्कौ राजन्यानां (अधीशौ), ओषधीशः विशां (अधीशः), ज्ञः शूद्राणां (अधीशः), शनिः अन्त्यजानां (अधीशः) जीवशुक्रारसौम्याः शाखेशाः स्युः ॥ ४३ ॥

भाषा—शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण वर्ण के ईश, मङ्गल और सूर्य क्षत्रिय वर्ण के ईश, चन्द्रमा वैश्य वर्ण का ईश, बुध शूद्र वर्ण का ईश और शनैश्चर अन्त्यज अर्थात चाण्डालादि वर्णसङ्कर जातिका ईश है । ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद क्रम से बृहस्पति, शुक्र, मंगल और बुध शाखेश हैं । ऋग्वेद का ईश बृहस्पति, यजुर्वेद का ईश शुक्र, सामवेद का ईश मङ्गल और अथर्ववेद का ईश बुध है ॥ ४३ ॥

शाखेश और वर्णेश का प्रयोजन

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं
शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् ।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे
स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ॥ ४४ ॥

अन्वयः—(व्रते) शाखेशवारतनुवीर्यं अतीव शस्तं स्यात् । शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् स्यात् । जीवे भृगौ च रिपुगृहे, विजिते, नीचे च (सति) व्रतेन वेदशास्त्रविधिना रहितः स्यात् ॥ ४४ ॥

भाषा—यदि शाखेश का दिन हो; शाखेश ही की लग्न हो और शाखेश बली भी हो तो यज्ञोपवीत अति शुभ होता है। अथवा शाखेश, वर्णेश सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति बली हों तो भी यज्ञोपवीत शुभ होता है। यदि बृहस्पति वा शुक्र अपने शत्रु के स्थान में हों, अथवा युद्ध में किसी ग्रह से हार गये हों, अथवा अपने नीच स्थान में हों तो यज्ञोपवीत करने से वह बालक वेद और शास्त्र से तथा वेद-शास्त्र में कही हुई क्रिया से रहित होता है ॥ ४४ ॥

जन्म-मास आदि का यज्ञोपवीत में अपवाद

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती ।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिभे ॥ ४५ ॥

अन्वयः—विप्राणां आद्यगर्भे, क्षत्रादीनां अनादिभे गर्भे अपि जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते (सति) विद्याधिकः स्यात् ॥ ४५ ॥

भाषा—जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न और जन्मतिथि में ब्राह्मण के पहले लड़के का और क्षत्रियों तथा वैश्यों के पहले को छोड़ अन्य लड़के का यज्ञोपवीत हो तो वह अधिक विद्वान् होता है ॥ ४५ ॥

बृहस्पति का बल

बटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजया तत्र निन्दितः ॥ ४६ ॥

अन्वयः--वटुकन्याजन्मराशेः त्रिकोणायद्विसप्तगः गुरुः श्रेष्ठः स्यात्, खपट्-त्र्याद्येषु पूजया (शुभः) अन्यत्र निन्दितः स्यात् ॥ ४६ ॥

भाषा—लड़के या लड़की की जन्मराशि से नवीं, पाँचवी, ग्यारहवीं, दूसरी या सातवीं राशि में वृहस्पति शुभ; दशवीं, छठीं, तीसरी या पहली राशि में पूजा करने से शुभ और चौथी, आठवीं या बारहवीं राशि में अशुभ होता है ॥ ४६ ॥

गुरुदोषापवाद

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।
रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसत् ॥ ४७ ॥

अन्वयः—गुरुः स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे रिष्फाष्टतुर्यगोऽपि इष्टः स्यात् । तथा नीचारिस्थः शुभोऽपि असत् स्यात् ॥ ४७ ॥

भाषा--बारहवें, आठवें वा चौथे स्थान में भी स्थित वृहस्पति यदि स्वोच्च, स्वराशि, स्वमित्रराशि, स्वनवांश या वर्गोत्तम में हो तो शुभ हो जाता है और शुभ भी वृहस्पति यदि अपने नीच स्थान में या अपने शत्रु के स्थान में स्थित हो तो वह अशुभ हो जाता है ॥ ४७ ॥

यज्ञोपवीत में निषिद्ध समय

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।
प्राक्संध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥ ४८ ॥

अन्वयः--कृष्णे प्रदोपे, अनध्याये, शनौ, निशि, अपराह्णके प्राक्संध्यागर्जिते तथा गलग्रहे व्रतबन्धः नेष्टः स्यात् ॥ ४८ ॥

भाषा—पञ्चमी तक को छोड़ कृष्णपक्ष, प्रदोष, अनध्याय, शनैश्चर का दिन, रात्रि और दो पहर के बाद का समय, जिस दिन प्रातःकाल मेघ गर्जे वह दिन और गलग्रह, इनमें यज्ञोपवीत शुभ नहीं होता ।

सूर्यादि ग्रहों के नवांश में यज्ञोपवीत होने का फल ।

क्रूरो जडो भवेत्पापः पटुः षट्कर्मकृद्वटुः ।
यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥ ४९ ॥

अन्वयः—रव्याद्यंशे तनौ सति वटुः क्रमात्, क्रूरः, जडः, पापः, पटुः, पट्कर्मकृत्, यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खः स्यात् ॥ ४९ ॥

भाषा—सूर्य के नवांश में यज्ञोपवीत करने से वह बालक क्रूर अर्थात् निर्दय, चन्द्रमा के नवांश में करने से जड़ अर्थात् विचाररहित, मङ्गल के नवांश में पापी, बुध के नवांश में पटु अर्थात् चतुर, वृहस्पति के नवांश में यज्ञ करना, कराना, दान लेना, देना, पढ़ना, पढ़ाना ये छः कर्म करनेवाला, शुक्र के नवांश में यज्ञ करनेवाला और धनी तथा शनैश्चर के नवांश में यज्ञोपवीत करने से मूर्ख होता है। इसलिए लग्न में शुभग्रह का नवांश हो तभी यज्ञोपवीत उत्तम होता है ॥ ४९ ॥

यज्ञोपवीत में चन्द्रनवांश का फल।

विद्यानिरतः शुभराशिलवे पापांशगते हि दरिद्रतरः।
चन्द्रे स्वलवे बहुदुःखयुतः कर्णादितिभे धनवान्स्वलवे ॥५०॥

अन्वयः—शुभराशिलवे चन्द्रे व्रती निरतः स्यात्। पापांशगते दरिद्रतरः स्यात्। स्वलवे चन्द्रे बहुदुःखयुतः स्यात्। स्वलवे चन्द्रे कर्णादितिभे धनवान् भवति ॥ ५० ॥

भाषा—यज्ञोपवीत में यदि चन्द्रमा शुभराशि के नवांश में स्थित हो तो व्रती अर्थात् जिसका यज्ञोपवीत करना है, वह बालक सदा विद्या में रुचि रखनेवाला और पापराशि के नवांश में स्थित हो तो अतिशय दरिद्र तथा अपनी राशि के नवांश में अर्थात् कर्कराशि के नवांश में स्थित हो तो बहुत दुःखों से युक्त होता है। यदि यज्ञोपवीतकाल में चन्द्रमा कर्क राशि के नवांश में हो और श्रवण नक्षत्र या पुनर्वसु नक्षत्र हो तो वह बालक धनवान् होता है ॥ ५० ॥

केन्द्रस्थित सूर्यादि ग्रहों का फल।

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः।
प्राज्ञोऽर्थवान्म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥ ५१ ॥

अन्वयः—केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः व्रती क्रमेण राजसेवी, वैश्यवृत्तिः, पाठकः, प्राज्ञः, अर्थवान्, म्लेच्छसेवी च भवति ॥ ५१ ॥

भाषा—लग्न, चौथे, सातवें और दसवें स्थान की केन्द्र संज्ञा है। सूर्य केन्द्र में स्थित हो तो जिसका यज्ञोपवीत किया जाय, वह राजा का सेवक, चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वैश्यवृत्ति करनेवाला, मङ्गल केन्द्र में हो तो शस्त्रजीवी, बुध केन्द्र में हो तो अध्यापक, बृहस्पति केन्द्र में हो तो पण्डित, शुक्र केन्द्र में हो तो धनवान् और शनैश्चर केन्द्र में हो तो म्लेच्छों का सेवक होता है ॥ ५१ ॥

यज्ञोपवीतकाल में संयुक्त ग्रहों का फल

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घृणः सद्युते पटुः ॥ ५२ ॥

अन्वयः—शुक्रे, जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते व्रती क्रमेण निर्गुणः, क्रूरचेष्टः तथा निर्घृणः स्यात्। सद्युते पटुः स्यात् ॥ ५२ ॥

भाषा—यदि यज्ञोपवीतकाल में शुक्र, बृहस्पति वा चन्द्रमा, इनमें से किसी ग्रह के साथ सूर्य हो तो बालक निर्गुण, मङ्गल हो तो निर्दय और शनैश्चर हो तो निर्लज्ज होता है। शुभ ग्रहों का संयोग होने से सब विद्याओं में निपुण होता है ॥ ५२ ॥

यज्ञोपवीत में चन्द्रवश शुभाशुभ योग

विधौ सितांशगे सिते त्रिकोणगे तनौ गुरौ।
समस्तवेदविद् व्रती यमांशगेऽतिनिर्घृणः ॥ ५३ ॥

अन्वयः—विधौ सितांशगे, सिते त्रिकोणगे, गुरौ तनौ, व्रती समस्तवेदविद् भवति। यमांशगे, अतिनिर्घृणः स्यात् ॥ ५३ ॥

भाषा—यदि शुक्र के नवांश में चन्द्रमा, लग्न से पांचवें वा नवें स्थान में शुक्र और लग्न में बृहस्पति हो तो बालक चारों वेदों का जाननेवाला होता है। यदि शनैश्चर के नवांश में चन्द्रमा, लग्न में बृहस्पति और लग्न से पांचवें वा नवें स्थान में शुक्र हो तो बालक निर्दय अथवा निर्लज्ज होता है ॥ ५३ ॥

अनध्यायसंज्ञक तिथियाँ

शुचिशुक्रपौषतपसां दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।
भूतादित्रितयाष्टमी संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥ ५४ ॥

अन्वयः--शुचिशुक्रपौषतपसां मासानां दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः, तथा भूतादित्रितयाष्टमी संक्रमणं च व्रतेषु अनध्यायाः (भवन्ति) ॥ ५४ ॥

भाषा—आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी, माघ शुक्ल द्वादशी तथा चतुर्दशी, पौर्णमासी, अमावस्या, परीवा, अष्टमी और सूर्य-संक्रान्ति, ये सब यज्ञोपवीत में अनध्यायसंज्ञक हैं । इनमें यज्ञोपवीत न करना चाहिए ॥ ५४ ॥

प्रदोष-लक्षण

अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
राश्यर्धसार्धप्रहरयाममध्ये स्थितैः क्रमात् ॥ ५५ ॥

अन्वयः—अर्कतर्कत्रितिथिषु राश्यर्धसार्धप्रहरयाममध्यस्थितैः तदग्रिमैः प्रदोषः स्यात् ॥ ५५ ॥

भाषा--द्वादशी में आधी रात से पूर्व ही यदि त्रयोदशी का योग हो तो वह प्रदोष, छठ में डेढ़ पहर रात बीतने के पूर्व ही यदि सप्तमी का योग हो तो वह प्रदोष और तीज में पहर भर रात बीतने के पूर्व ही यदि चौथ का योग हो तो वह प्रदोष कहा जाता है ॥ ५५ ॥

ब्रह्मौदन के पहिले उत्पात होने पर शान्ति का विधान

प्राग् ब्रह्मौदनपाकाद् व्रतबन्धानन्तरं यदि चेत् ।
उत्पातानध्ययनोत्पत्तावपि शान्तिपूर्वकं तत्स्यात् ॥५६॥

अन्वयः—व्रतबन्धानन्तरं, ब्रह्मौदनपाकात् प्राक् यदि चेत् प्राक् उत्पातानध्ययनोत्पत्तौ अपि शान्तिपूर्वकं तत् (ब्रह्मौदनं) स्यात् ॥ ५६ ॥

भाषा--विधिपूर्वक यज्ञोपवीत होने के पश्चात् और सायङ्काल में होनेवाले ब्रह्मौदन कर्म के पूर्व यदि अकस्मात् कोई उत्पात विशेष या अनध्याय हो तो वह उस लड़के के पढ़ने में विघ्नकारक होता है ।

इसलिए पहिले उसकी शान्ति करके तब ब्रह्मौदन कर्म करे और यदि यज्ञोपवीत के पहिले अकस्मात् कोई उत्पात हो तो यज्ञोपवीत ही न करे। ब्रह्मौदन कर्म बह्वृचों के यहाँ होता है ॥ ५६ ॥

वेदों के भेद से यज्ञोपवीत के नक्षत्र।

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूल-
पूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये।
ध्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेश-
कर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ॥ ५७ ॥

अन्वयः--शशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु, पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये च ध्रौवेषु अश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे, मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ, वेदक्रमात् व्रतं सत् स्यात् ॥ ५७ ॥

भाषा—मृगशिरा, आर्द्रा, आश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल और तीनों पूर्वा में ऋग्वेदाध्यायियों का; रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी और तीनों उत्तरा में यजुर्वेदाध्यायियों का; अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा और श्रवण नक्षत्र में सामवेदाध्यायियों का तथा मृगशिरा, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा और पुनर्वसु नक्षत्र में अथर्ववेदाध्यायियों का यज्ञोपवीत शुभ होता है ॥ ५७ ॥

मृ.	आ.	श्ले.	ह.	चि.	स्वा.	मू.	पू.फा	पू.षा	पू.भा	ऋ.
रे.	ह.	अ.	मृ.	पु.	पु.	रो.	उ.फा	उ.षा.	उ.भा.	यजु.
अ.	ध.	पु.	ह.	उ.फा	उ.षा.	उ.भा.	आ.	श्र.		साम.
मृ.	रे.	पु.	अ.	ह.	अ.	ध.	पु.			अ. वे

नान्दीमुख श्राद्धके उपरान्त माताके रजस्वला होने का निर्णय।

नांदीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि।
शांत्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्योऽन्यथा न सत् ॥ ५८ ॥

अन्वयः—नान्दीश्राद्धोत्तरं (नांदीश्राद्धकरणानन्तरं) 'संस्कार्यबालकस्य' मातुः पुष्पे (रजोदर्शने) लग्नान्तरे नहि (लग्नान्तरसंभवे) शान्त्या (शान्तिं विधाय) चौलं (चूडाकर्म) व्रतं (व्रतबन्धः) पाणिग्रहः (विवाहः) कार्यः (कर्तव्यः) अन्यथा (शान्तेरकरणे) सत् (शुभं) न 'भवति' ॥ ५८ ॥

भाषा—नांदीमुखश्राद्ध के पश्चात् यदि संस्कारित बालक की माता रजस्वला हो जाय तो बालक से शान्ति कराके मुण्डन, यज्ञोपवीत और विवाह करना चाहिये। यदि श्राद्ध के प्रथम रजस्वला हो तो दूसरे ही लग्न में संस्कार करना उचित है ॥ ५८ ॥

छुरिकाबंधनमुहूर्त।

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे।
छुरिकाबंधनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—विचैत्रव्रतमासादौ (चैत्ररहितमासादौ) विभौमास्ते (भौमास्तरहिते) विभूमिजे (भौमवाररहिते) 'यस्मिन् कस्मिंश्चिद्दिने' नृपाणां (क्षत्रियाणाम्) विवाहतः प्राक् (प्रथमं) छुरिकाबन्धनं (कव्यां छुरिकाबन्धनं) शस्तं (शुभं) 'भवति' ॥ ५९ ॥

भाषा—चैत्र को छोड़ यज्ञोपवीत में कहे अन्य मास, तिथि, वार और नक्षत्रों में मंगल का अस्त और मंगलवार को छोड़ राजाओं को विवाह से प्रथम छुरिकाबन्धन शुभप्रद होता है ॥ ५९ ॥

केशान्त और समावर्तनमुहूर्त्त।

केशांतं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम्।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥६०॥

अन्वयः—षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे (चूड़ाकर्मकथिते दिने) केशान्तं (केशान्तसंज्ञं कर्म) शुभं भवति। व्रतोक्तदिवसादौ (व्रतबन्धकथितदिननक्षत्रे) समावर्तनम् (समावर्तनाख्यं कर्म) शुभं भवति ॥ ६० ॥

भाषा—सोलहवें वर्ष मुण्डन के कहे दिनों में केशान्त कर्म (मूछ-दाढ़ी और बगल का बाल बनवाना) और यज्ञोपवीत में कहे दिनों में में समावर्तन करना उत्तम होता है ॥ ६० ॥

इति श्रीमुहूर्तचिन्तामणौ पंचमं संस्कारप्रकरणं समाप्तम्।

विवाहप्रकरणम् ।

विवाह में लग्नशुद्धि का विचार ।

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता
शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः ।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिंत्यते हि
तन्निघ्नतामुपगताः सुतशीलधर्माः ॥ १ ॥

अन्वयः—शुभशीलयुक्ता भार्या (स्त्री) त्रिवर्गकरणम् (धर्मार्थकामानां प्रधानं साधनम्) तस्याः (भार्यायाः) लग्नवशेन शीलम् (स्वभावः) शुभं (कल्याणमयं) भवति । तस्मात् 'हेतोः' विवाहसमयः (पाणिग्रहणरूपः कालः) परिचिन्त्यते (विचार्यते) हि (इति निश्चयेन) सुतशीलधर्माः तन्निघ्नताम् (तदधीनताम्) उपगताः (प्राप्ताः) ॥ १ ॥

भाषा—शुभशीलयुक्ता स्त्री से धर्म, अर्थ और काम का साधन होता है। जिसका मिलना विवाहकाल के लग्न पर निर्भर है। अतएव विवाह के समय लग्न अवश्य ठीक-ठीक देख लेना चाहिये। क्योंकि पुत्र, शील, धर्म, अर्थ और काम इन पांच वस्तुओं की उत्पत्ति का कारण एक स्त्री ही है ॥१॥

प्रश्नलग्न में विवाह का विचार ।

आदौ संपूज्य रत्नादिभिरथ गणकं वेदयेत्स्वस्थचित्तं
कन्योद्वाहं दिगीशानलहयविशिखे प्रश्नलग्नाद्यदींदुः ।
दृष्टो जीवेन सद्यः परिणयनकरो गोतुलाकर्कटाख्यं
वा स्यात्प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं तद्विध्यात् ॥२॥

अन्वयः—अथ आदौ (विवाहकालनिश्चयेन प्रथमतः) स्वस्थचित्तं (अव्याकुलान्तःकरणम्) गणकं (ज्योतिर्विदम्) रत्नादिभिः 'द्रव्यैः' सम्पूज्य कन्योद्वाहं (सुतापरिणयं) वेदयेत् । यदि इन्दुः (चन्द्रः) दिगीशानलहयविशिखे (दशमैकादशतृतीयसप्तमपञ्चानामन्यतमे स्थाने) 'स्थितः' जीवेन (गुरुणा) दृष्टः सद्यः (झटिति) परिणयनकरः स्यात् । वा (इति पक्षान्तरे) गोतुलाकर्कटाख्यं (वृषतुलाकर्काणामन्यतमं) प्रश्नस्य लग्नशुभखचरयुतालोकितं (शुभग्रहैर्युतं तैर्दृष्टं वा) 'भवेच्चेत्तदा' तत् (परिणयनम्) विदध्यात् ॥ २ ॥

भाषा—प्रथम स्वस्थचित्त हो नाना प्रकार के रत्नों से गणक (ज्योतिषी) की पूजाकर कन्या के विवाह का प्रश्न पूछना चाहिये। प्रश्नलग्न से दसवें, तीसरे, सातवें और पांचवें स्थान में चन्द्रमा हो तथा वृहस्पति की दृष्टि हो तो शीघ्र तथा वृष, तुला, कर्क में से कोई प्रश्नलग्न हो और शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो व्याह करना उचित है ॥ २ ॥

द्वितीय प्रकार।

विषमभांशगतौ शशिभार्गवौ तनुगृहं बलिनौ यदि पश्यतः।
रचयतो वरलाभमिमौ यदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥ ३ ॥

अन्वयः—बलिनौ शशिभार्गवौ विषमभांशगतौ (विषमनवांशस्थितौ) तनुगृहं (लग्नस्थानं) यदि पश्यतः 'तदा' इमौ (शशिभार्गवौ) वरलाभं रचयतः। युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ (कन्यादातारौ स्तः) ॥ ३ ॥

भाषा—चन्द्रमा मेषादि विषम राशि में स्थित हो तथा शुक्र बली हो और लग्न में दृष्टि हो तो कन्या को वरलाभ और यदि वृष आदि सम राशियों पर स्थित हो तो वर को शीघ्र कन्या लाभ होता है ॥ ३ ॥

वैधव्ययोग।

षष्ठाष्टस्थः प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुर्लग्ने क्रूरः सप्तमे वा कुजः स्यात्।
मूर्त्ताविन्दुः सप्तमे तस्य भौमो रंडा सा स्यादष्टसंवत्सरेण ॥ ४ ॥

अन्वयः—प्रश्नलग्नात् यदि इन्दुः (चन्द्रः) षष्ठाष्टस्थः (षष्ठाष्टमस्थानस्थितः) 'स्यात्' लग्ने सप्तमे वा (स्थाने) क्रूरः (क्रूरग्रहः) कुजः (भौमो वा स्यात्) 'तदा' सा अष्टसंवत्सरेण रण्डा (विधवा) स्यात्। अथवा मूर्तौ (लग्ने) इन्दुः तस्य सप्तमे भौमो वा भवेत्तदा सा अष्टसम्वत्सरेण रण्डा स्यात् ॥ ४ ॥

भाषा—प्रश्नलग्न से छठें या आठवें स्थान में चन्द्रमा, लग्न में क्रूर ग्रह और सातवें स्थान में मंगल हो या लग्न में चन्द्रमा हो अथवा चन्द्रमा से सातवें स्थान में मंगल हो तो व्याह से आठवें दिन कन्या विधवा हो जाती है ॥ ४ ॥

कुलटा तथा मृतवत्सा योग ।

प्रश्नतनोर्यदि पापनभोगः पंचमगो रिपुदृष्टशरीरः ।
नीचगतश्च तदा खलु कन्या सा कुलटा त्वथवा मृतवत्सा ॥ ५ ॥

अन्वयः–प्रश्नतनोः (जन्मलग्नात्) यदि पापनभोगः (पापग्रहः) पञ्चमगः (पञ्चमस्थानस्थितः) रिपुदृष्टशरीरः 'सन्' नीचगतश्च 'स्यात्तदा' सा (कन्या) खलु (इति निश्चयेन) कुलटा अथवा मृतवत्सा स्यात् ॥ ५ ॥

भाषा–यदि पापग्रह प्रश्नलग्न से दसवें वा पांचवें स्थान में और शत्रु ग्रहकी दृष्टि नीच राशि की हो तो कन्या कुलटा (व्यभिचारिणी) हो जाती है और सन्तान कभी जीवित नहीं रहती ॥ ५ ॥

विवाहभङ्गयोग ।

यदि भवति सितातिरिक्तपक्षे
तनुगृहतः समराशिगः शशांकः ।
अशुभखेचरवीक्षितोऽरिरंध्रे
भवति विवाहविनाशकारकोऽयम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—सितातिरिक्तपक्षे (कृष्णपक्षे) यदि शशांकः (चन्द्रः) तनुगृहतः (लग्नस्थानात्) समराशिगः (वृषकर्कादिषु गतः) 'सन्' अशुभखचरवीक्षितः (पापग्रहावलोकितः) अरिरन्ध्रे (षष्ठेऽष्टमे वा) 'स्थितः' अयम् [योगः] विवाहविनाशकारकः भवति ॥ ६ ॥

भाषा–कृष्णपक्ष में यदि चन्द्रमा समराशि में और प्रश्नलग्न से छठें वा आठवें स्थान में हो और पापग्रह की दृष्टि हो तो विवाहभंग करनेवाला योग होता है ॥ ६ ॥

बालवैधव्ययोग का परिहार ।

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवायोगं विधाय व्रतं
सावित्र्या उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः ।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवेद्दोषोऽपुनर्भूभवः ॥ ७ ॥

अन्वय—जन्मोत्थं (जन्मलग्नभवं) बालविधवायोगं विलोक्य सुतया कन्यया (रहः एकान्ते) साविञ्या 'व्रतम्' उत (अथवा) पैप्पलं व्रतम् विधाय पश्चादिमां (कन्यां वराय) दद्यात् । अथवा अच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः (विष्णुमूर्त्या, पिप्पलेन, घटेन वा) रहः सल्लग्ने विवाहं कृत्वा 'पश्चात्' स्फुटं (लोकप्रसिद्धं) चिरजीविने (चिरायुषे) 'वराय' तां (कन्यां) दद्यात् । अत्र (विष्णुमूर्तिपिप्पलघटैः विवाहे) पुनर्भूभवः दोषो न भवेत् ॥ ७ ॥

भाषा—जन्म ही से बालवैधव्य योग वाली कन्या को सावित्री वा पीपल की पूजा का व्रत कराके कन्यादान करना चाहिये । उत्तम लग्न में श्रीमन्नारायण की सोने की प्रतिमा बना, घड़े में जलभर कर पीपल के नीचे स्थापन करे । तब उसी प्रतिमा के साथ उस कन्या का विवाहकर पुनः चिरंजीवी वर को प्रदान करे तो बालवैधव्य योग का दोष दूर हो जाता है ॥ ७ ॥

प्रश्न के शुभाशुभ लक्षण ।

प्रश्नलग्नक्षणे यादृशापत्ययुक्
स्वेच्छया कामिनी तत्र चेदाव्रजेत् ।
कन्यका वा सुतो वा तदा पण्डितै-
स्तादृशापत्यमस्या विनिर्दिश्यते ॥ ८ ॥

अन्वयः—प्रश्नलग्नक्षणे 'ज्यौतिर्वित्समीपे' स्वेच्छया 'नतु केनचिदाहूता' यादृशापत्ययुक् (यादृक्सन्तानसंगता) कामिनी (प्रमदा) चेत् आव्रजेत (आगच्छेत्) कन्यका वा सुतो वा 'चेत्' तदा पण्डितैः (विद्वद्भिः) अस्याः (कन्यायाः) तादृशापत्यं विनिर्दिश्यते (कथ्यते) ॥ ८ ॥

भाषा—प्रश्नकाल में बिना बुलाये यदि संततिवाली कोई स्त्री आ जाय तो पंडित लोग उसी के अनुरूप शुभ और अशुभ फलों को कहें ॥ ८ ॥

पुनः शुभाशुभ लक्षण ।

शंखभेरीविपंचीरवैर्मंगलं जायते वैपरीत्यं तदा लक्षयेत् ।
वायसो वा खरः श्वा शृगालोऽपि वा प्रश्नलग्नक्षणे रौति नादं यदि ॥ ९ ॥

अन्वयः—प्रश्नलग्नक्षणे शंखभेरीविपञ्चीरवैः एतेषां शब्दैः मङ्गलं जायते। वायसः (काकः) खरः (गर्दभः) श्वा (कुक्कुरः) शृगालोऽपि च यदि नादं (शब्दं) रौति 'तदा' वैपरीत्यं (अमंगलम्) लक्षयेत् ॥ ९ ॥

भाषा—प्रश्नकाल में यदि शंख-भेरी आदि मङ्गलमय बाजों का शब्द हो तो शुभ और कौवे, गदहे आदि की अशुभसूचक बोली सुन पड़े तो अशुभ जानना चाहिये ॥ ९ ॥

वाग्दानमुहूर्त।

विश्वस्वातौ वैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः।
वस्त्रालंकारादिसमेतैःफलपुष्पैः संतोष्याऽदौतस्मादनु कन्यावरणं हि१०

अन्वयः—विश्वस्वातौ वैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः (एभिर्नक्षत्रैरुपलक्षिते काले) वस्त्रालङ्कारादिसमेतैः फलपुष्पैः आदौ (प्रथमं) कन्यां सन्तोष्य (तोषयित्वा) अनु (पश्चात्) हि (इति निश्चयेन) कन्यावरणं स्यात् ॥ १० ॥

भाषा—उत्तराषाढ़, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका और विवाह के नक्षत्रों में कन्या को वस्त्र, आभूषण और सामग्री संयुक्त करके वरण करना चाहिये ॥ १० ॥

किसको वरण करना चाहिये ?

धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिःसंयुतः।
वरवृत्तिर्वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत् ॥ ११ ॥

अन्वयः—धरणिदेवः (विप्रः) अथवा कन्यकासोदरः (कन्यायाः सहोदर भ्राता) शुभदिने (भद्राव्यतीपातरहितेऽह्नि) गीतवाद्यादिभिः संयुतः 'सन्' वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैः (एभिर्नक्षत्रैरन्विते काले) वरवृत्तिं आचरेत् (कुर्यात्) ॥ ११ ॥

भाषा—ब्राह्मण (पुरोहित) अथवा कन्या का छोटा भाई शुभ दिनों में गीत और बाजाओं से संयुक्त यज्ञोपवीत, आभूषण आदि वर को पहिनाकर तीनों उत्तरा और कृत्तिका नक्षत्र से युक्त उक्त मुहूर्त में वाक्दान करे ॥ ११ ॥

कन्या के विवाह का समय और ग्रहशुद्धिविचार।

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात्।
रविशुद्धिवशाच्छुभो नराणामुभयोश्चंद्रविशुद्धितो विवाहः ॥१२॥

अन्वयः-षडब्दकोपरिष्टात् (षड्वर्षातिक्रमानन्तरं) समवर्षेषु गुरुशुद्धिवशेन कन्यादानं विवाहः शुभो 'भवति'। रविशुद्धिवशात् नराणाम् (पुरुषाणाम्) विवाहः शुभः स्यात्। रविचन्द्रविशुद्धितः उभयोः (वरकन्ययोः) विवाहः शुभः स्यात् ॥१२॥

भाषा--छ वर्ष के उपरान्त बृहस्पति के बल में कन्या का विवाह तथा रवि के बल में वर का करना चाहिये, पर कन्या और वर के चन्द्रमा का बल देख लेना भी अत्यन्त आवश्यक है ॥ १२ ॥

विवाह में मासविचार।

मिथुनकुंभमृगालिवृषाजगे मिथुनगेपि रवौ त्रिलवे शुचेः।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिकपौषमधुष्वपि॥१३॥

अन्वयः—रवौ मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे (मिथुनकुम्भकरवृश्चिकवृषमेषराशिस्थिते) मिथुनगेऽपि रवौ शुचेः (आषाढ़स्य) त्रिलवे (तृतीयांशे) करपीडनं (पाणिग्रहणम्) भवति। अलिमृगाजगते (वृश्चिकमकरमेषस्थिते) सूर्ये कार्तिकपौषमधुषु अपि (कार्तिकपौषचैत्रेष्वपि) 'मासेषु' करपीडनं (विवाहो भवति) ॥१३॥

भाषा--मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष, मेष और मिथुन पर सूर्य के रहते आषाढ़ की प्रतिपदा से दशमी तक विवाह शुभ होता है। सूर्य्य वृश्चिक के हों तो कार्तिक में, मकर के हों तो पौष में और मेष के हों तो चैत्र में भी विवाह शुभ होता है ॥ १३ ॥

जन्ममासादि युक्त निषेध विधान।

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौ करग्रहः।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥१४॥

अन्वयः-आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोः जन्ममासभतिथौ (जन्ममासजन्मनक्षत्रजन्मतिथौ) करग्रहः (विवाहः) नोचितः (निषिद्धः)। द्वितीयजनुषोः आद्यगर्भयोः 'सुतकन्ययोः' करग्रहः सुतप्रदः विबुधैः (विद्वद्भिः) प्रशस्यते (समीचीनमुच्यते) ॥ १४ ॥

भाषा--प्रथम गर्भ के पुत्र और कन्या का विवाह जन्ममास, जन्मनक्षत्र और जन्म तिथियों में अशुभ है, पर द्वितीय गर्भ की कन्या और पुत्र का विवाह पुत्रदायक होता है ॥ १४ ॥

त्रिज्येष्ठनिर्णय ।

ज्येष्ठं द्वंद्वं मध्यमं संप्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि ।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोज्झ्य चाहुर्नैवान्योन्यं ज्येष्ठयोः स्याद्विवाहः ॥१५॥

अन्वयः—ज्येष्ठद्वन्द्वं (सुतकन्ययोर्ज्येष्ठत्वे सति) 'करग्रहणम्' मध्यमं सम्प्रदिष्टम् । त्रिज्येष्ठं (पुत्रो ज्येष्ठः कन्या ज्येष्ठा ज्येष्ठमासः एतत्त्रयं) चेत् कदापि 'पाणिपीडनम्' न युक्तम् । केचित् (विद्वांसः) वह्निगं (कृत्तिकास्थं) सूर्यं प्रोज्झ्य (परित्यज्य) 'पाणिपीडनम्' आहुः (कथयन्ति) । अन्योन्यं ज्येष्ठयोः (ज्येष्ठसुतस्य ज्येष्ठया कन्यया) विवाहः नैव स्यात् ॥ १५ ॥

भाषा--ज्येष्ठ मास, ज्येष्ठ पुत्र और ज्येष्ठ कन्या भी हो तो विवाह मध्यम कहलाता है । यह कभी करने योग्य नहीं है । किसी किसी आचार्य का मत है कि ज्येष्ठ में यदि कृत्तिका के सूर्य हों तो शुभ है, पर तीनों ज्येष्ठ वाला विवाह शुभ नहीं होता ॥ १५ ॥

विवाहादि शुभकार्यसे द्वितीयविवाहका नियम ।

सुतपरिणयात्षण्मासांतःसुताकरपीडनं
न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम् ।
न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
न सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्धे शुभे न पितृक्रिया ॥१६॥

अन्वयः—निजकुले (स्ववंशे) सुतपरिणयात् षण्मासान्तः (पुत्रविवाहात् षण्मासं यावत्) सुताकरपीडनम् (कन्यकोद्वाहः) न 'स्यात्' । वा तद्वत् मण्डनादपि मुण्डनं न कार्यम् । सहजयोः (सोदरयोः भ्रात्रोः) सहोदरकन्यके न देये । सहजसुतोद्वाहो (सोदरसुतकन्यकोद्वाहो) अब्दार्धे (षण्मासाभ्यन्तरे) न कार्यः । शुभे (विवाहादिमङ्गलकार्ये) पितृक्रिया (श्राद्धादिकम्) न कार्या ॥ १६ ॥

भाषा—पुत्र के विवाह के पश्चात् छः मास पर्यन्त कन्या का विवाह करना अशुभ है तथा यज्ञोपवीत और मुंडन आदि कर्म पुत्र वा कन्या

के विवाह के पश्चात् छः महीने तक अशुभ है, पर वर्ष बदल जाय तो शुभ होता है। माता के दो पुत्र तथा एक माता की दो कन्याओं का विवाह नहीं होता। पुत्र के विवाह के बाद दूसरे सहोदर पुत्रका विवाह छः महीने के अन्दर नहीं करना चाहिये। विवाह के पश्चात् छः महीने तक पितृकार्य (श्राद्ध) इत्यादिक अशुभ है ॥ १६ ॥

विवाह निश्चय के वाद त्रिपुरुष में मृत्यु का निर्धारण।

वध्वा वरस्यापि कुले त्रिपूरुषे नाशं व्रजेत्कश्चन निश्चयोत्तरम् ।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते शांत्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥१७॥

अन्वयः—निश्चयोत्तरम् (वाग्दानानन्तरम्) यदि वध्वाः वरस्यापि त्रिपूरुषे (पुरुषत्रयमध्ये) कश्चन (सपिंडः पुरुषः) नाशं व्रजेत् म्रियात् 'चेत्' तत्र मासोत्तरं (मरणदिवसात् त्रिंशद्दिनानन्तरं) विवाह इष्यते। अथवा सूतकनिर्गमे शान्त्या विवाहः परैः (अन्याचार्यैः) इष्यते ॥ १७ ॥

भाषा--विवाह निश्चय हो जाने पर यदि तीन पीढ़ी के भीतर के किसी पुरुष की मृत्यु हो जाय तो एक महीने तक विवाह नहीं करना चाहिये। किसी किसी आचार्य का मत है कि शान्ति करके अथवा सूतक विताकर विवाह कर सकते हैं ॥ १७ ॥

मुंडनादिकर्मनिर्णय।

चूडाव्रतं चापि विवाहतो व्रताच्चूडा च नेष्टा पुरुषत्रयांतरे ।
वधूप्रवेशाच्च सुताविनिर्गमः षण्मासतो वाब्दविभेदतः शुभः ॥१८॥

अन्वयः—पुरुषत्रयान्तरे विवाहतः 'षण्मासाभ्यन्तरे' चूडाव्रतं चापि नेष्टं। व्रतात् (व्रतबन्धात्) चूडा (चूडाकर्म) च नेष्टा। वधूप्रवेशात् 'षणमासाभ्यन्तरे' सुताविनिर्गमः नेष्टः। अब्दविभेदतः (सम्वत्सरपरिवर्तनात्) 'षण्मासाभ्यन्तरेऽपि' शुभः (कल्याणकरः) स्यात् ॥ १८ ॥

भाषा--विवाह के पश्चात् छः महीने तक मुण्डन तथा यज्ञोपवीत और यज्ञोपवीत से छः महीने तक तीन पीढ़ी के भीतर मुण्डन अशुभ है। वधूप्रवेश से छः मास तक कन्याका विवाह करना मना है, पर वर्ष-भेद से शुभ माना गया है ॥ १८ ॥

नक्षत्र वश शुभाशुभ फल ।

श्वश्रूविनाशमहिजौ सुतरां विधत्तः
कन्यासुतौ निऋतिजौ श्वशुरं हतश्च ।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं
शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥१९॥

अन्वयः—अहिजौ (आश्लेषानक्षत्रोत्पन्नौ) कन्यासुतौ,श्वश्रूविनाशं (साक्षाद्वरमातुः कन्यायाः मातुर्वा विनाशं, विधत्तः (कुरुतः) तथा निऋतिजौ (मूलनक्षत्रोत्पन्नौ कन्यासुतौ) श्वशुरं (कन्याया वरस्य वा पितरं) हतः (नाशयतः) । ज्येष्ठाभजाततनया (ज्येष्ठानक्षत्रोत्पन्ना पुत्री) स्वधवाग्रजं (भर्तृज्येष्ठभ्रातरं) हन्ति (नाशयति) । शक्राग्निजा (विशाखानक्षत्रोत्पन्ना पुत्री) देवरनाशकर्त्री (कनिष्ठभ्रातृहन्त्री) 'भवति' ॥ १९ ॥

भाषा—कन्या और वरका जन्म यदि अश्लेषा नक्षत्र का हो तो सासु को और मूल नक्षत्र का हो तो स्वसुर का नाश करता है । ज्येष्ठा नक्षत्र की जन्मी कन्या जेष्ठ (पति के बड़े) भाई का और विशाखा की जन्मी कन्या देवर का नाश करती है ॥१९॥

उक्त दोष का अपवाद ।

द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा ।
मूलांत्यपादसार्पाद्यपादजाते तयोः शुभम् ॥ २० ॥

अन्वयः—द्वीशाद्यपादत्रयजा (विशाखायाश्चरणत्रये संजाता) कन्या, देवरसौख्यदा (भर्तुः कनिष्ठभ्रातृसुखदायिनी) 'भवति' । मूलान्त्यपादसार्पाद्यपादजाते (मूलचतुर्थचरणोत्पन्नौ कन्यासुतौ श्वशुरसौख्यदौ, आश्लेषाप्रथमचरणोत्पन्नौ श्वश्रूसौख्यदौ) तयोः (श्वश्रूश्वशुरयोः) शुभे (कल्याणकारिणौ) 'भवतः' ॥२०॥

भाषा—विशाखा के तीन चरणों में जन्मी कन्या देवर को, मूल के चौथे चरण की कन्या पति और श्वसुर को और आश्लेषा के प्रथम चरण की पुत्री ससुर और सास को सुख देती है ॥२०॥

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥ २१ ॥

अन्वयः–वर्णो, वश्यं तथा तारा, च 'पुनः'योनिः,ग्रहमैत्रकम् ,गणमैत्रं,भकूटम् एते गुणाधिकाः (वर्णादिमैत्र्यां सत्यां क्रमशः गुणाधिकाः एकैकगुणाधिका भवन्ति)

भाषा—कन्या और वर की जन्मपत्री से मिलान करे। वर्ण १ गुण, वश्य २ गुण, तारा ३ गुण, योनि ४ गुण, ग्रहमैत्री ५ गुण, गणमैत्री ६ गुण, भकूट ७ गुण और नाड़ी ८ गुण विवाह में विचारने योग्य है ॥२१॥

प्रथमवर्णकूट विचार।

द्विजा झषालिकर्कटास्ततो नृपा विशोंऽघ्रिजाः।
वरस्य वर्णतोधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥ २२ ॥

अन्वयः—झषालिकर्कटाः (मीनवृश्चिककर्काः) द्विजाः (ब्राह्मणाः) ततः (अनन्तरमन्ये मेषसिंहधनराशयो) नृपाः (क्षत्रियाः, वृषकन्यामकराः) विशः (वैश्याः, मिथुनतुलाकुम्भाः) अंघ्रिजाः (शूद्राः) 'तत्र' वरस्य वर्णतः अधिका (श्रेष्ठा) वधूः बुधैः (विद्वद्भिः) न शस्यते ॥ २२ ॥

भाषा—मीन, वृश्चिक और कर्क राशि ब्राह्मण वर्ण, मेष, सिंह और धनराशि क्षत्रिय वर्ण, वृष, कन्या और मकर राशि वैश्य वर्ण और मिथुन तुला कुम्भ राशि शूद्र वर्ण होता है। वर से कन्या यदि श्रेष्ठ वर्ण की हो तो अशुभ है ॥ २२ ॥

वर का गुण-विचार।

हित्वा मृगेन्द्रं नरराशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजाश्च भक्ष्याः।
सर्वेपि सिंहस्य वशे विनालिं ज्ञेयं नाराणां व्यवहारतोऽन्यत् ॥२३॥

अन्वयः—मृगेन्द्रं (सिंहं) हित्वा (परित्यज्य) सर्वे (राशयः) नरराशि-वश्या 'भवन्ति' तथा एषां (नरराशीनां) जलजाः (मकरकुम्भकर्काः) भक्ष्याः 'भवन्ति' तु (पुनः) सिंहस्य अलिं (वृश्चिकं) विना सर्वेऽपि वश्याः 'भवन्ति' अन्यत् अनुक्तम् नराणां व्यवहारतः ज्ञेयम् ॥ २३ ॥

भाषा--सिंह को छोड़ कर सब राशि नरराशियों के वश्य तथा जलचर भक्ष्य हैं। इसी प्रकार वृश्चिक को छोड़ सब सिंह के वश्य हैं। चौपाये और थलचरों का वश्यावश्य व्यवहार से जानना चाहिये ॥२३॥

चतुष्पद	२	॥	१	०	२
मनुष्य	२	२	०	०	०
जलचर	१	०	२	२	२
वनचर	०	०	२	२	०
कीट	१	०	१	०	२

ताराकूटविचार ।

कन्यक्षोद्वरभं यावत्कन्याभं वरभादपि ।
गणयेन्नवभिः शेषत्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ॥ २४ ॥

अन्वयः—कन्यर्क्षात् (कन्यानक्षत्रमारभ्य) वरभं यावत् (वरनक्षत्रपर्यन्तं) गणयेत् । वरभादपि (वरनक्षत्रमारभ्य) कन्याभं (कन्यानक्षत्रपर्यन्तं) गणयेत् । नवहृच्छेपे त्रिष्वद्रिभम् (त्रिपञ्चसप्तभं) असत् (अशुभं) स्मृतम् ॥ २४ ॥

भाषा—कन्या के जन्मनक्षत्र से वर के जन्मनक्षत्र तक और वर के जन्मनक्षत्र से कन्या के जन्मनक्षत्र तक गिने और शेष अंक में नौ का भाग दे । यदि तीन पांच व सात बचे तो अशुभ जानना चाहिये ॥ २४ ॥

योनिकूटविचार ।

अश्विन्यंबुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः
सिंहो वस्वजपाद्भयोः समुदितो याम्यांत्ययो कुंजरः ।
मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः
स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैव नकुलश्चन्द्राब्जयोन्यो हरिः ॥२५॥
ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरंग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा
मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघा योन्योस्तथैवोंदुरः ।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णवुध्न्यर्क्षयो-
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥ २६ ॥

अन्वयः—अश्विन्यम्बुपयोः (अश्विनीशततारयोः) हयः (अश्वयोनिः) निगदितः (प्रोक्तः)। स्वात्यर्कयोः (स्वातीहस्तयोः) कासरः (महिषयोनिः) 'निगदितः' । विश्वजपाद्भयोः (धनिष्ठापूर्वाभाद्रपदयोः) सिंहः (सिंहयोनिः) समुदितः (कथितः) । याम्यान्त्ययोः (भरणीरेवत्योः) कुञ्जरः (हस्तियोनिः) 'समुदितः' । देवपुरोहितानलभयोः (पुष्यकृत्तिकयोः) मेषः (मेषयोनिः) 'समुदितः' । कर्णाम्बुनोः (श्रवणपूर्वाषाढ़योः) वानरः 'समुदितः' । वैश्वाभिजितोः (उत्तराषाढाभिजिन्नक्षत्रयोः) नकुलः (नकुलयोनिः) तथैव चन्द्राब्जयोन्योः (मृगशिररोहिण्योः) अहिः (सर्पःयोनिः) 'समुदितः ॥ २५ ॥

अन्वयः—ज्येष्ठामैत्रभयोः (ज्येष्ठानुराधयोः) कुरंगः (मृगयोनिः) उदितः

(प्रोक्तः) मूलार्द्रयोः श्वा (कुक्कुरयोनिः) 'उदितः'। दितिसार्पयोः (पुनर्वसुश्लेषानक्षत्रयोः) मार्जारः 'निगदितः'। अथ मघायोन्योः (मघापूर्वफाल्गुन्योः) उन्दुरः (मूषकयोनिः) द्वीशभचित्रयोः (विशाखाचित्रयोः) व्याघ्रः (व्याघ्रयोनिः) अपिच अर्यम्णबुध्न्यर्क्षयोः (उत्तराफाल्गुनीउत्तराभाद्रपदयोः) गौः (गौर्योनिः) 'उदितः'। पादगयोः (एकस्मिन् चरणे गतयोः उक्तनक्षत्रयोः परस्परं) महावैरं 'स्यात्'। तत् त्यजेत्। अत्रातिवैरवैरोदासीनमैत्रातिमैत्रक्रमेण गुणविभागः। गोव्याघ्रादीनामतिवैरं तत्र गुणाभावः। शुनकमार्जारादीनां वैरं तत्रैको गुणः। अश्वमेषादीनामौदास्यं तत्र गुणद्वयम्। गोमेषादीनां मैत्रे तत्र गुणत्रयम्। एकयोनौ अतिमैत्रं तत्र गुणचतुष्टयम् ॥ २६ ॥

भाषा—अश्विनी और शतभिषा की अश्व, स्वाती और हस्त की भैंसा, धनिष्ठा और पूर्वभाद्रपद की सिंह, भरणी और रेवती की हस्ती, पुष्य और कृत्तिका की मेढ़ा, श्रवण और पूर्वाषाढ की वानर, उत्तराषाढ और अभिजित् की नकुल, मृगशिरा और रोहिणी की सर्प, ज्येष्ठा और अनुराधा की मृग, मूल और आर्द्रा की कुत्ता, पुनर्वसु और आश्लेषा की बिलाव, मघा और पूर्वफाल्गुनी की मूषक, विशाखा और चित्रा की व्याघ्र और उत्तरा फाल्गुनी तथा उत्तरा भाद्रपद की गौ योनि है। एक एक पाद में सब योनि का महावैर होता है जिसे योनिमेल में त्याग देना चाहिये ॥ २५॥२६ ॥

ग्रहमैत्रीविचार।

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनःशुक्रार्कजौ वैरिणौ
सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्या द्विषट्।
शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चंद्रेज्यसूर्या बुधः
शत्रुः शुक्रशनी समौ च शशभृत्सूनोः सिताहस्करौ ॥२७॥
मित्रे चास्य रिपुः शशी गुरुशनिक्ष्माजाः समा गीष्पतेः
मित्राण्यर्ककुजेंदवो बुधसितौ शत्रू समः सूर्यजः।
मित्रे सौम्यशनी कवेः शशिरवी शत्रू कुजेज्यौ समौ
मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशिरविक्ष्माजा द्विषोऽन्यः समः ॥२८॥

अन्वयः—द्युमणेः (सूर्यस्य) कुजेज्यशशिनः (भौमगुरुचन्द्राः) मित्राणि

शुक्रार्कजौ (शुक्रशनी) वैरिणौ 'स्याताम्' । अस्य (सूर्यस्य) सौम्यः (बुधः) समः । विधोः (चन्द्रस्य) बुधरवी मित्रे च (पुनः) अस्य (चन्द्रस्य) द्विपत् न (शत्रुर्नास्ति) । शेषाः (मंगलगुरुशुक्रशनयः) अस्य समा एव । कुजस्य (भौमस्य) चन्द्रेज्यसूर्या (चन्द्रगुरुसूर्याः) सुहृदः (मित्राणि) बुधः शत्रुः । शुक्रशनी समौ । शशभृत्सूनोः (बुधस्य) सिताहस्करौ (शुक्रसूर्यौ ; मित्रे । अस्य (बुधस्य) शशी (चन्द्रः) रिपुः (शत्रुः) । गुरुशनिक्ष्माजाः (बृहस्पतिशनिभौमाः) समाः । गीष्पतेः (गुरोः) अर्ककुजेन्दवो (सूर्यभौमशशिनः) मित्राणि । बुधसितौ (बुधशुक्रौ) शत्रू । सूर्यजः (शनिः) समः । कवेः (शुक्रस्य) सौम्यशनी (बुधशनी) मित्रे । शशिरवी शत्रू । कुजेज्यौ (मंगलदेवगुरू) समौ । शनेः शुक्रबुधौ मित्रे शशिरविक्ष्माजा द्विपः (शत्रवः) । अन्यः (गुरुः) समः ॥ २७ ॥ २८ ॥

भाषा—सूर्य के मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, शुक्र और शनि शत्रु तथा बुध मित्र हैं। चन्द्रमा के बुध, सूर्य मित्र तथा शत्रु कोई नहीं है। मंगल के चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र तथा शनि सम हैं। बुध के शुक्र और रवि मित्र, चंद्रमा शत्रु और बृहस्पति, शनि एवं मंगल सम हैं। बृहस्पति के सूर्य मंगल और चन्द्रमा मित्र, बुध-शुक्र शत्रु तथा शनिश्चर सम हैं। शुक्र के बुध और शनि मित्र, चंद्रमा और सूर्य शत्रु तथा मंगल और बृहस्पति सम हैं। शनैश्चर के शुक्र और बुध मित्र, चंद्रमा-रवि और मंगल शत्रु और बुध सम है ॥ २७ ॥ २८ ॥

गणकूटविचार।

ग्रहाः	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मित्र	चं.मं.गु.	र बु.	गु.र.चं.	र. शु.	र.च.मं.	बु. श	बु. शु.
सम	बुध	मं,गु.शु.श.	शु. श.	मं.गु श.	श.	मं. गु.	गु.
शत्रु	शु.श.	❀	बु.	चं.	बु.	र.चं	र.मंचं.

रक्षोनरामरगणाः क्रमतो मघाहि-

वस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः।

पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि
मैत्रादितींदुहरिपौष्णमरुल्लघूनि ॥ २९ ॥
निजनिजगणमध्ये प्रीतिरत्युत्तमा स्या-
दमरमनुजयोः सा मध्यमा संप्रदिष्टा ।
असुरमनुजयोश्चेन्मृत्युरेव प्रदिष्टो
दनुजविबुधयोः स्याद्वैरमेकांततोऽत्र॥ ३० ॥

अन्वयः—एते क्रमतः रक्षोनरामरगणाः (राक्षस-मनुष्य-देवगणाः) 'भवन्ति' 'यथा'—मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधा (मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा, विशाखा, एतानि नक्षत्राणि रक्षोगणे कथितानि) पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि (एतानि नरगणमध्ये कथितानि) मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्घूनि (एतानि देवगणोक्तनक्षत्राणि) ॥ २९ ॥

अन्वयः—निजनिजगणमध्ये (स्वस्वगणे विद्यमानयोः वरकन्ययोः) अत्युत्तमा प्रीतिः स्यात् । सा (प्रीतिः) असुरमनुजयोः (देवमनुष्यगणयोः) मध्यमा सम्प्रदिष्टा (उक्ता)। असुरमनुजयोः (राक्षसमनुष्यगणयोः) मृत्युरेव सम्प्रदिष्टा । दनुजविबुधयोः (दैत्यदेवयोः) 'वरकन्ययोः' एकान्ततः अत्र वैरं 'स्यात्' ॥ ३० ॥

भाषा—मघा, आश्लेपा, धनिष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा और विशाखा, नक्षत्र का राक्षस गण, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, आर्द्रा नक्षत्र का मनुष्य गण अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती, अश्विनी, पुष्य और हस्त नक्षत्र का देवतागण संज्ञा है ॥२९॥ यदि एक ही गण के स्त्री पुरुष हों तो अति उत्तम प्रीति होती है। स्त्री देवतागण और पुरुष मनुष्यगण हो तो मध्यम प्रीति होती है। यदि एक असुरगण दूसरा मनुष्य गण हो तो मृत्यु होती है और दैत्य तथा देवतागण का विवाह हो तो महावैर होता है। जहां वैरभाव हो वहां गुण नहीं होता जहां एक ही गण हो वहाँ पर छः गुण होते हैं ॥३०॥

		वर		
		दे०	म०	रा०
वधू	दे०	६	५	१
	म०	६	६	०
	रा०	१	०	६

राशिकूटविचार ।

मृत्युः षट्काष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥ ३१ ॥

अन्वयः—षट्काष्टके (स्त्रीपुरुषयोः षष्ठाष्टमराशित्वे सति) मृत्युः 'ज्ञेयः' । नवात्मजे (नवमे पंचमे च) अपत्यहानिः । द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं (दारिद्र्यं स्यात्) अन्यत्र (तृतीयैकादशे चतुर्थदशमे समसप्तमे वा) द्वयोः (वरकन्ययोः) सौख्यकृत् (कल्याणकारि भवति) ॥ ३१ ॥

भाषा—वर-कन्या की छठीं वा आठवीं राशि हो तो मृत्यु जानना और नवीं राशि हो तो सन्तान नष्ट हो दूसरी तथा बारहवीं राशि हो तो दरिद्रता हो और तीसरी, ग्यारहवीं वा चौथी हो तो सुखदायक विवाह होता है ॥३१॥

दुष्टभकूट का परिहार ।

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो-
ऽथो राशीश्वरसौहृदेपि गदितो नाड्यर्क्षशुद्धिर्यदा ।
अन्यर्क्षेशपयोर्वलित्वसखिते नाड्यर्क्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशता भावैर्निरुक्तो बुधैः ॥ ३२ ॥

अन्वयः—'स्त्रीपुरुषयोःद्वयोः' एकाधिपत्ये (एकस्वामिनि सति) दुष्टभकूटके [षडष्टकादावपि] प्रोक्तः परिणयः (विवाहः) शुभो गदितः । अन्यर्क्षेशपयोः वलित्वसखिते 'चेत् स्याताम्' तदा नाड्यर्क्षशुद्धौ तथा ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावे राशिवश्यत्वे च सति दुष्टभकूटकेपि बुधैः परिणयः निरुक्तः ॥ ३२ ॥

भाषा—यदि स्त्री-पुरुष की राशि के एक स्वामी हों तो दुष्ट भकूट (अर्थात् छठीं आठवीं) राशि में भी विवाह शुभ है और नक्षत्रों की नाड़ी शुद्धि हो तो भी दुष्टभकूट में विवाह शुभ होता है । आपस में षडष्टक राशियों में हो और राशियों के स्वामियों में मित्रता न हो और नवांशक के स्वामियों में मित्रता हो तो दुष्ट भकूट शुभ होता है । नक्षत्रों की नाड़ी शुद्ध हो और मित्रता में राशिवश्य का अभाव हो अर्थात् षडष्टक हो और राशिस्वामियों की शुद्धता हो तो भी पण्डितों ने विवाह शुभ कहा है ॥ ३२ ॥

गणकूटादि दोषों का परिहार।

मैत्र्यांराशिस्वामिनोरंशनाथद्वंद्वस्यापिस्याद्गणानां न दोषः।
खेटारित्वं नाशयेत्सद्भकूटं खेटप्रीतिश्चापि दुष्टं भकूटम् ॥ ३३ ॥

अन्वयः——राशिस्वामिनोः अंशनाथद्वंद्वस्यापि मैत्र्यां सत्यां गणानां दोषो न 'भवति'। सद्भकूटम् खेटारित्वम् नाशयेत्। खेटप्रीतिश्चापि दुष्टं भकूटम् नाशयेत् ॥ ३६ ॥

भाषा——स्त्री-पुरुष की राशियों के स्वामियों की मित्रता हो तथा राशिस्वामी से और नवमांश के स्वामी से मित्रता हो तो खेटगणों का दोष नहीं होता और सद्भकूट तीसरे तथा ग्यारहवें वैष्कृत ग्रहों को नाश करता है। इसी प्रकार ग्रहों की मित्रता दुष्ट भकूटका नाश करती है ॥३३॥

नाड़ीकूटविचार।

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाड़ी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजभंयोनिबुध्न्येचमध्या।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथोपौष्णभं चापरा स्या-
द्दपंत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः ॥३४॥

अन्वयः—ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं (अश्विनी च) एका नाडी स्यात्। पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या नाड़ी स्यात्। वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगं अथो पौष्णभं च अपरा नाडी स्यात्। दम्पत्योः (कन्यावरयोः) एकनाड्यां परिणयनम् (विवाहः) असत् (अशुभं भवति)। मध्यनाड्यां (हि निश्चयेन) मृत्युः स्यात् ॥ ३४ ॥

भाषा——ज्येष्ठा, मूल, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, आर्द्रा, पुनर्वसु, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और अश्विनी की आदि नाड़ी है। पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद की मध्यनाड़ी है। स्वाती, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढ, श्रवण और रेवती की अन्त नाड़ी है। यदि वर कन्या की एक ही नाड़ी हो तो विवाह अशुभ है। मध्य नाड़ी में मृत्यु होती है। इससे विवाह में नाड़ीदोष प्रथम विचारणीय है ॥ ३४ ॥

पूर्व, मध्य और अन्तभागभोगी नक्षत्र ।

पौष्णेशशाक्राद्रसमूर्यनंदाः पूर्वार्धमध्यापरभागयुग्मम् ।
भर्त्ता प्रिया प्राग्युजिभे स्त्रिया स्यान्मध्ये द्वयोः प्रेम परे प्रियास्त्री॥३५॥

अन्वयः—पौष्णेशशाक्राद्रसमूर्यनन्दा पूर्वार्धमध्यापरभागयुग्मम् 'भवति'। प्राग्युजिभे स्त्रियाः भर्त्ता प्रियः स्यात् । मध्ये युजिभे द्वयोः प्रेम 'भवति'। परे युजिभे स्त्री नृणां प्रिया 'स्यात्' ॥ ३५ ॥

भाषा—-रेवती से छ नक्षत्र पूर्वभाग होते हैं। इनमें विवाह हो तो भर्त्ताप्रिय होती है। आर्द्रा से बारह नक्षत्र मध्यभाग होते हैं। इनमें विवाह होने से परस्पर प्रीति रहती है। ज्येष्ठा से नौ नक्षत्र अन्त भाग है, इनमें विवाह होने से स्त्री प्यारी होती है ॥३५॥

पुरुष		आ	म	अ
	पु	०	५	५
स्त्री	स्त्री	०	०	५
		५	अ	५

अकचटतपयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम् ।
सर्पाखुमृगावीनां निजपंचमवैरिणामष्टौ ॥३६॥

अन्वयः—खगेशमार्जारसिंहशुनाम् (गरुडविडालसिंहकुक्कुराणाम्) सर्पाखु-मृगावीनां (सर्पमूषकमेषाणां) अष्टौ निजपंचमवैरिणाम् अकचटतपयशवर्गाः 'भवन्ति' ॥ ३६ ॥

भाषा—अवर्ग गरुड़, कवर्ग बिलाव, चवर्ग सिंह, टवर्ग कुत्ता, तवर्ग सर्प, पवर्ग मृग और शवर्ग मेष होता है । इनमें प्रत्येक वर्गका पाँचवाँ वर्ग वैरी होता है ॥ ३६ ॥

नक्षत्र और राशि की एकता का विचार ।

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥३७॥

अन्वयः—द्वयोः (कन्यावरयोः) राश्यैक्ये चेत् ऋक्षं (नक्षत्रं) भिन्नं 'स्यात्तदा' नाडीदोषो गणानां च दोषो न 'स्यात्'। नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥ ३७ ॥

भाषा--वर और वधू की एक राशि हो और नक्षत्र भिन्न हो अथवा एक नक्षत्र और एक राशि हो तो गणदोष नहीं होता। वर-बधुओं की राशि तथा नक्षत्र एक हो और चरणभेद हो तो विवाह अति शुभ होता है ॥ ३७ ॥

रा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३॥	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३॥	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३॥	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९			१॥	३	१॥	३	१॥	३	

नक्षत्र वशसे सेव्य-सेवक-फल।

सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं चे-
त्पूर्वं हि भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्भात्।
सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाश-
ग्रामादिसौख्यकृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥३८॥

अन्वयः—भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्भात् सेव्याधमर्णनगरादिभं चेत्पूर्णं 'स्यात तदा' हि (निश्चयेन) सेवाविनाशधननाशनभर्तृनाशग्रामादिसौख्यकृत् इदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥ ३८ ॥

भाषा—स्वामी से नौकर का, धनी से ऋण लेने वाले का, स्त्री से पतिका, गांव के राजा से प्रजा का और दूसरा नक्षत्र हो तो क्रमानुसार सेवा, नाश, धननाश, भर्ताका नाश और ग्रामादि सुख का नाश जाने ॥३८॥

राशिस्वामियों के नवमांश की विधि ।

कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयो गुरुः ।
इह राशिपाः क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतोनवांशविधिरुच्यते बुधैः३९

अन्वयः—कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः (मङ्गलशुक्रबुधचन्द्रसूर्यबुधाः) कविभौमजीवशनिसौरयः गुरुश्च 'क्रमशः' इह राशिपाः (राशीनां स्वामिनः) भवन्ति । क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतः (मेषमकरतुलाकर्कभतः) बुधैः [विद्वद्भिः] नवांशविधिः उच्यते ॥ ३९ ॥

भाषा—मङ्गल, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मङ्गल, बृहस्पति और शनि, ये राशियों के स्वामी हैं। मेष का नवमांश मेष से, वृष का मकर से, मिथुन का तुला से, कर्क का कर्क से, सिंह का मेष से और मकर का कन्यादि से क्रमानुसार नवमांश जानना चाहिये ॥ ३९ ॥

समगृहमध्ये रविशशिहोरा ।
विषमभमध्ये रविशशिनोः सा ॥ ४० ॥

अन्वयः—समगृहमध्ये शशिरविहोरा 'स्यात्' । विषमभमध्ये रविशशिनोः सा होरा 'स्यात्' । अयं भावः यत् पञ्चदशभोगात्मिका एका होरा स्यात् ततः समराशिमध्ये प्रथमा चन्द्रस्य द्वितीया सूर्यस्य विषमराशिमध्ये प्रथमा रवेः अपरा चन्द्रस्येत्यर्थः ॥ ४० ॥

भाषा—समराशि में पहला पन्द्रह भाग चन्द्रमा की होरा, दूसरा पन्द्रह भाग सूर्य की होरा और विषम राशिमें प्रथम सूर्य की और दूसरी चन्द्रमा की होरा होती है ॥ ४० ॥

शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य बाण-
शैलाष्टपंचविशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्माद्-
द्रेष्काणकाः प्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ॥ ४१ ॥

अन्वयः—समराशिमध्ये शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य वाणशैलाष्टपञ्चविशिखाः (पञ्चांशानां शुक्रः सप्तानां बुधः अष्टानां गुरुः ततः पंचानां शनिः ततः पंचानां शनिः ततः पंचानां शनिः ततः पञ्चांशानां भौमः स्वामी स्यात्) विषमभे तु अस्मात् विपरीतं (प्रतिकूलं) त्रिंशांशकः 'स्यात्' प्रथमपञ्चनवाधिपानां द्रेष्काणकाःस्युः ॥४१॥

भाषा—शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि और मङ्गल इन पांचों ग्रहों का पांच सात आठ पाँच पांच इस क्रमसे त्रिंशांश जानना। जैसे शुक्र पांच अंशोंका स्वामी, बुध सात अंशोंका स्वामी और विषम राशियों का विपरीत जाने। जैसे प्रथम पांचों का मंगल, फिर पांचोंका शनिश्चर इसी प्रकार जानो। दशांश को द्रेष्काण कहते हैं। सो प्रथम द्रेष्काण निज अधीश का, दूसरा पंचमराशि के स्वामी का और तीसरा नवम राशि के स्वामी का होता है ॥ ४१ ॥

स्याद्द्वादशांश इह राशित एव गेहं
होराथ दृक्कनवमांशकसूर्यभागाः ।
त्रिंशांशकश्च षडिमे कथितास्तु वर्गाः
सौम्यैः शुभं भवति चाशुभमेव पापैः ॥ ४२ ॥

अन्वयः—इह षड्वर्गे द्वादशांशराशित एव गेहं अथ होरा स्यात्। दृक्कनवमांशकसूर्यभागाः त्रिंशांशकाश्च इमे षड्वर्गाः कथिताः। तु (पुनः) सौम्यैः (शुभग्रहैः) शुभं 'भवति' पापैः (पापग्रहैः) अशुभं एव भवति ॥ ४२ ॥

भाषा—निज राशि से अढ़ाई भाग को द्वादशांश कहते हैं। जैसे मेष का द्वादशांश मेष आदि से वृषका वृषादि से। गेहहोरा दृक्क, नवमांश, द्वादशांश तथा त्रिंशांश, ये हैं। जो षड्वर्ग कहे जाते हैं और सौम्य ग्रहों को अशुभ हैं ॥ ४२ ॥

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिके युग्मं च मूलाश्विनी
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम् ।
कर्काल्यंडजभांततोऽर्धघटिका सिंहाश्च मेषादिगाः
पूर्णान्ताद्धटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥४३॥

अन्वयः - ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्ममू च (पुनः) मूलाश्विनीपित्र्यादौ (मघादौ च) घटिकाद्वयं तद्भस्य गण्डान्तकं निगदितं (प्रोक्तम्) । ततः कर्काल्यण्डजभात् अर्धघटिका सिंहाश्च मेषादिगा पूर्णान्तात् घटिकात्मकं नन्दातिथेश्च आदिमं गण्डान्तं अशुभं स्यात् ।। ४३ ।।

भाषा--ज्येष्ठा, रेवती और आश्लेषा की दो घड़ी और मूल, अश्विनी तथा मघा के आदि की दो घड़ी गण्डान्त है । इसे नक्षत्रगण्डान्त कहते हैं । कर्क, वृश्चिक तथा मीन के अन्त की आधी घड़ी और सिंह एवं मेष के आदि की आधी घड़ी गंडांत है । यह लग्नगंडांत कहलाता है। पंचमी, दशमी और पूर्णिमा के अंत की एक २ घड़ी और प्रतिपदा, षष्ठी तथा एकादशी के आदि की एक २ घड़ी गंडांत होती है जो तिथिगंडांत कहलाती है । वह शुभ कर्म में अशुभ फल देती है ।। ४३ ।।

लग्नात्पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा ।
कर्तरीनाम स ज्ञेया मृत्युदारिद्र्यशोकदा ।। ४४ ।।

अन्वयः—यदा लग्नात् 'सकाशात्' पापौ (पापग्रहौ) ऋज्वनृजू व्ययार्थस्थौ तदा सा कर्तरीनाम ज्ञेया । सा (कर्तरी) मृत्युदारिद्र्यशोकदा स्यात् ॥ ४४ ॥

भाषा—जिस लग्न से पापग्रह (सीधा चलनेवाला) बारहवें स्थान में हो और वक्री होकर दूसरे स्थान में हो तो उसे कर्त्तरीदोष कहते हैं । वह मृत्यु, दारिद्र्य और शोक का देने वाला होता है ।। ४४ ।।

चंद्रसूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम् ।
सौख्यं सापत्नवैराग्यं पापद्वययुते मृतिः ।। ४५ ।।

अन्वयः—चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभं च भवति । सौख्यं सापत्नवैराग्यं 'स्यात्' । पापद्वययुते चन्द्रे मृतिः (मृत्युरेव) 'स्यात्' ॥ ४५ ॥

भाषा--सूर्य से युक्त चंद्रमा दरिद्री और भौमयुक्त चंद्रमा मरण करते हैं । बुधयुक्त शुभप्रद हैं, वृहस्पतियुक्त सौख्य देते हैं, शुक्रयुक्त शत्रुता करते हैं, शनियुक्त चन्द्रमा वैराग्य बढ़ाते हैं और यदि चन्द्रमा दो पापग्रह से युक्त हो तो मृत्यु करते हैं ।। ४५ ।।

जन्मलग्नोभयोर्मृत्यू राशौ नेष्टः करग्रहः।
एकाधिपत्ये राशीशे मैत्रे वा नैव दोषकृत् ॥ ४६ ॥

अन्वयः—जन्मलग्नोभयोर्मृत्युराशौ करग्रहः (विवाहः) नेष्टः (निषिद्धः) राशीशे एकाधिपत्ये (स्वाम्यैक्ये) 'तयोः' मैत्रे वा सति नैव दोषकृत 'स्यात्' ॥ ४६ ॥

भाषा--जन्मलग्न जन्मराशि से आठवीं राशि में हो तो विवाह श्रेष्ठ नहीं है। जन्मराशि और जन्मलग्न में किसी का और विवाह लग्नका एक ही स्वामी हो और राशीश्वरोंकी मित्रता हो तो दोष नहीं है ॥४६॥

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टमं लग्ने यदा नाष्टमगेहदोषकृत्।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूर्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी ॥४७॥

अन्वयः—मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियः (मीनवृषकर्कवृश्चिकमकरकन्याः) 'एते राशयः' यदा अष्टमं लग्नं तदा अष्टमगेहं दोषकृत् न 'भवेत्'। अन्योन्य-मित्रत्ववशेन सा (वधूः) सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी 'स्यात्' ॥ ४७ ॥

भाषा—मीन, मेष, कर्क, वृश्चिक, मकर और कन्या राशि यदि अष्टम लग्न में हों तो अष्टमलग्न का दोष नहीं होता। आपस में ग्रहों की मित्रता हो तो कन्या तथा पुत्र आयु और सौख्य भोगनेवाला होता है ॥ ४७ ॥

लग्न स्थित अष्टम स्थान के स्वामी का विचार।

मृतिभवनांशो यदि च विलग्ने तदधिपतिर्वा न शुभकरः स्यात्।
व्ययभवनं वा भवति तदंशस्तदधिपतिर्वा कलहकरः स्यात् ॥४८॥

अन्वयः—मृतिभवनांशो (अष्टमे लग्ने तन्नवांशो वा यदि विलग्ने स्यात् तदधिपतिः वा विलग्ने स्यात् तदा न शुभकरः। व्ययभवनम् (जन्मजन्मराशि-भ्यां द्वादशभवनम्) तदधिपतिः तदंशो वा भवेत् 'तदा' कलहकरः 'स्यात्' ॥४८॥

भाषा--यदि आठवें स्थान का नवमांश लग्न में हो अथवा लग्न का स्वामी हो और शुभप्रद भी न हो, जन्मलग्न तथा जन्मराशि के साथ द्वादशभवन में हो अथवा व्यय भवनका अंश उसका स्वामी हो तो कलहकारी होता है ॥ ४८ ॥

विषघटी का दोषविचार।

खरामतोंत्यादितिवह्निपित्र्यभे खवेदतः के रदतश्च सार्पभे ।
खवाणतोश्वधृतितोऽर्यमांबुपे कृते भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे ॥ ४९ ॥
मनोर्द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे कुपक्षतः शैवकरेष्टतोऽजभे ।
युगाश्वितो बुधन्यभतोययाम्यभे खचंद्रतो मित्रभवासवश्रुतौ ॥५०॥
मूलेंगबाणाद्विषनाडिकाः कृता वर्ज्याः शुभेऽथोविषनाडिकाध्रुवाः
निघ्ना भभोगेन खतर्कभाजिताः स्फुटाभवेयुर्विषनाडिकास्तथा ।५१।

अन्वयः—अन्त्यादितिवह्निपित्र्यभे (रेवतीपुनर्वसुकृत्तिकामघानक्षत्रे) खरामतः (त्रिंशद्घटिकोत्तरं) के (रोहिण्याम्) खवेदतः (चत्वारिंशद्घटिकोत्तरं) सार्पभे (आश्लेषायाम्) च रदतः, अश्वे खबाणतः अर्यमाम्बुपे धृतितः भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे कृते (विंशद्घटिकोत्तरम्) । द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे मनोः । शैवकरे कुपक्षतः । अजभे अष्टितः । बुध्न्यभतोययाम्यभे युगाश्वितः । मित्रभवासवश्रुतौ खचन्द्रतः । मूले अङ्गबाणात् । 'एता' विषनाडिकाः कृताः । अथो शुभे 'कार्ये' विषनाडिका ध्रुवा वर्ज्याः तथा विषनाडिकाध्रुवाः भभोगेन निघ्ना तथा खतर्कभाजिताः स्फुटा विषनाडिका भवेयुः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ।

रेवती, पुनर्वसु, कृत्तिका और मघा इन नक्षत्रों में ३० घड़ी के अन्त की चार घड़ी विषघड़ी कहलाती है । रोहिणी में ४० घड़ी पीछे चार घड़ी, आश्लेषा में ३२ पीछे चार घड़ी, अश्विनी में ५० घड़ी पीछे, भरणी और शतभिषा में १८ अठारह घड़ी पीछे पूर्वाफल्गुनी, चित्रा, उत्तराषाढ़ और पुष्य में २० घड़ी पीछे विशाखा, स्वाती, मृगशिरा और ज्येष्ठा में १४ घड़ी पीछे चार घड़ी आर्द्रा तथा हस्त में २१ घड़ी पीछे चार घड़ी, श्रवण में १६ घड़ी पीछे चारघड़ी उत्तराभाद्रपद, पूर्वाषाढ और भरणी में दश घड़ी पीछे चारघड़ी ॥५०॥ मूल नक्षत्रों में ५६ घड़ी के बाद विषनाड़ी होती है । यह विषनाड़ी शुभकर्म में अतिनिंदत है । विषनाड़ी की ध्रुवा को इष्ट नक्षत्र को भभोग से गुणा करे । फिर साठ का भाग देवे तैसे ही विषनाड़ी का भी भभोग से गुणा करे । साठ भाग देने से जो लब्धि हो सोई विषनाडी का स्पष्ट जानना चाहिये ॥५१॥

नक्षत्रविषघटिकाचक्रम् ।

अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पु.	पु.	अश्ले.
५०	२४	३०	४०	१४	२१	३०	२०	३२
म.	पू.	उ.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.
३०	२०	१८	२१	२०	१४	१४	१०	१४
मू.	पू. षा.	उ. षा.	श्र.	ध.	श.	पू. भा.	उ. भा.	रे.
५६	२४	२०	१०	१०	१८	१६	२४	३०

तिथिविषघटिकाचक्रम् ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०	ति.
१५	५	८	७	७	११	४	८	७	१०	३	१३	१४	८	७	०	घ.

वारविषघटिकाचक्रम् ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	वार	०
२०	२	१२	१०	७	५	२५	घ.	०

दिनमुहूर्त्तस्वामीसंज्ञा ।

गिरिशभुजगमित्राःपित्र्यवस्वंबुविश्वे-
भिजिदथ च विधातापीन्द्रइन्द्रानलौ च ।
निरृतिरुदकनाथोप्यर्यमाथोभगःस्युः
क्रमश इह मुहूर्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥ ५२ ॥

अन्वयः—गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वे अभिजित् अथ च विधाता-इन्द्रानलौ च निरृतिः उदकनाथः अर्यमा अथोभगः, इह क्रमशः वासरे (दिवसे) बाणचन्द्रा (पञ्चदश) मुहूर्ताः स्युः ॥ ५२ ॥

भाषा—दिन में शिव, भुजग, मित्र, पितृ, वसु, जल, विश्वेदेव, अभिजित्, विधाता, इन्द्र, अग्नि, निर्ऋति, उदकनाथ, अर्यमा, भग ये पन्द्रहों मुहूर्त्तों के स्वामी हैं ॥ ५२ ॥

रात्रिके मुहूर्त्तस्वामी की संज्ञा ।

शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवकौ ।
विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्त्ता निशि कीर्त्तिताः ॥ ५३ ॥

अन्वयः—शिवः अजपादात् अष्टौ (यथा, अजपादः अहिर्बुध्न्यः पूषा अश्विनौ यमः अग्निः ब्रह्मा सोम इत्यष्टौ) भेशाः (मुहूर्त्तेशाः) स्युः अदितिजीवकौ विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतः निशि मुहूर्ताः कीर्तिताः ॥ ५३ ॥

भाषा—रात्रि के शिव अजपाद अदिति गुरु विष्णु अर्क त्वष्टा मरुत ये आठ मुहूर्त्त के स्वामी होते हैं ॥ ५३ ॥

दिनरात्रिमुहूर्त्तचक्रम् ।

दि	आ	आ	अ	अ	०	भ	ध	पूषा	उषा	अ	रो.	ज्ये.	वि.	मू.	श.	उ.	पू.
मु.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१५	
र.	आ	पू	उ.	रे.	अ.	भ.	कृ.	रो.	म.	पु	पु	श्र.	ह.	चि.	स्वा.		
मु०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५०		

सूर्यादि वारों में मुहूर्त्त ।

रवावर्यमा ब्रह्म रक्षश्च सोमे कुजे वह्निपित्र्ये बुधेचाभिजित्स्यात् ॥
गुरौ तोयरक्षो भृगौ ब्रह्मपित्र्ये शनावीशसार्पौ मुहूर्ता निषिद्धाः ५४

अन्वयः—रवौ अर्यमा (भरणी) सोमे ब्रह्मरक्षः, कुजे वह्निपित्र्ये बुधे च च अभिजित् स्यात् । गुरौ तोयरक्षौ, भृगौ ब्राह्मपित्र्ये, शनौ ईशसार्पौ 'एते' मुहूर्ताः निषिद्धाः स्युः ॥ ५४ ॥

भाषा—रविवार को अर्यमा, सोमवार को ब्रह्म और राक्षस, मंगल को अग्नि तथा पितर, बुधवार को अभिजित्, वृहस्पति को जल इन वारों के ये मुहूर्त निषिद्ध हैं ॥५४॥

विवाह में विहित नक्षत्र आदि और अभिजित् का विचार।

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्र्यपित्र्य-
ब्रह्मांत्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेह्नि वैश्व
प्रांत्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजित् स्यात्॥ ५५॥

अन्वयः—शशिकरमूलमैत्रपित्र्यब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः निर्वेधैः विवाहः शुभः 'स्यात्'। रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्वप्रान्त्याङ्घ्रिश्रुतितिथिभागतः अभिजित् 'स्यात्'॥ ५५॥

भाषा—मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, तीनों उत्तरा और स्वाती वेध से रहित इन नक्षत्रों में और रिक्ता चौथ नवमी चतुर्दशी (और अमावस्या) रहित तिथियों और शुभ वारों में विवाह करना शुभ है। उत्तराषाढ़ के चौथे और श्रवण के पहिले चरण में अभिजित् रहता है॥ ५५॥

नक्षत्रवेधविचार।

वेधोऽन्योन्यमसौ विरिंच्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयो-
र्विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः।
स्वातीवारुणयोर्भवेन्निर्ऋतिभादित्योस्तथोपान्त्ययोः
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः॥५६॥

अन्वयः—विरिञ्च्यभिजितोः याम्यानुराधर्क्षयोः। विश्वेन्दोः हरिपित्र्ययोः, हस्तोत्तराभाद्रयोः स्वातीवारुणयोः, निर्ऋतिभादित्योः तथा उपान्त्ययोः असौ अन्योन्यं (परस्परं) ग्रहकृतो वेधो भवेत्। तत्र तुरीयचरणद्वयोः वा तृतीयद्वयोः गते खेटे 'परस्परं' वेधो 'भवेत्'॥ ५६॥

भाषा—रोहिणी और अभिजित् का, भरणी और अनुराधा का, उत्तराषाढ़ और मृगशिरा का, श्रवण और उत्तराभाद्रपदका, स्वाती और शतभिषा का, मूल और पुनर्वसुका, उत्तराफाल्गुनी और रेवती का वेध है। चौथे चरण तथा प्रथम चरण के साथ और दूसरे चरण का तीसरे चरण के साथ वेध जानना चाहिए॥ ५६॥

कृ० रो० मृ० आ० पु० पु० अ०

भ० अ० रे० उ० पू० श० ध० — म० पू० उ० ह० चि० स्वा० वि०

श्र० अ० उ० पू० मू० ज्ये० अनु०

सप्तशालाकाकाचक्रकथनम् ।

शाक्रेऽब्जे शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षेवसु-
द्वीशे वैश्वसुधांशुभे द्वयभगे सार्पानुराधे मिथः ।
हस्तोपांत्यमुभे विधातृविधिभे मूलादितित्वाष्ट्र-
भाजांघ्री याम्यमघे कृशानुहरिभे विद्धे कुभृद्रेखिके ॥५७॥

अन्वयः—कुभृद्रेखिके (सप्तशलाकाचक्रे) शाक्रेज्ये (ज्येष्ठापुष्यनक्षत्रे) शतभानिले, जलशिवे, पौष्णार्यमर्क्षे, वसुद्वीशे, वैश्वसुधांशुभे, हयभगे, सार्पानुराधे, भस्योपान्तिमभे, विधातृविधिभे, मूलादितित्वाष्ट्रभेऽजांघ्री, याम्यमघे कृशानुहरिभे, (परस्परं) विद्धे ज्ञेये ॥ ५७ ॥

भाषा—ज्येष्ठा और पुष्यका, शतभिषा और स्वाती का, पूर्वाषाढ़ और आर्द्रा का, रेवती और उत्तराफाल्गुनी का, धनिष्ठा और विशाखा का, उत्तराषाढ़ और मृगशिरा का, अश्विनी और पूर्वा फाल्गुनी का, रोहिणी और अभिजित् का, मूल और पुनर्वसुका, चित्रा और पूर्वाभाद्र पद का, भरणी और मघा का, कृत्तिका और श्रवण का सप्तशलाक चक्रके अनुसार वेध होता है । दीपिका में विस्तारपूर्वक इसका फल लिखा है ॥५७ ॥

कृ· रो· मृ· आ· पु· पु· ऽऽश्ले·

भ· अ· रे· उ· पू· श· ध· — म· पू· उ· ह· चि· स्वा वि·

श्र·अ. उ· पू· मू· ज्ये·ऽनु

क्रूरग्रह से दूषितादि दोषका परिहार।

ऋक्षाणि क्रूरविद्धानि क्रूरभुक्तादिकानि च।
भुक्त्वा चन्द्रेण मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥ ५८ ॥

अन्वयः—क्रूरविद्धानि, क्रूरभुक्तादिकानि च ऋक्षाणि 'यदि चन्द्रेण' भुक्त्वा मुक्तानि, 'चेत्तदा तानि' शुभार्हाणि (विवाहादौ योग्यानि) प्रचक्षते कथयन्ति॥५८॥

भाषा–क्रूरग्रह से विद्ध तथा छूटे हुये, क्रूरग्रह जिसपर प्राप्त होने वाले हों और उत्पातों में दूषित नक्षत्र चन्द्रमा ने भोगकर छोड़ दिया हो तो शुभ होते हैं ॥ ५८ ॥

लत्तादोष का प्रमाण।

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि।
संलत्तयंतेर्कशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥५९॥

अन्वयः—सप्तगोजातिशरैर्मितं भं (सप्तनवपंचसंख्याकं नक्षत्रं) ज्ञराहु-पूर्णेन्दुसिताः हि (निश्चयेन) स्वपृष्ठे संलत्तयन्ते। सूर्याष्टतर्काग्निमितं भं (द्वाद-शाष्टमषष्ठतृतीयसंख्याकं नक्षत्रं) अर्कशनीज्यभौमाः (सूर्यशनिगुरुभौमाः) पुरस्तात् (अग्रे) संलत्तयन्ते ॥ ५९ ॥

भाषा--बुध अपने नक्षत्र से सातवें नक्षत्र पर, राहु अपने नक्षत्र से आगेके नवें नत्त्र पर, चन्द्रमा बाईसवें नक्षत्र पर, शुक्र अपने पीछे वाले पांचवें नक्षत्र पर, सूर्य आगे के बारहवें नक्षत्र पर, शनैश्चर आगे के आठवें नक्षत्र पर, वृहस्पति आगे के छठें नक्षत्र पर और मंगल आगेके तीसरे नक्षत्र पर लात मारते हैं। यही लत्तायोग कहलाता है ॥ ५९ ॥

पातदोषविचार।

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातगंडशूलयोगानाम्।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत् स्यात् ॥ ६० ॥

अन्वयः—हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतीपातकगण्डशूलयोगानाम् अन्ते यन्नक्षत्रं 'स्यात्' तत् (नक्षत्रं) पातेन (चंडीशचंडायुधाख्येन) निपातितं 'स्यात्' ॥६०॥

भाषा--हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गंड और शूल इन योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो सो पातदोष से दूषित कहलाता है ॥ ६० ॥

महापातदोषविचार ।

पंचास्याजौ गोमृगौ तौलिकुंभौ कन्यामीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मंगलेषु ॥६१॥

अन्वयः—पंचास्याजौ (सिंहमेषौ) गोमृगौ (वृषमकरौ) तौलिकुंभौ, कन्यामीनौ, कर्क्यली, चापयुग्मे, 'व्युत्क्रमेणावस्थितयोः' चन्द्रभान्वोः क्रान्तेः साम्यं निरुक्तम् । तत् (साम्यम्) मङ्गलेषु (शुभकामेषु) नो शुभं 'भवति' ॥ ६१ ॥

क्रांति	३	१	२	साम्य
११				७
१२				६
८				४
	९	५	१०	

भाषा—सिंह, मेष, वृष, मकर, तुला, कुम्भ, कन्या मीन, कर्क, वृश्चिक, धन और मिथुन राशियों पर चन्द्रमा और सूर्य एक रेखापर स्थित हों तो क्रांतिसाम्य दोष होता है, जो सब शुभ कार्यों में वर्जित है ॥ ६१ ॥

खर्जूरदोषविचार ।

व्याघातगंडव्यतिपातपूर्वे शूलांत्यवज्रे परिघातिगंडे ।
एकार्गलाख्यो ह्यभिजित्समेतो दोषः शशी चेद्विषमर्क्षगोर्कात् ॥६२॥

अन्वयः—व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वे शूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे योगे विरुद्धे 'सति' अर्कात (सूर्यनक्षत्रात्) शशी (चन्द्रः) अभिजित्समेतः विषमे (विषमसंख्यके नक्षत्रे) 'स्यात्तदा' खार्जूरं (खार्जूराख्यो दोषः स्यात्) ॥ ६२ ॥

भाषा—व्याघात, गंड, व्यतीपात, विष्कुम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ और अतिगंड योगों में से जिस दिन कोई योग हो उस दिन जिस नक्षत्र पर सूर्य हों उस नक्षत्र से अभिजित् तक गिने, जिसदिन चन्द्रमा विषम नक्षत्र पर हो, उसी दिन खार्जूर तथा एकार्गल दोष जानना चाहिये ॥६२॥

उपग्रहदोषविचार ।

शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यस्थितिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पंच ।
उपग्रहाः सूर्यभतोब्जताराः शुभा न देशे कुरुवाह्लिकानाम् ॥६३॥

अन्वयः—सूर्यभतः (सूर्याक्रान्तनक्षत्रात्) अब्जताराः (चन्द्रनक्षत्राणि) शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यः (पंचमाष्टमदशचतुर्दशसप्तअष्टादशैकोनविंशतयः) तिथिः धृतिः च (पुनः) प्रकृतेः पञ्च, (एताः संख्याः स्युश्चेत्तदा) उपग्रहाः (उपग्रहनामधेयाः) दोषाः 'स्युः'। ते कुरुवाह्लिकानां देशे शुभा न भवन्तीत्यर्थः ॥

भाषा—पांचवें, आठवें, दसवें, चौदहवें, सातवें, पन्द्रहवें, अठारहवें, इक्कीसवें, बाईसवें, तेईसवें, चौबीसवें और पच्चीसवें स्थान के नक्षत्र पर सूर्य हों तो वह उपग्रह दोष होता है। यह कुरु और बाह्लीक देश में अशुभ है ॥ ६३ ॥

	१	
२७		२
२६		३
२५		४
२४		५
२३		६
२२		७
२१		८
२०		९
१९		१०
१८		११
१७		१२
१६		१३
१५		१४
	०	

पात, उपग्रह और लत्ता का अपवाद और अर्धयाम

पातो ग्रहलत्तासु नेष्टोंघ्रिखेटपत्समः ॥ वारस्त्रिघ्नोष्टभिस्तष्टः सैकः स्यादर्धयामकः ॥ ६४ ॥

अन्वयः—पातो ग्रहलत्तासु खेटपत्समः (ग्रहचरणतुल्यः) अंघ्रिः चरणः नेष्टः। वारः त्रिघ्नअष्टभिस्तष्टः सैकः स्यात्तदा अर्धयामकः त्रिघ्नः दोषः 'स्यात्'।

भाषा—पात, उपग्रह और लत्ता ये तीन दोष हैं। जिस नक्षत्र के किसी चरण पर कोई ग्रह हो तो वह चरण श्रेष्ठ नहीं है। वारके अंकको तीनसे गुणा करे और आठ का भाग देने से जो अंक बचे उसमें एक जोड़ दे तो उतने समय को अर्धयाम कहते हैं ॥६४॥

कुलिकदोषविचार।

शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यः शिवनः कुलिका रवेः।
रात्रौ निरेकास्तिथ्यंशाशनौ चांत्योपि निंदितः ॥ ६५ ॥

अन्वयः—रवेः (रविमारभ्य सर्ववारेषु) शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः कुलिकाः ते रात्रौ निरेकाः 'कार्याः' शनौ तु अन्त्योऽपि (रात्रेः पञ्चदशापि कुलिकाः) एते सर्वे निन्दिताः 'सन्ति' ॥ ६५ ॥

भाषा—रविवारके दिन तथा रात्रि में चौदहवां मुहूर्त्त, चन्द्रवार को दिनमें बारहवां, रात्रि में ग्यारहवां मुहूर्त्त, मंगल को दिन में दसवां, रात्रि में नवां मुहूर्त्त, बुधवार को दिन में आठवां और रात्रि में सातवां मुहूर्त्त, वृहस्पति को दिन में छठां और रात्रि में पांचवां मुहूर्त्त, शनिवार को दिनमें दूसरा और रात्रि में पहिला मुहूर्त कुलिक कहाता है। दिन के पंद्रहवें भाग में कुलिक होता है ॥ ६५ ॥

दग्धतिथ्याख्यविचार ।

चापांत्यगे गोघटगे पतंगे कर्काजगे स्त्रीमिथुने स्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रघटे समाः स्युस्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः॥६६॥

अन्वयः—पतंगे (सूर्ये) चापान्त्यगे (धनुर्मीनगते) गोघटगे (वृषकुम्भस्थिते) कर्काजगे च (पुनः) स्त्रीमिथुनेसिंहालिगे नक्रघटे च स्थिते 'सति' द्वितीयाप्रमुखाः समाः (समसंख्यकाः तिथयः) दग्धाः (दग्धसंज्ञकाः) भवन्ति ॥ ६६ ॥

भाषा—धन और मीन के सूर्य में द्वितीया, वृष तथा कुंभ के सूर्य में चौथ, कर्क, और मेष के सूर्य में षष्ठी, कन्या और मिथुन के सूर्य में अष्टमी, सिंह और वृश्चिक के सूर्य में दशमी, मकर और तुला के सूर्य में द्वादशी तिथि दग्धा होती है ॥ ३६ ॥

जामित्रदोष ।

लग्नाचंद्रान्मदनभवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम् ।
किंवा बाणाशुगमितलवगैर्जामित्रं स्यादशुभकरमिदम् ॥६७॥

अन्वयः—लग्नात् (विवाहलग्नात्) चन्द्रात् 'वा' मदनभवनगे (सप्तमभवनगते) खेटे (ग्रहे) इह परिणयनम् (विवाहः) न स्यात् । किंवा बाणाशुगमितलवगे (पञ्चपञ्चाशन्मिते नवांशगे ग्रहे) जामित्रं (जामित्रनामा दोषः) स्यात् । इदं अशुभकरं 'भवति' ॥ ६७ ॥

भाषा—लग्न से अथवा चन्द्रमासे सातवें स्थान में कोई ग्रह हो तो विवाह शुभ नहीं होता, अथवा पचपनवें नवमांशका भाव विवाह में अशुभ है। यह सूक्ष्म जामित्र दोष कहलाता है और अशुभकारक है॥ ६७॥

एकार्गलदोष।

एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्तर्युदयास्तदोषाः।
नश्यंति चद्रार्कबलोपपन्ने लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषाः॥६८॥

अन्वयः—चन्द्रार्कबलोपपन्ने (चन्द्रसूर्ययोः स्वोच्चमित्रादिराशिस्थितत्वरूपेण बलेन युक्ते सति) एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्तर्युदयास्तदोषा नश्यन्ति। यथा अर्काभ्युदये (सूर्योदये) दोषा (रात्रिः) नश्यति॥ ६८॥

भाषा—चन्द्रमा और सूर्य के बलसे लग्नमें एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्तरी और उदयास्तसम्बन्धी सब दोष नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्य के उदय में रात्रि नष्ट हो जाती है॥ ६८॥

देश विशेष से दोषोंका अपवाद।

उपग्रहर्क्षं कुरुबाह्लिकेषु कलिंगवंगेषु च पातितं भम्।
सौराष्ट्रशाल्वेषु च लत्तितं भं त्यजेत्तु विद्धं किल सर्वदेशे॥६९॥

अन्वयः—कुरुबाह्लिकेषु उपग्रहर्क्षम्, कलिङ्गवंगेषु पातितं भं, सौराष्ट्रशाल्वेषु च लत्तितं भं, विद्धं भं किल (निश्चयेन) सर्वदेशे त्यजेत्॥ ६९॥

भाषा—कुरु और बाह्लीक देश में उपग्रहदोष, कलिंग और बंगदेश में पातदोष, सौराष्ट्र और शाल्व देश में लत्तादोष और सब देशों में वेध दोष त्यागने योग्य होता है॥ ६९॥

दस दोषों के बनाने का क्रम।

शशांकसूर्यर्क्षयुतेर्भशेषे खं भूयुगांगानि दशेशतिथ्यः।
नागेंदवोर्केन्दुमिता नखाश्चेद्भवंति चैते दशयोगसंज्ञाः॥७०॥

अन्वयः—शशांकसूर्यर्क्षयुतेः (चन्द्रसूर्यनक्षत्रयोर्योगात्) भशेषे खं भूयुगाङ्गानि दशेशतिथ्यः नागेन्दवः अर्केन्दुमिताः नखाश्च एते दशयोगसंज्ञाः भवन्ति॥ ७०॥

भाषा--सूर्य और चन्द्र नक्षत्र से गणना कर गणितांक मिला कर सत्ताइस का भाग देवे। यदि ० । १ । ४ । ६ । १० । ११ । १५ । १८ । १९ । २० । इनमें से जो अंक रहै वही दशयोग समझना चाहिये ॥ ७० ॥

दशयोगफल और परिहार ।

वाताभ्राग्निमहीपचोरमरणं रुग्वज्रवादःक्षति-
योगांके दलिते समे मनुयुतेऽथौजे तु सैकेर्धिते ।
भं दास्रादथ संमितास्तु मनुभिः रेखाः क्रमात् संलिखे-
द्वेधोस्मिन् ग्रहचन्द्रयोर्न शुभदः स्यादेकरेखास्थयोः ॥७१॥

अन्वयः—वाताभ्राग्निमहीपचौरमरणं रुग्वज्रवादाःक्षतिः (एते क्रमशः भवन्ति। यथा शून्यशेषे वातदोषः स्यात । एकशेषे मेघाद्भयम् । चतुःशेषे अग्नेर्भयम् । एवमेव क्रमशः) समे योगांके दलिते मनुयुते, ओजे सैके अर्धिते दास्रात् (अश्विनीतः) भं 'स्यात्' । अथ (अनन्तरं) मनुभिः सम्मिताः (चतुर्दश) रेखाः क्रमात् संलिखेत्, अस्मिन् ग्रहचन्द्रयोः एकरेखास्थयोः वेधः शुभदो न स्यात् ॥ ७१ ॥

भाषा--शून्य बचे तो वातदोष, एक बचे तो अभ्रदोष, चार बचे तो मृत्युदोष, पन्द्रह बचे तो रोगदोष, अठारह बचे तो वज्रदोष, उन्नीस बचे तो कलहदोष और बीस बचे तो द्रव्यनाश दोष जानना चाहिए। यदि चन्द्रमा और सूर्य का नक्षत्र बराबर हो तो आधा करके १४ मिला देवे और इन सबको इकट्ठा करके अश्विनीसे गिने। यदि चन्द्र-सूर्य के नक्षत्र का अंक विषम हो तो एक और मिलाकर आधा कर जो आधे में शेष बचे, उसको अश्विनी से गिने इसे विषमांक कहते हैं। क्रम २ से चौदह रेखा लिखें। यदि एक रेखापर ग्रह चन्द्रमा हो तो यह वेध है और यह शुभप्रद नहीं है ॥ ७१ ॥

वाणदोषकथन ।

लग्नेनाढ्या याततिथ्योंकतष्टाः शेषे नागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये ।
रोगो वह्नीराजचौरौचमृत्युर्बाणश्चायंदाक्षिणात्यप्रसिद्धः ॥ ७२ ॥

अन्वयः—लग्नेन (वर्तमानलग्नेन) आढ्या (युक्ता) याततिथयः (शुक्लपक्षादिकास्तिथयः) अङ्कतष्टाः (नवभिस्तष्टाः) नागद्वयब्धितर्केन्दुसंख्ये 'सति' रोगः (रोगाभिधानः) वह्निः (वह्निनामकः) राजचौरौ (राजचौरनामानौ बाणौ) च (पुनः) मृत्युः बाणः अयम् (बाणः) दाक्षिणात्यप्रसिद्धः (दक्षिणदेशेषु प्रथितोऽस्ति) ॥ ७२ ॥

भाषा—जिस दिन बाण का विचार करना हो, उस दिन शुक्लपक्षकी प्रतिपदा से बीती हुई सब तिथियोंको गिनके वर्त्तमान दिनतक गिन कर जोड़े और तब नौ का भाग देवे । यदि आठ बचे तो रोगबाण, दो बचे तो अग्निबाण और चार बचे तो राजबाण छः बचे तो चौरबाण, और एक बचे तो मृत्युबाण जानना । यह दाक्षिणात्यों (महाराष्ट्रों) में प्रसिद्ध है ॥ ७२ ॥

बाणदोषका अपवाद ।

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रांतियातां-
शकमितिरथ तष्टांकैर्यदा पंच शेषाः ।
रुगनलनृपचौरा मृत्युसंज्ञश्च बाणो
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः ॥७३॥

अन्वयः—रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातांशकमिति अंकैः (नवभिः) तष्टा 'सती' पञ्च शेषाः स्युश्चेत्तदा रुगनलनृपचौरा (रोगवह्निराजचौरनामकाः) बाणाः मृत्युसंज्ञश्च बाणः 'भवति' । शेषकैक्ये नवहृतशरशेषे 'सति' सशल्यः (दोषसङ्गतः) बाणः 'स्यात्' ॥ ७३ ॥

भाषा—सूर्यकी संक्रांति के जितने अंश गये हों, उनको छः तीन एक चार इन अंकों में जोड़ देवे। फिर सब अंकों में नौ का भाग देने से अगर पांच बचें तो क्रम से रोग, अग्नि, नृप, चौर और मृत्यु बाण जाने। पुनः नौ का भाग देने से जो कुछ बाकी रहे, उन बचे हुए अंकों को जोड़ के भाग देवे । यदि पांच बचे तो वह शल्य बाण होगा ॥७३॥

०	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	
रो० वा०	६ १४ २६	७ १६ २५	६ १४ २४	५ १४ २३	४ १२ २३ १	३ १२ २३ १	३ ११ २० २१	९ १८ २७	८ १७ २६	९ १५ २४	७ १६ २५	६ १५ २०	रोगवाण में निविद्ध तिथि
अ० वा०	२ २० २९	११ १० २८	६ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २५	६ ५ २४ ८	५ १४ २२	३ १२ २१	३ १३ २१	२ ११ २९	१० १६ २८	९ १९ २६	अ० वा० में निविद्ध तिथि
रो० वा०	७ २९ १	३ २१ ३०	२ २० २०	१० १९ २८	९ १७ २७	१७ २६ २५	७ १६ २१	६ १५ २४	५ १४ २३	० १३ २०	३ १२ ३०	२ १० २०	रा० वा० में निषिद्ध तिथि
चौ० वा०	६ ५ २४	५ १४ २३	४ १३ २३	३ २९ ३०	२ २० २२	१० १९ २२	९ १८ २७	८ १७ २६	७ १६ २०	६ १५ २४	५ १४ २३	५ १३ २३	चौ० वा० में निषिद्ध तिथि
मृ० वा०	१ १९ २८	९ १८ २६	९ १७ २७	७ २६ २५	६ १५ २४	५ १४ २३	३ १३ २२	२ १२ २१ ३०	२ ११ २० १९	१० २९ २८	९ १८ २७	८ १७ १६	मृ० वा० में निषिद्ध तिथि

समयभेद, वारभेद और कर्मभेद से तीन प्रकार का वाणपरिहार ।

रात्रौ चौररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो-
र्मृत्युश्चाथ शनौ नृपौ विदि मृतिर्भौमेऽग्निचौरौ रवौ ।
रोगोथ व्रतगेहगोपनृपसेवायानपाणिग्रहे
वर्ज्याश्च क्रमतो बुधै रुगनलक्ष्मापालचौरा मृतिः ॥

अन्वयः—रात्रौ (रात्रिसमये) चौररुजौ (चौररोगनामानौ) वाणौ त्याज्यौ दिवा (दिने) नरपतिः राजवाणः (त्याज्यः) सदा (सर्वस्मिन् काले अग्निः (अनलनामको वाणः) 'त्याज्यः' । सन्ध्ययोः (प्रातःसंध्यायां सायंसंध्यायां वा) मृत्युः (मृत्युनामा बाणः) 'त्याज्यः' । शनौ (शनिवासरे) नृपः बाणः 'त्याज्यः' । विदि (बुधवासरे) मृतिः बाणः 'त्याज्यः' । भौमवारे अग्निचौरौ वाणौ 'त्याज्यौ' । रवौ (सूर्यवासरे) रोगो बाणः 'त्याज्यः' । अथ व्रतगेहगोपनृपसेवायां (यज्ञोपवीत-गृहाच्छादनराजपरिचर्यागमनेपु) क्रमतः बुधैः (विद्वद्भिः) रुगनलक्ष्मापालचौरा मृतिश्च (रोगवह्निराजचौरमृत्युबाणाः) त्याज्याः ॥ ७४ ॥

भाषा—रात्रि में चोर और रोगवाण, दिन में राजबाण, सन्ध्या के

समय अग्निबाण, प्रातःकाल मृत्युबाण, शनैश्चर को राजबाण, बुधको रोगबाण, यज्ञोपवीत में रोगबाण, घरके छाने बनवाने में अग्निबाण, राज-सेवा में राजबाण, यात्रा में चौर और विवाह में मृत्युबाण दूषित होता है।

ग्रहों की दृष्टि।

त्र्याशं त्रिकोणं चतुरस्रमस्तं पश्यंति खेटाश्चरणाभिवृद्ध्या।
मंदो गुरुर्भूमिसुतः परे च क्रमेण सम्पूर्णदृशो भवन्ति ॥७५॥

अन्वयः—खेटाः (ग्रहाः) त्र्याशं त्रिकोण चतुरस्रं अस्तं चरणाभिवृद्धया पश्यन्ति। मन्दः (शनिः) गुरुः भूमिसुतः च (पुनः) परे (अन्ये) ग्रहाः क्रमेण (परम्परया) सम्पूर्णदृशः भवन्ति ॥ ७५ ॥

भाषा—जिस स्थान में ग्रह स्थित हो वहां से तीसरे और दशवें स्थान को एक चरण की दृष्टि से, नवें और पांचवें स्थानको दो चरण की दृष्टि में, चौथे तथा आठवें स्थान को तीन चरण की दृष्टि से और सातवें स्थानको पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। शनैश्चर अपने स्थान से तीसरे तथा दसवें स्थानको, वृहस्पति पांचवें तथा नवें स्थान को चार चरण से देखता है। सूर्य चन्द्रमा वुध और शुक्र ये सातवें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥७५॥

उदयास्तादिशुद्धिः।

यदा लग्नांशेशो लवमथ तनुं पश्यति युतो
भवेद्वायं वोढुः शुभफलमनल्पं रचयति।
लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नसदनं
प्रपश्येद्वा वध्वाः शुभमितरथा ज्ञेयमशुभम्॥७६॥

अन्वयः—यदा लग्नांशेशः लवं (नवांशं) अथ तनुं (लग्नं) पश्यति अयं (लग्नांशेशः) 'नवांशेन लग्नेन वा' युतः 'स्यात्तदा' वोढुः वरस्य अनल्पं (वहु) फलं (शुभफलं) रचयति। लवद्यूनस्वामी लवमदनभं वा लग्ने मदनं प्रपश्येत्तदा वध्वाः (कन्यकायाः) शुभं कल्याणं स्यात्। इतरथा अशुभं ज्ञेयम्॥७६॥

भाषा—यदि लग्नका नवांशेश नवांशको या लग्नको देखे या नवमांश अथवा लग्न से युक्त हो तो वर के लिये शुभ होता है। नवांश से सप्तम नवांशका स्वामी नवांश की राशि से सप्तम

देखता हो या सप्तमभाव से युक्त हो अथवा लग्नसे सप्तम भावको देखता हो या सप्तमभाव से युक्त हो तो वधू के लिये विशेष शुभ फल देनेवाला होता है और लग्न के नवमांश का स्वामी नवमांश या लग्नको न देखता हो या युक्त न हो तो वर के लिये अशुभ है और नवमांश से सप्तम-नवमांश का स्वामी नवांश के सप्तम को या लग्न से सप्तमभावको न देखता हो या युक्त भी न हो तो वधू के लिये अशुभ है ॥ ७६ ॥

लवेशो लवं लग्नपो लग्नगेहं प्रपश्येन्मिथो वा शुभं स्याद्वरस्य ।
लवद्यूनपोंशद्युनं लग्नपोस्तं मिथो वेक्षतेस्याच्छुभं कन्यकायाः ॥७७॥

अन्वयः—लवेशः (नवांशाधिपः) लवं लग्नपः (लग्नस्वामी) लग्नगं प्रपश्येत् वा मिथः (परस्परं) प्रपश्येच्चेत्तदा वरस्य शुभं स्यात् । लवद्यूनपः द्यूनं अंशं लग्नपः अस्तं ईक्षते अथवा मिथः (अन्योन्यं) प्रपश्येत्तदा कन्यकायाः शुभं स्यात् ॥ ७७ ॥

भाषा—नवांश का स्वामी नवांश को और लग्नका स्वामी लग्न को देखता हो तो वर को शुभदायक है अथवा परस्पर नवमांशस्वामी लग्नको देखता हो और लग्नेश नवांशको देखता हो तो वरको शुभदायक होता है । नवमांश से सप्तम नवमांशका स्वामी अपने अंशसे सप्तम नवमांशको देखता हो और लग्नस्वामी लग्न से सप्तम स्थान देखता हो तो कन्या को शुभ है अथवा परस्पर नवमांश से सप्तमभावका स्वामी लग्न से सप्तम स्थान को देखता हो और लग्न से सप्तमभावका स्वामी सप्तम नवमांशको देखता हो तो भी कन्याको ही शुभ होता है ॥ ७७ ॥

लवपतिशुभमित्रं वीक्षतेंशं तनुं वा
परिणयनकरस्य स्याच्छुभं शास्त्रदृष्टम् ।
मदनलवपमित्रं सौम्यमंशद्युनं वा
तनुमदनगृहं चेद्वीक्षिते शर्म्म वध्वाः ॥७८॥

अन्वयः—लवपतिशुभमित्रं तनुं वा वीक्षते 'तदा' परिणयनकरस्य (वरस्य) शास्त्रदृष्टं शुभं (कल्याणं) स्यात् (मदनलवपमित्रं) सौम्यं अंशं वा द्यूनं तनुं मदनगृहञ्चेद् वीक्षते 'तदा' वध्वाः (कन्यकायाः) शर्म (कल्याणं) 'स्यात्' ॥७८॥

भाषा--चन्द्रमा बुध बृहस्पति और शुक्र इन ग्रहों में से कोई भी ग्रह मित्र हो या लग्न के नवमांशकी राशिको या लग्नको देखता हो तो वरको शुभ है और जो चन्द्रमा बुध बृहस्पति शुक्र इन ग्रहों में से सातवें स्थान के नवमांशका स्वामी अपने नवमांशको (राशिको) या सातवें स्थानको देखता हो तो कन्याका विवाह शुभ है अथवा दोनों नवमांशके स्वामियों को पापग्रह मित्र हो तो कन्या के लिए अशुभ है ॥ ७८ ॥

अर्कसंक्रान्तिदोष ।

विषुवायनेषु परपूर्वमध्यमान् दिवसांस्त्यजेदितरसंक्रमेषु हि ।
घटिकास्तु षोडश शुभक्रियाविधौपरतोपिपूर्वमपिसंत्यजेद्बुधः ॥७९॥

अन्वयः—विषुवायनेषु (मेषतुलाकर्कमकरसंक्रान्तिषु) शुभक्रियाविधौ परपूर्वमध्यमान् दिवसान् त्यजेत् । इतरसंक्रमणेषु (शेषसंक्रान्तिषु) तु हि (निश्चयेन) परतः पूर्वमपि षोडश घटिकाः बुधः (विद्वान्) संत्यजेत् ॥ ७९ ॥

भाषा--तुला कर्क और मकर संक्रान्ति के प्रथम, मध्यम और अंत इन तीन दिनोंको और शेष आठ संक्रान्तियों में प्रथम और अन्त की सोलह २ घड़ी शुभकर्म में त्याग देनी चाहिये ॥ ७९ ॥

संक्रान्ति की घड़ियोंका विवरण।

देवद्व्यंकर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्योर्काः खनृपाः क्रमात् ।
वर्ज्याः संक्रमणेर्कादेः प्रायोऽर्कस्यातिनिंदिताः ॥ ८० ॥

अन्वयः—अर्कादेः (सूर्यादेः) संक्रमणे क्रमात् (क्रमशः) देवद्व्यंकर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्यः खनृपाः अंकाः वर्ज्याः । प्रायः अर्कस्य अतिनिन्दिताः भवन्ति (यथा रवेः संक्रमणे प्राक्पश्चात्त्रयस्त्रिंशद्घटिकाः त्याज्याः चन्द्रस्य द्वे भौमस्य नव बुधस्य षट् गुरोः अष्टाष्टौ शुक्रस्य नव शनेः खनृपाः 'षष्ठ्यधिकशतमिति' घट्यः त्याज्याः) ।

भाषा--सूर्यसंक्रांति से पहिले तथा पीछे तैंतीस घड़ी, चन्द्रमा की संक्रांति से पहिले की दो घड़ी, मंगलकी संक्रांति से पहले और पीछे नौ घड़ी, बुधकी संक्रांति से पहले और पीछे छः घड़ी, बृहस्पतिकी संक्रांति से पहले और पीछे अट्ठासी घड़ी,;शुक्र की संक्रांति से पहले नौ घड़ी और शनिश्चर की संक्रान्ति से पहले और पीछे एक सौ आठ घड़ी वर्जित है ॥८०॥

पंगु-अंध-बधिराख्यलग्न।

घस्रे तुलाली बधिरौ मृगाश्वौ रात्रौ च सिंहाजवृषा दिवांधाः।
कन्यानृयुक्कर्कटका निशांधा दिने घटोऽन्त्यो निशि पंगुसंज्ञः॥८१॥

अन्वयः—तुलाली (तुलावृश्चिकौ) घस्रे (दिने) बधिरौ 'प्रोक्तौ'। मृगाश्वौ (मकरधनुषी) रात्रौ बधिरौ 'प्रोक्तौ'। (सिंहाजवृषाः सिंहमेषवृषाः) दिवान्धाः 'भवन्ति'। कन्यानृयुक्कर्कटकाः (कन्यामिथुनकर्काः) निशान्धा (रात्रौ अन्धाः) 'भवन्ति'। घटः (कुम्भः) दिने पंगुसंज्ञः 'भवति'। अन्त्यः (मीनः) निशि पंगुसंज्ञः 'स्यात्')॥ ८१॥

भाषा—दिन में तुला और वृश्चिक, रात्रि में तुला और मकर बधिर (बहरे) तथा दिनमें सिंह, मेष, वृष और रात्रि में कन्या तथा मिथुन कर्क अन्धे होते हैं। दिन में कुंभ और रात्रि में मीन ये दो लग्न पंगु (लूले) होते हैं॥ ८१॥

अन्य आचार्यों का मत।

बधिरा धन्वितुलालयोऽपराह्णे मिथुनं कर्कटकोंगना निशांधाः।
दिवसांधा हरिगोक्रियास्तु कुब्जा मृगकुंभांतिमभानि संध्ययोर्हि॥

अन्वयः—धन्वितुलालयः (धनुतुलावृश्चिकाः) अपराह्णे (दिवसस्योत्तरे भागे) बधिराः 'भवन्ति'। मिथुनकर्कटकाङ्गना (मिथुनकर्ककन्याः) निशान्धाः 'भवन्ति'। हरिगोक्रियाः (सिंहवृषमेषाः) दिवसान्धाः 'स्युः'। मृगकुम्भान्तिमभानि (मकरकुम्भमीनाः) सन्ध्ययोः (प्रातः सायंकाले वा) कुब्जाः (पंगवः) 'सन्ति'॥ ८२॥

भाषाः—धन, तुला, वृश्चिक ये अपराह्ण में बधिर (बहरे) हैं तथा मिथुन कर्क कन्या ये लग्न रात्रि में अन्धे हैं। सिंह वृष मेष ये लग्न दिन में अन्धे हैं, मकर कुम्भ मीन ये लग्न प्रातः तथा सायंकाल में कुबड़े होते हैं॥ ८२॥

दारिद्र्यं बधिरतनौ दिवांधलग्ने वैधव्यं शिशुमरणनिशांधलग्ने।
पंग्वंधे निखिलधनानि नाशमीयुः सर्वत्राधिपगुरुदृष्टिभिर्न दोषः॥

अन्वयः—बधिरतनौ (बधिरलग्ने, विवाहे सति दारिद्र्यं 'स्यात्'। दिवान्ध-

लग्ने वैधव्यं, निशान्धलग्ने 'विवाहे सति' शिशुमरणं (बालकविनाशः), पंग्वन्धे (पंगुलग्ने विवाहे सति) निखिलधनानि नाशं ईयुः। सर्वत्र (सर्वेष्वपि लग्नेषु) अधिपगुरुदृष्टिभिः (लग्नेशबृहस्पतिदृष्टिभिः) दोषो न 'भवेत्' ॥ ८३ ॥

भाषा--यदि विवाह (बहरे) लग्न में हो तो वर-कन्या दरिद्र, दिवांध लग्न में हो तो कन्या विधवा, रात्र्यंध लग्न में हो तो सन्तति-मरण और पंगु में हो तो धन नाश होता है। यदि इन लग्नों को बृहस्पति देखता हो या लग्नस्वामी की दृष्टि हो तो विवाह शुभ है ॥८३॥

विवाह में विहित नवमांश।

कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे झषगे वा।
यर्हि भवेदुपयामस्तर्हि सती खलु कन्या ॥ ८४ ॥

अन्वयः—कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे झषगे वा (धनुतुलाकन्यामिथुनानां नवमांशे मीनस्य वा नवमांशे) यर्हि उपयामः (विवाहः) 'स्यात्' तर्हि खलु (निश्चयेन) कन्या सती (पतिव्रता) भवेत् ॥ ८४ ॥

भाषा—धन कन्या तुला और मिथुन के नवमांश में तथा विकल्प करके मीन के नवमांश में विवाह हो तो कन्या पतिव्रता होती है ॥८४॥

विहित नवमांश में क्वचिन्निषेध वर्णन।

अन्त्यनवांशे न च परिणेया काचन वर्गोत्तममिह हित्वा।
नो चरलग्ने चरलवयोगं तौलिमृगस्थे शशभृति कुर्यात् ॥८५॥

अन्वयः—इह वर्गोत्तमं हित्वा अन्त्यनवांशे (मीनस्य नवमांशे) काचन 'कन्या' न परिणेया (नो विवाह्या), चरलग्ने नो चरलवयोगं शशभृति (चन्द्रे) तौलिमृगस्थे (तुलामकरस्थे) 'सति' 'परिणयनं' नो कुर्यात् ॥ ८५ ॥

भाषा--अन्त के नवमांश में कन्या का विवाह नहीं करना चाहिये, परन्तु अन्त का नवमांश वर्गोत्तम हो तो विवाह श्रेष्ठ होता है अथवा चरलग्न के नवमांशा में तथा तुला मकर के चन्द्रमा में विवाह करना श्रेष्ठ नहीं होता।

लग्नभंग योग।

व्ययः शनिः खेऽवनिजस्तृतीये भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः।
लग्नेट् कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौर्लग्नेट्शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥८६॥

अन्वयः—शनिः व्यये (द्वादशस्थाने) अवनिजः (भौमः) खे दशमे भृगुः (शुक्रः) तृतीये, तनौ (लग्ने) चन्द्रखलाः (चन्द्रः पापग्रहाश्च) न शस्ताः । रिपौ (षष्ठस्थाने) लग्नेट्कविग्लौश्च (लग्नेशशुक्रचन्द्राः) न शस्ताः (अशुभाः भवन्ति) । मृतौ (अष्टमस्थाने) ग्लौर्लग्नेट् शुभाश्च (चन्द्रलग्नेशशुभग्रहाश्च) 'न शस्ताः सन्ति' । मन्दे (सप्तमे) सर्वे ग्रहा न शस्ताः 'भवन्ति' ।। ८६ ।।

भाषा—विवाह के लग्न में बारहवें शनि, दसवें मंगल, तीसरे शुक्र, लग्न में चन्द्रमा और क्रूरग्रह अच्छे नहीं होते। लग्नस्वामी शुक्र चन्द्रमा छठें आठवें अच्छे नहीं होते। लग्नस्वामी और सौम्यग्रह आठवें अच्छे नहीं होते और सातवें तो कोई भी ग्रह शुभ नहीं होता ॥८६॥

रेखाद प्रस्थान ।

त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोर्कपुत्रा-
स्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोष्ट-
त्रिद्यूनषड्व्ययगृहान्परिहृत्य शस्ताः ॥८७॥

अन्वयः—त्र्यायाष्टषट्सु (तृतीयैकादशाष्टमषष्ठस्थानेषु) रविकेतुतमोऽर्कपुत्राः (सूर्यकेतुराहुशनयः), त्र्यायारिगः (तृतीयैकादशषष्ठस्थाने प्राप्तः) क्षितिसुतः (भौमः), द्विगुणायगः (द्वितीयतृतीयैकादशस्थानेषु स्थितः) अब्जः (चन्द्रः) सप्तव्ययाष्टरहितौ (सप्तमाष्टमद्वादशस्थानं परित्यज्य अन्यत्र) ज्ञगुरू (बुधगुरू), अष्टत्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य सितः (शुक्रः) शस्तः स्यात् ॥ ८७ ॥

भाषा—तीसरे आठवें छठें इन स्थानों में सूर्य केतु राहु शनि ये ग्रह शत्रु हैं। तीसरे छठें स्थान में मंगल शुभ है। दूसरे तीसरे ग्यारहवें इन स्थानों में चन्द्रमा शुभ है। छठें आठवें स्थान को छोड़कर और स्थानों में बुध बृहस्पति शुभ हैं। आठवें तीसरे सातवें छठें बारहवें स्थानों को छोड़ कर अन्यत्र शुक्र शुभ है ॥८७॥

कर्त्तरी आदि महादोषों का अपवाद ।

पापौ कर्त्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगे कर्तरी-
दोषो नैव सितेऽरिनीचगृहगे तत्षष्ठदोषोपि न ।

भौमास्ते रिपुनीचगे नहि भवेद्भौमाष्टमो दोषकृ-
न्नीचे नीचनवांशके शशिनि रिःफाष्टारिदोषोपि न ॥८८॥

अन्वयः—कर्तरिकारकौ पापौ (पापग्रहौ) रिपुगृहे (शत्रुस्थाने) 'अथवा' नीचास्तगौ (नीचराशिस्थितौ अस्तगौ वा) कर्तरीदोषो नैव 'भवेत्'। सिते (शुक्रे) अरिनीचगृहगे षष्ठदोषः अपि (शुक्रस्य षष्ठस्थानस्थितदोषोऽपि) न 'स्यात्'। भौमे अस्ते रिपुनीचगे वा अष्टमः (अष्टमस्थानस्थितः) भौमः न हि दोषकृत् 'स्यात्'। शशिनि (चन्द्रे) नीचे नीचनवांशके वा स्थिते 'सति' रिःफाष्टदोषः (षष्ठाष्टमद्वादशस्थानस्थितदोषोऽपि) न 'स्यात्' ॥ ८८ ॥

भाषा—कर्तरीदोष करने वाले क्रूरग्रह शत्रुस्थान में स्थित हों अथवा नीचराशि में अस्त हुये हों तो कर्तरी दोष नहीं होता। शत्रु का स्थान, नीचराशि इसमें शुक्र स्थित हो तो छठें स्थान में स्थित शुक्र का भी दोष नहीं है। मंगल अस्त हुआ हो और शत्रु की राशिपर अथवा नीच राशि पर स्थित हो तथा आठवें स्थान में स्थित हो तो दोष नहीं है। चन्द्रमा नीचराशि पर स्थित हो और नीच के नवमांश में स्थित हो तो छठें आठवें बारहवें का भी दोष नहीं होता ॥ ८८ ॥

नवदोषों का परिहार।

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्ध-
तिथ्यंधकाणबधिरांगमुखाश्च दोषाः।
नश्यंति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे
तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषः ॥ ८९ ॥

अन्वयः—अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्धतिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाश्च दोषाः (अब्ददोष-अयनदोष-ऋतुदोष-तिथिदोष-मासदोष-नक्षत्रदोष-पक्षदोष-अब्ददोष-दग्धतिथ्यादिदोष-अन्धलग्नादिदोषाः) विद्गुरुसितेषु इह केन्द्रकोणे 'स्थितेषु' नश्यन्ति। च (पुनः) तद्वत् पापविधुयुक्तनवांशदोषोऽपि न 'भवेत्' ॥८९॥

भाषा—अब्ददोष १ अयनदोष २ ऋतुदोष ३ रिक्तादि तिथिदोष ४ मासदोष, ५ नक्षत्रदोष ६ पक्षदोष, ७ दग्धतिथ्यादिदोष ८ अंधलग्नादि-दोष ९ यह सब दोष बुध बृहस्पति शुक्र सप्तम रहित केन्द्र में अथवा नवम

पंचम स्थान में स्थित हो तो नष्ट हो जाते हैं तथा बुधादि के केन्द्र वा कोण में रहने से पाप ग्रह युक्त नवमांश के दोष भी नष्ट हो जाते हैं ॥

अन्य परिहार ।

केंद्रे कोणे जीव आये रवौ वा लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमे वा ।
सर्वे दोषा नाशमायांति चन्द्रे लाभे तद्वद्दुर्मुहूर्तांशदोषाः ॥९०॥

अन्वयः—जीवः (बृहस्पतिः) केन्द्रे कोणे वा (प्रथमचतुर्थपंचमनवमदशमस्थाने), रवौ आये (एकादशस्थाने), चन्द्रे लग्ने वर्गोत्तमे वा 'सति' सर्वे दोषाः शान्तिमायान्ति । चन्द्रे लाभे (एकादशस्थाने) तद्वद्दुर्मुहूर्तांशदोषाः नश्यन्ति ॥ ९० ॥

भाषा—प्रथम, चौथे, पांचवें, नवें और दसवें स्थानों में वृहस्पति स्थित हो तो सब दोष नष्ट हो जाते हैं और सूर्य्य ग्यारहवें स्थान में हों अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम लग्नमें या अपने स्थान में हो तो नवमांश के सर्वदोष नष्ट होते हैं। ग्यारहवें चन्द्रमा हो तो दुर्मुहूर्त्त दोष और अंशदोष नष्ट होता है ॥ ९० ॥

सामान्य दोषों का परिहार

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
　　हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः ।
भवेदाये केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
　　समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥९१॥

अन्वयः—सौम्यः त्रिकोणे वा मदनरहिते केन्द्रे (स्थितः) दोषशतकं हरेत् । अपि शुक्रः द्विगुणं, सुरगुरुः लक्षं [लक्षगुणं] दोषं हरेत् । अंगपः उत लवेशः यदि आये वा केन्द्रे भवेत् तदा दोषाणां समूहं दहनः तूलं इव शमयति ॥९१॥

भाषा—यदि लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें या दसवें स्थान में बुध स्थित हो तो सौ दोषों को हरता है। यदि इन्हीं स्थानों में शुक्र स्थित हो तो पूर्व से द्विगुण अर्थात् दो सौ दोषों को हरता है। यदि इन्हीं स्थानों में बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषों को हरता है। लग्न

का स्वामी अथवा नवांश का स्वामी यदि लग्न चौथे, दसवें, ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो दोषों के समूह को वैसे ही नष्ट करता है जैसे अग्नि रुई के ढेर को भस्म कर देता है ॥ ९१ ॥

लग्न का विंशोपक वल।

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्द्धत्रयो गुरौ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्द्धैकैकं विशोपकाः ॥९२॥

अन्वयः—ज्ञभृग्वोः द्वौ द्वौ, इन्दौ पञ्च, रवौ सार्धत्रयः, गुरौ रामाः, मन्दागुकेत्वारे सार्धैकैकं विशोपकाः (भवन्ति) ॥ ९२ ॥

भाषा—इसी प्रकरण के सत्तासी श्लोक में कहे हुए अपने शुभ स्थानों में स्थित रहते बुध का दो बिस्वा, शुक्र का दो बिस्वा, चन्द्रमा का पाँच बिस्वा, सूर्य का साढ़े तीन विस्वा, बृहस्पति का तीन बिस्वा, शनैश्चर का डेढ़ विस्वा और राहु-केतु का डेढ़-डेढ़ विस्वा वल होता है। उक्तस्थानों से अन्यत्र स्थित रहते सूर्य आदि ग्रह शून्यबल होते हैं। प्रयोजन यह है कि विवाहकाल में यह सब वल मिलकर पन्द्रह से बीस विस्वा तक हों तो लग्न शुभ और दस से पन्द्रह विस्वा तक हो तो मध्यम और पाँच से दस बिस्वा तक हो तो अशुभ होता है। पाँच विस्वा से कम हो तो वह लग्न वर्जित होती है ॥ ९२ ॥

श्वश्रूआदि के सुख-दुःख जानने का उपाय।

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनुर्जामित्रपः स्याद्दयितो मनःशशी।
एतद्बलं संप्रतिभाव्य तान्त्रिकस्तेषां सुखं संप्रवदेद्विवाहतः ॥९३॥

अन्वयः – सितः श्वश्रूः, अर्कः तनुः [लग्नं] तनुः [शरीरं] जामित्रपः दयितः, शशी मनः स्यात्। तान्त्रिकः एतद्बलं संप्रतिभाव्य विवाहतः तेषां सुखं संप्रवदेत् ॥ ९३ ॥

भाषा—शुक्र सासुसंज्ञक, सूर्य ससुरसंज्ञक, लग्न देहसंज्ञक, लग्न से सातवें स्थान का स्वामी पतिसंज्ञक और चन्द्रमा मनसंज्ञक होता है। विवाहकाल में इन ग्रहों के वल का विचार करके ज्योतिषी को

चाहिये कि कन्या के ससुर आदि के सुख-दुःख को कहे । विवाहकाल में यदि शुक्र बली हो तो कन्या की सासु को पतोहू की ओर से सुख, यदि सूर्य बली हो तो ससुर को सुख, यदि लग्न बली हो तो कन्या के शरीर को सुख, यदि लग्न से सातवें स्थान का स्वामी बली हो तो कन्या के पति को सुख और चन्द्रमा बली हो तो कन्या के मन को सुख देता है ॥ ९३ ॥

संकरवर्णों के विवाह का मुहूर्त्त ।

कृष्णे पक्षे सौरिकुजार्केऽपि च वारे
वर्ज्ये नक्षत्रे यदि वा स्यात्करपीडा ।
संकीर्णानां तर्हि सुतायुर्धनलाभप्रीतिप्राप्त्यै
सा भवतीह स्थितिरेषा ॥ ९४ ॥

अन्वयः—कृष्णे पक्षे अपि च सौरिकुजार्के वारे वर्ज्ये नक्षत्रे वा यदि संकीर्णानां करपीडा स्यात् (तदा) सा (करपीडा) सुतायुर्धनलाभप्रीतिप्राप्त्यै भवति, इह एषा स्थितिः (स्यात्) ॥ ९४ ॥

भाषा—कृष्णपक्ष में, शनैश्चर, मंगल वा रविवार में और विवाह में वर्जित नक्षत्रों में यदि संकर वर्णों का विवाह हो तो उनको पुत्र, आयु, धन लाभ और प्रीति की प्राप्ति होती है ॥ ९४ ॥

गान्धर्वादि विवाह और त्रिपदीचक्र में नक्षत्रशुद्धि

गान्धर्वादिविवाहेऽर्काद्वेदनेत्रगुणेन्दवः ।
कुयुगाङ्गाग्निभूरामास्त्रिपद्यामशुभाः शुभाः ॥ ९५ ॥

अन्वयः—गान्धर्वादिविवाहे त्रिपद्यां अर्कात् (अर्कनक्षत्रात्) वेदनेत्रगुणेन्दवः कुयुगांगाग्निभूरामाः (क्रमात्) अशुभाः शुभाः (स्मृताः) ॥ ९५ ॥

भाषा—गान्धर्वादि विवाह में सूर्य के नक्षत्र से चार नक्षत्र अशुभ, फिर दो नक्षत्र शुभ, फिर तीन नक्षत्र अशुभ, फिर एक नक्षत्र शुभ, फिर एक नक्षत्र अशुभ, फिर चार नक्षत्र शुभ, फिर छः नक्षत्र अशुभ, फिर तीन नक्षत्र शुभ, फिर एक नक्षत्र अशुभ, फिर तीन नक्षत्र

शुभ होते हैं। ऐसे ही त्रिपदीचक्र में भी ये नक्षत्र क्रम से अशुभ और शुभ होते हैं ॥ ९५ ॥

सूर्य के नक्षत्र से अशुभ और शुभ नक्षत्र

४	२	३	१	१	४	६	३	१	१
अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०	अ०	शु०

विवाह से पूर्व होनेवाले कार्यों का मुहूर्त्त।

विधोर्बलमवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं
गृहाङ्गणविभूषणान्यथ च वेदिकामण्डपान्।
विवाहविहितोडुभिर्विरचयेत्तथोद्वाहतो
न पूर्वमिदमाचरेत्त्रिनवषण्मिते वासरे ॥ ९६ ॥

अन्वयः—विधोः बलं अवेक्ष्य विवाहविहितोडुभिः दलनकण्डनं वारकं गृहाङ्गणविभूषणानि (कार्याणि) अथ वेदिकामण्डपान् च विरचयेत् तथा उद्वाहतः पूर्वं त्रिषण्णवमिते वासरे इदं (पूर्वोक्तं कर्म) न आचरेत् ॥ ९६ ॥

भाषा—विवाह के लिये जो नक्षत्र शुभ कहे गये हैं, उन नक्षत्रों में तथा वर-कन्या के चन्द्रबल को विचारकर विवाह के दिन से पूर्व तीसरे, छठें, नवें दिन को छोड़ अन्य दिनों में आटा पीसना, दाल दलना, चावल कूटना, कलशस्थापन करना, घर और आँगन की सफाई करना, वेदी बनाना, मंडप छवाना आदि कार्य करे ॥ ९६ ॥

वेदी के लक्षण तथा मंडप का उद्वासन।

हस्तोच्छ्राया वेदहस्तैः समन्तात्तुल्या वेदी सद्मनो वामभागे।
युग्मे घस्रे षष्ठहीने च पञ्च सप्ताहे स्यान्मण्डपोद्वासनं सत् ॥९७॥

अन्वयः—सद्मनः वाममागे हस्तोच्छ्राया समन्तात् वेदहस्तैः तुल्या वेदी (कार्या), च षष्ठहीने युग्मे घस्रे पञ्चसप्ताहे मण्डपोद्वासनं सत् स्यात् ॥ ९७ ॥

भाषा—घर के बायें भाग में हाथ भर ऊँची हाथ भर लम्बी और हाथभर चौड़ी वेदी बनाना चाहिये। विवाह के दिन से छठें

दिन को छोड़ कर सम दिनों में तथा विषम दिनों में पांचवें या सातवें दिन मंडप का विसर्जन करना चाहिए ॥ ९७ ॥

मंडप के खम्भ गाड़ने का मुहूर्त ।

सूर्येऽङ्गनासिंहघटेषु शैवे स्तम्भोलिकोदण्डमृगेषु वायौ ।
मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ विवाहे स्थाप्योऽग्निकोणे वृषयुग्मकर्के ॥

अन्वयः--अंगनासिंहघटेषु (स्थिते) सूर्ये शैवे (ईशानकोणे) अलिकोदण्डमृगेषु वायौ, मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ वृषयुग्मकर्के अग्निकोणे विवाहे स्तम्भः स्थाप्यः ॥ ९८ ॥

भाषा—कन्या, सिंह और तुला में सूर्य के स्थित रहते घर के ईशानकोण में; वृश्चिक, धन, मकर में स्थित रहते वायव्यकोण में; मीन, कुम्भ, मेष में स्थित रहते नैर्ऋत्यकोण में और वृष, मिथुन, कर्क में स्थित रहते आग्नेयकोण में खम्भ गाड़ना चाहिए ॥ ९८ ॥

स्तम्भचक्र ।

सिंह	कन्या	तुला	ईशान
वृश्चिक	धन	मकर	वायव्य
कुम्भ	मीन	मेष	नैर्ऋत्य
वृष	मिथुन	कर्क	आग्नेय

गोधूलिप्रशंसा ।

नास्यामृक्षं न तिथिकरणं नैव लग्नस्य चिन्ता
नो वा वारो न च लवविधिर्नो मुहूर्तस्य चर्चा ।
नो वा योगो न मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ॥९९॥

अन्वयः—अस्यां (गोधूल्यां) ऋक्षं न (चिन्त्यं) तिथिकरणं न, लग्नस्य चिन्ता नैव, वा वारः न, च लग्नविधिः न, मुहूर्तस्य चर्चा नो, नो वा योगः,

मृतिभवनं नैव, जामित्रदोषः नैव, (यतः) सा गोधूलिः मुनिभिः सर्वकार्येषु शस्ता उदिता ॥ ९९ ॥

भाषा--सम्पूर्ण कार्यों में गोधूलि को मुनियों ने ऐसी शुभ कही है कि इसमें नक्षत्र, तिथि, करण वा नवांशविधान, योग, आठवें स्थान की शुद्धि, जामित्रदोष, ये सब विशेष नहीं विचारे जाते। लग्न का भी विशेष विचार नहीं किया जाता और मुहूर्त की तो कुछ चर्चा ही नहीं है। इस श्लोक का तात्पर्य यह है कि बहुत से सुयोगों के रहते कोई एक कुयोग भी हो तो गोधूलि में विवाह शुभ होता है। अथवा अन्य समय के लग्न में सब सुयोग ही हों और गोधूलि की लग्न में कुछ दोष भी हो तो गोधूलि ही श्रेष्ठ होती है। अथवा पूर्व देशों में तथा कलिंग देश में गोधूलि मुख्य होती है। अथवा गांधर्वविवाह तथा वैश्य आदि के विवाह में गोधूलि श्रेष्ठ है। अथवा कोई शुभ लग्न न हो और कन्या युवती हो गयी हो तो भारी दोषों को छोड़कर गोधूलि में विवाह श्रेष्ठ होता है ॥ ९९ ॥

समयभेद से गोधूलिकाल।

पिंडीभूते दिनकृति हेमन्ततौं स्यादर्धास्ते तपसमये गोधूलिः।
संपूर्णास्ते जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ॥

अन्वयः--हेमन्ततौं दिनकृति (सूर्ये) पिण्डीभूते (सति), तपसमये अर्धास्ते (सति) जलधरमालाकाले सम्पूर्णास्ते [सूर्ये सति] गोधूलिः स्यात्, एवं त्रेधा [गोधूलिः] सकलशुभकार्यादौ योज्या ॥ १०० ॥

भाषा--हेमन्त ऋतु से यहाँ प्रयोजन शीतकाल से है, जाड़े के चार महीनों में कुहिरा आदि से ढँक कर सायंकाल में जब सूर्य भात के गोले के समान स्वच्छ और तेजरहित देख पड़े तब, और चैत्रादि गर्मी के चार महीनों में सूर्य के आधे अस्त हो जाने पर और वर्षाकाल अर्थात् श्रावण आदि चार महीनों में सूर्य के सम्पूर्ण अस्त हो जाने पर गोधूलि होती है। यह गोधूलि का समय सम्पूर्ण शुभ कार्यों में शुभ होता है। गोधूलिपद का अर्थ यह है कि जब सायंकाल में इकट्ठा होकर वन से

घर की ओर आती हुई गौओं के खुरों से उठी हुई धूलि से आकाश भर जाता है, उस समय का नाम गोधूलिकाल है ॥१००॥

गोधूलिसमय में त्याज्य दोष ।

अस्तं याते गुरुदिवसे सौरे सार्के
लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ ।
कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे
वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यम् ॥ १०१ ॥

अन्वयः—गुरुदिवसे अस्तं याते (सूर्ये), सौरे सार्के गोधूलिः भवति । लग्नात् मृत्यौ रिपुभवने, च लग्ने इन्दौ कन्यानाशः स्यात् तथा तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुः मृत्युः स्यात्, लाभे धनसहजे चन्द्रे (सति) सौख्यं भवेत् ॥ १०१ ॥

भाषा—बृहस्पति के दिन सूर्यास्त होने के बाद और शनैश्चर के दिन सूर्यास्त होने के पूर्व गोधूलि शुभ होती है । बृहस्पति के दिन सूर्यास्त से पूर्व अर्द्धयामदोष और शनैश्चर के दिन सूर्यास्त के बाद कुलिकदोष रहता है, इसलिये इन दोनों कालों की गोधूलि निषिद्ध होती है । लग्न से आठवें या छठें स्थान में अथवा लग्न में चन्द्रमा के रहते कन्या की मृत्यु तथा सातवें या आठवें स्थान में अथवा लग्न में मंगल के स्थित रहते वर की मृत्यु होती है, इसलिये गोधूलिकाल में ऐसा लग्न निषिद्ध होता है । लग्न से ग्यारहवें, दूसरे या तीसरे स्थान में चन्द्रमा के स्थित रहते कन्या और वर दोनों को सौख्य होता है, इसलिये गोधूलिकाल में ऐसा लग्न श्रेष्ठ होता है ॥ १०१ ॥

सूर्य की स्पष्टगति

मेषादिगेऽर्केष्टशरा ५८ नगाक्षाः ५७
सप्तेषवः ५७ सप्तशरा ५७ गजाक्षाः ५८ ।
गोऽक्षाः ५९ खतर्काः ६० कुरसाः ६१ कुतर्काः ६१
कङ्गानि ६१ षष्टि ६० र्नवपञ्च ५९ भुक्तिः ॥ १०२ ॥

अन्वयः—मेषादिगे अर्के अष्टशराः, नगाक्षा, सप्तेषवः, सप्तशराः, गजाक्षाः, गोऽक्षाः खतर्काः, कुरसाः, कुतर्काः, कंगानि, षष्टि, नवपञ्च, भुक्तिः ॥ १०२ ॥

भाषाः—मेषादि बारह राशियों में इस क्रम से सूर्य की ५८।५७। ५७।५७।५८।५९।६०।६१।६१।६१।६०।५९। कला गति होती है॥१०२॥

सूर्यस्पष्ट करने की रीति

संक्रान्तियातघस्राद्यैर्गतिर्निघ्ना खषट् ६० हृता।
लब्धेनांशादिना योज्यं यातर्क्षं स्पष्टभास्करः॥१०३॥

अन्वयः—संक्रान्तियातघस्राद्यैः गतिः निघ्ना खषट्हृता लब्धेन अंशादिना यातर्क्षं योज्यं, स स्पष्टभास्करः स्यात्॥ १०३॥

भाषा—जिस दिन जितने दण्ड-पल पर सूर्य की संक्रान्ति लगी हो, उस दिन से इष्टकाल पर्यन्त जितने दण्ड-पल हों उनको पूर्व कही हुई कलारूप गति से गुणाकर उसमें साठ का भाग दे। जो कुछ अंशादि लब्ध हों, उनमें बीती हुई संक्रान्ति की राशि जोड़ दे तो तात्कालिक सूर्य स्पष्ट होता है। उदाहरण—यथा संवत् १९४९ माघ कृष्ण दशमी बृहस्पतिवार को १२ दण्ड ६ पल पर मकर को संक्रान्ति लगी और माघ कृष्ण त्रयोदशी रविवार को २५ दण्ड ६ पल पर सूर्य स्पष्ट करना है। इसलिये संक्रान्तिकाल से इष्टकाल तक बीते हुए ३ दिन १३ दण्ड ०० पल को पूर्व कही हुई मकर संक्रान्ति की ६० कलारूप गति से गुणाकर उसमें ६० का भाग देने से ३ अंश १३ कला ०० विकला लब्ध हुई। इनमें बीती हुई धन संक्रान्ति की नवीं राशि जोड़ी गई, तब ९। ३। १३। ०० हुए। यही तात्कालिक स्पष्ट सूर्य हुआ।१०३।

लग्नघटिकासाधनार्थ लग्नभुक्तांशसाधन

तनोरिष्टांशकात्पूर्वं नवांशा दशसंगुणाः।
रामाप्ता लब्धमंशाद्यं तनोर्वर्गादिसाधने॥ १०४॥

अन्वयः—तनोः इष्टांशकात् पूर्वं नवांशाः दशसंगुणाः रामाप्ताः लब्धं वर्गादिसाधने तनोः अंशाद्यं स्यात्॥ १०४॥

भाषा—विवाहादि शुभ कार्य के लिये जिस बली शुभ लग्न का जो दोषरहित विहित नवांश विचारा गया हो, उससे पूर्व जितने नवांश उस लग्न के हों उनकी संख्या को दस से गुणाकर तीन का भाग देवे जो

कुछ लब्ध हों वेही उस लग्न के तात्कालिक भुक्त अंश-कला आदि होंगे। और वेही उस लग्न के गृह होरा द्रेष्काणादि पूर्वोक्त षड्वर्गसाधन में काम आते हैं। उदाहरण—यथा मिथुन लग्न का सातवाँ नवांश शुद्ध विचारा गया, तो उससे पूर्व नवांशों की छः संख्या को दस से गुणा तो साठ हुए। इनमें तीन का भाग देने से २० । ०० लब्ध हुए। यही मिथुन लग्न के भुक्तांशादि होंगे ॥ १०४ ॥

लग्न और सूर्य से इष्टकालसाधन

अर्काल्लग्नात् सायनाद्भोग्यभुक्तै-
र्भागैर्निघ्नात् स्वोदयात् खाग्निभक्तात् ।
भोग्यं भुक्तं चान्तरालोदयाढ्यं
षष्ट्या भक्तं स्वेष्टनाड्यो भवेयुः ॥१०५॥

अन्वयः—सायनात् अर्कात् लग्नात् भोग्यभुक्तैः भागैः निघ्नात् स्वोदयात् खाग्निभक्तात् भोग्यं भुक्तं(तत्)अन्तरालोदयाढ्यं षष्ट्या भक्तं तदा स्वेष्टनाड्यःभवेयुः

भाषा—अयनांशयुक्त तात्कालिक सूर्य के भोग्य अंशों से और अयनांश संयुक्त तात्कालिक लग्न के भक्त अंशों से गुणे हुए अपने देश के मेषादि लग्नों के मान में तीस का भाग देने से लब्ध हुआ सूर्य का भोग्य अर्थात् भोग करने के लिए बाकी और लग्न का भुक्त अर्थात् भोग किया हुआ पलात्मक काल होता है। इन दोनों को सूर्य और लग्न के मध्य लग्नों के पलात्मक प्रमाण को जोड़कर उसमें साठ का भाग देने से लब्ध हुए इष्टकालिक दण्ड-पल होते हैं। उदाहरण—यथा शाके १८१४ माघ कृष्ण दशमी बृहस्पतिवार को २५ दण्ड ६ पल तात्कालिक सूर्य के ९ । ३ । १३ । ०० स्पष्ट में अयनांश जोड़ने से ९।२६।३। ०० यह सूर्य का सायन स्पष्ट हुआ। इसके २६ । ३ । ०० अंशादि को ३० अंशों में घटाने पर शेष ३ । ५७ । ०० सूर्य के भोग्य अंशादि हुए। मकर राशि में रहने के कारण सूर्य के ३ । ५७ । ०० भोग्य अंशों से किसी स्थान को ३०३ पलात्मक मकरोदय प्रमाण को गुणने पर ११९६ । ५१ । ०० पलादि हुए। इनमें ३० का भाग देने से ३९ । ५३ लब्ध

सायन सूर्य के भोग्य पलादि हुए। ऐसे ही तात्कालिक २।२६।४०।०० लग्न में २२।५० अयनांश जोड़ने से २।१९।३०।०० सायन लग्न हुई। कर्क राशि होने के कारण इसके १९।३०।०० भुक्तांशों से उस स्थान की पलात्मक ३४३ कर्कोदय प्रमाण को गुणने से ६६८८।३०।०० पलादि हुए। इनमें ३० का भाग देने से २२२।५७ लब्ध सायन लग्न के २२२। ५७ भुक्त पलों को तथा मकर और कर्क के मध्य को कुम्भ के २५१, मीन के २१८, मेष के २१८, वृष के २५१, मिथुन के ३०३ पलात्मक प्रमाणों को जोड़ने से १५०४ पल हुए। इनमें साठ का भाग देने से २५। ४ लब्ध इष्ट दण्ड हुए। यहाँ सूर्यादि प्रति विकलादि छूटने के कारण इष्ट में दो पलों का भेद हुआ है ॥१०५॥

एक स्थान का लग्नमान।

मे·	वृष.	मिथुन	कर्क	सिंह	कं.	तुला	वृश्चि.	मकर	कुम्भ	मी·
२१८	२५१	३०३	३४३	३४७	३३८	३४७ ३३८	धन ३४७	३०३	२५१	२१८

इष्टकाल वनाने की विशेष रीति।

चेल्लग्नार्कौ सायनावेकराशौ तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः।
स्वेष्टः कालो लग्नमूनं यदार्काद्राशौ शेषोऽर्कात्सषड्भं निशायाम्

अन्वयः—चेत् सायनौ लग्नार्कौ एकराशौ (तदा) तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्नि-भक्तः स्वेष्टः कालः (स्यात्), यदा लग्नं अर्कात् ऊनं (तदा) रात्रेः शेषः स्यात् तथा निशायां सषड्भात् अर्कात्–॥१०६॥

भाषा—यदि अयनांशयुक्त लग्न और अयनांशयुक्त सूर्य दोनों एक ही राशि में हों तो दोनों के आपस में घटने पर शेष से गुणे हुए अपने देश के उदय में तीस का भाग देने से जो लब्ध हों, वह सूर्योदय से लेकर इष्टकाल होता है। यदि सायन लग्न तथा सूर्य ये दोनों एक ही राशि में स्थित हों और सूर्य के अंशों से लग्न के अंश कम हों तो उन कम अंशों से गुणे हुए अपने देश के उदय में तीस का भाग देने से जो लब्ध हो, वह सूर्योदय से पूर्व रात्रि का बाकी काल होता है। इसको

साठ में घटाने से शेष पूर्व दिन के सूर्योदय से लेकर इष्टकाल होता है। रात्रि में सूर्य की राशि में छः जोड़कर उक्त रीति करने पर इष्टकाल स्पष्ट होता है। एक राशि में स्थित सूर्य से अधिक लग्न का उदाहरण–यथा ९।२५।६।३६ इस लग्न में ९ । १६ । ५९। २६ सूर्य को घटाया तो ०।८।७।१० शेष रहे । इन शेष अंशों को लग्न तथा सूर्य में मकर राशि में रहने के कारण मकर की ३०३ उदय से गुण दिया, तो २४६०।११ ३० हुए । इनमें तीस का भाग दिया तो ८२ । २२ । १ पलादि लब्ध हुए । सूर्योदय से लेकर यही इष्टकाल हुआ। कम लग्न का उदाहरण–यथा ९। २६ । ५० । ४० सूर्य में ९।२२।३५।३६ लग्न को घटाया तो ०।४।५।४ शेष रहे । इनको मकर के स्वदेशी ३०३ उदय से गुण दिया तो १२३५।३५।१२ हुए। इनमें तीस का भाग दिया तो ४१।१५।१० पलादि लब्ध हुए। सूर्योदय से पूर्व इतना रात्रिशेष हुआ। इसको साठ में घटाया तो ५९। १८। ४४। ५० दण्डादि शेष रहे। यही इष्टकाल हुआ। रात्रि में इष्टकाल का उदाहरण तो पूर्व श्लोक में कहे हुए उदाहरण के सायन सूर्य में छः राशि जोड़ कर उक्त क्रिया करने से ही हो जायगा, इसलिए यहां नहीं कहा गया है ॥ १०६ ॥

शुभ कार्यों में अवश्य त्यागने योग्य दोष

उत्पातान्सहपातदग्धतिथिभिर्दुष्टांश्च योगांस्तथा
चन्द्रेज्योशनसामथास्तमयनं तिथ्याः क्षयर्द्धी तथा।
गण्डान्तं च सविष्टिसंक्रमदिनं तन्वंशपास्तं तथा
तन्वंशेशविधूनथाष्टरिपुगान्पापस्य वर्गांस्तथा ॥ १०७ ॥
सेन्दुक्रूरखगोदयांशमुदयास्ताशुद्धिचण्डायुधान्
खार्जूरं दशयोगयोगसहितं जामित्रलत्ताव्यधम् ।
बाणोपग्रहपापकर्त्तरि तथा तिथ्यर्क्षयोगोत्थितं
दुष्टं योगमथार्धयामकुलिकाद्यान्वारदोषानपि ॥ १०८ ॥
क्रूराक्रान्तविमुक्तभं ग्रहणभं यत्क्रूरगन्तव्यभं
त्रेधोत्पातहतं च केतुहतभं सन्ध्योदितं भं तथा ।

तद्वच्च ग्रहभिन्नयुद्धगतभं सर्वानिमान्संत्यजे-
दुद्वाहे शुभकर्मसु ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषानपि ॥ १०९ ॥

अन्वयः—पातदग्धतिथिभिः सह उत्पातान्, तथा दुष्टान् योगान् अथ चन्द्रे ज्योशनसां अस्तमयनं तथा तिथ्याः क्षयर्धी, च सविष्टिसंक्रमदिनं, गण्डान्तं, तथा तन्वंशपास्तं, अथ तन्वंशेशविधून्, तथा अष्टरिपुगान् पापस्य वर्गान् सेन्दु-क्रूरखगोदयांशं, उदयास्तशुद्धिचण्डायुधान्, दशयोगयोगसहितं खार्जूरं जामित्र-लत्ताव्यधम्, तथा बाणोपग्रहपापकर्तरि, तिथ्यृक्षयोगोत्थितं दुष्टं योगं अथ अर्ध-यामकुलिकाद्यान् वारदोषान् अपि (तथा) क्रूराक्रान्तविमुक्तभं, ग्रहणभं, तथा यत् क्रूरगन्तव्यभं, त्रेधोत्पातहतं च पुनः केतुहतभं तथा सन्ध्योदितं भं च (पुनः) तद्वत् ग्रहभिन्नयुद्धगतभं, ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषान् अपि इमान् सर्वान् उद्वाहे शुभकर्मसु सन्त्यजेत् ॥ १०७–१०९ ॥

भाषा—दिग्दाह, प्रसिद्ध वृक्ष या मकान आदि का अकस्मात् गिरना, पानी का वरसना, उल्कापात, बड़ी आँधी का आना, बिजली का गिरना, बिना मेघ का गरजना, भूकम्प आना, चन्द्र-सूर्य में मण्डल होना, सियारी का चिल्लाना, और भी ग्रामसम्वन्धी उत्पात तथा क्रान्ति-साम्य, दग्धतिथि, व्यतीपात, वैधृति इत्यादि दुष्टयोग, चन्द्र, शुक्र, बृह-स्पति का अस्त, दक्षिणायन, तिथि की हानि वृद्धि, नक्षत्र, तिथि, लग्न के गण्डान्त, भद्रा, संक्रान्ति दिन, लग्न और नवांश के स्वामी का अस्त, लग्न से आठवें वा छठें स्थान में स्थित लग्न वा नवांश का स्वामी, लग्न में पापग्रहों के गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, चन्द्रमा वा क्रूरग्रह से युक्त लग्न वा नवांश, लग्नशुद्धि, सातवें स्थान की शुद्धि, पात और खार्जूर दोष, दशयोगों के सहित जामित्र वा लत्ता-दोष, वेधदोष, बाणदोष, उपग्रहदोष, पापकर्त्तरिदोष तथा तिथि-नक्षत्र से तिथि–वार से, नक्षत्र–वार से, वा तिथि–नक्षत्र-वार से उत्पन्न दुष्टयोग, अर्द्धयाम, कुलिकादि वारदोष, क्रूरग्रह का भोग किया नक्षत्र, जिसमें क्रूरग्रह आनेवाला हो या सूर्य-चन्द्रग्रहण हुआ हो वह नक्षत्र, जिसमें पूर्वोक्त उत्पात हुए हों या केतु का उदय हुआ हो वह नक्षत्र, सूर्य के अस्तकाल में प्रारम्भ होनेवाला, अर्थात् सूर्य के नक्षत्र से चौदहवाँ नक्षत्र

जिसमें ग्रहों का युद्ध हुआ हो वह नक्षत्र और लग्न के दोष, इन सबका विवाहादि सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याग करे ॥ १०७–१०९ ॥

कन्यादि के तेल आदि लगाने की संख्या

मेषादिराशिजवधूवरयोर्वटोश्च
तैलादिलापनविधौ कथितात्र संख्या।
शैला दिशः शरदिगक्षनगाद्रिबाण-
बाणाक्षबाणगिरयो विबुधैस्तु कैश्चित् ॥ ११० ॥

अन्वयः—अत्र मेषादिराशिजवधूवरयोः वटोः (बालकस्य) च तैलादिलापनविधौ कैश्चित् विबुधैः (क्रमेण) शैलाः दिशः शरदिगक्षनगाद्रिबाणबाणाक्षबाणगिरयः (इति) संख्याः कथिताः ॥ ११० ॥

भाषा—मेषादि राशियों में उत्पन्न कन्या, वर और जिसका यज्ञोपवीत होनेवाला हो उसके तेल-उबटन आदि लगाने में कुछ पण्डितों ने ७।१०।५।१०।५।७।७।५।५।५।५।७ यह संख्या कही है, अर्थात् मेष राशिवालों को विवाह और यज्ञोपवीत के दिन से पूर्व सात दिन, वृष राशिवालों को दस दिन, मिथुन राशिवालों को पाँच दिन, कर्क राशिवालों को दस दिन, सिंह राशिवालों को पाँच दिन, कन्या राशिवालों को सात दिन, तुलाराशिवालों को सात दिन, वृश्चिक राशिवालों को पाँच दिन, धन राशिवालों को पाँच दिन, मकर राशिवालों को पाँच दिन, कुम्भ राशिवालों को पाँच दिन, मीन राशिवालों को सात दिन तेल और उबटन लगाना चाहिए ॥ ११० ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ विवाहप्रकरणं समाप्तम् ॥ ६ ॥

वधूप्रवेशप्रकरणम्।

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम् ॥१॥

अन्वयः—विवाहात् (विवाहदिवसात्) अष्टिदिनान्तराले (षोडशदिन-

मध्ये) समाद्रिपञ्चाङ्कदिने (समदिवससप्तपंचमनवम दिने) वधूप्रवेशः शुभः परस्तात् (षोडशदिवसानन्तरं) विषमाब्दमासदिने (विषमवर्षे विषममासे विषमदिने वा) 'कार्यः' । अक्षवर्षात् (पंचवर्षात्) परतः यथेष्टम् (स्वेच्छानुसारतो ज्ञेयम्) ॥ १ ॥

भाषा—विवाह के दिनसे सोलह १६ दिनके भीतर नव सात पांच दिनमें वधूप्रवेश शुभ है। यदि किसी कारण से सोलह दिनके भीतर वधूप्रवेश न हो तो विषम वर्ष, विषम मास और विषम दिनमें वधूप्रवेश करना चाहिये। पांच वर्षके बाद निज इच्छा से वधूप्रवेश करे। विषम वर्षका नियम नहीं है ॥ १ ॥

वधूप्रवेश में नक्षत्रशुद्धि।

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥ २ ॥

अन्वयः—ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले (उत्तरात्रयरोहिणीअश्विनीपुष्यहस्तअभिजित्चित्रानुराधारेवतीमृगशिरश्रवणधनिष्ठामूलमघास्वाती एषु नक्षत्रेषु) वधू प्रवेशः सत् 'स्यात्' । रिक्तारार्के बुधे च। (रिक्तातिथिषु मंगलवासरे रवौ च) परैः (आचार्यैः) 'वधू-प्रवेशः' नेष्टः (न शस्तः) ॥ २ ॥

भाषा—ध्रुवसंज्ञक (तीनों उत्तरा रोहिणी) क्षिप्रसंज्ञक (अश्विनी पुष्य हस्त) मृदुसंज्ञक (चित्रा अनुराधा रेवती मृगशिरा) और श्रवण धनिष्ठा मूल मघा स्वाती नक्षत्र में वधू प्रवेश करना शुभ है। रिक्ता (४-९-१४) तिथि बुध मंगल और रविवार में वधूप्रवेश अशुभ है ॥

सब मासों में वधूप्रवेश से फलाफल।

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिके पतिं
हन्त्यादिमे भर्तृगृहे वधूः शुचौ।
श्वश्रूं सहस्ये श्वसुरं क्षये तनुं
तातं मधौ तातगृहे विवाहतः ॥ ३ ॥

अन्वयः—विवाहतः (विवाहानन्तरं) आदिमे ज्येष्ठे भर्तृगृहे 'स्थिता' वधूः पतिज्येष्ठं (पत्युर्ज्येष्ठं भ्रातरं) हन्यात्। अथ अधिके (अधिकमासे) 'स्थिता'

वधूः पतिं (स्वामिनं) हन्यात् । शुचौ (आषाढे) श्वश्रूं (भर्तृजननीं) सहस्ये पौषे श्वशुरं (पत्युः पितरं) 'हन्यात्'। क्षये (क्षयमासे) तनुं (स्वीयशरीरमेव) 'हन्ति' मधौ (चैत्रे) तातगृहे (पितृगृहे स्थिता वधूः तातं हन्ति) ॥३॥

भाषा--ज्येष्ठ मास में पति के घर आने वाली वधू ज्येष्ठ का नाश करती है, अधिक मास (मलमास) से पति का और आषाढ में सासु का, पौष में श्वसुर का और क्षयमास में निज शरीर ही का नाश करती है। यदि विवाह हो जाने के पीछे वधू चैत्र मास में निज पिता ही के घर रह जावे तो पिताही का नाश करती है ॥ ३ ॥

इति वधूप्रवेशप्रकरणं समाप्तम् ॥ ७ ॥

अथ द्विरागमनप्रकरणम् ।

द्विरागमन (गवने) का मुहूर्त ।

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ
रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे ।
नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके
द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽस्रपे मृदूडुभिः ॥ १ ॥

अन्वयः—अथ (वधूप्रवेशप्रकरणकथनानन्तरम्) ओजहायने (विषमाब्दे) रवौ (सूर्ये) घटालिमेषगे 'सति' रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके 'सति' लघुध्रुवे चरे अस्रपे मृदूडुभि एषु भेषु द्विरागमं चरेत् (कुर्यात्) ॥ १ ॥

भाषा—विषम (१ । ३ । ५ । ७) वर्षों में, कुम्भ वृश्चिक मेष राशि के सूर्यों में, वृहस्पति शुद्ध हो तो बुध बृहस्पति शुक्र चन्द्रवार में, मिथुन मीन कन्या तुला वृष लग्नोंमें, लघुसंज्ञक (अश्विनी पुष्य हस्त) ध्रुव (तीनों उत्तरा रोहिणी) चर (श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पुनर्वसु स्वाती) मूल मृदु अर्थात् मृगशिरा रेवती चित्रा अनुराधा, नक्षत्रों में द्विरागमन शुभ है ॥ १ ॥

संमुख शुक्रदोषविचार ।

दैत्येज्ये ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद्गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणानवोढाः ॥
बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा चेद्वंध्या भवति च गर्भिणीत्वगर्भा ॥२॥

अन्वयः—यदि दैत्येज्यः (शुक्रः) अभिमुखे दक्षिणे स्यात् 'तदा' शिशुगर्भिणीनवोढाः (बालकगर्भिणीस्त्रीनवपरिणीता वा) नहि गच्छेयुः । बालश्चेद्व्रजति (गच्छति) 'तदा' विपद्यते (म्रियते) । नवोढा (नवपरिणीता वधू) चेद् 'व्रजति' तदा वन्ध्या 'भवति' । गर्भिणी चेद्व्रजति 'तदा' अगर्भा 'भवति' (तस्या गर्भस्रावो जायेत) ॥ २ ॥

भाषा—द्विरागमन में यदि शुक्र सन्मुख अथवा दाहिने हो तो बालक, गर्भिणी और नवीन ब्याही स्त्री को पति के गृह न जाना चाहिये। क्योंकि बालक की मृत्यु, गर्भिणी का गर्भनाश और नवोढ़ा वन्ध्या हो जाती है ॥ २ ॥

शुक्रदोष का परिहार ।

नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः ।
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्नहि ॥३॥

अन्वयः—नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे (नगरप्रवेशे देशेकथंचिदुपद्रवेवा जाते सति) करपीडने (विवाहे) विबुधतीर्थयात्रयोः (देवदर्शनतीर्थयात्रायां वा) नृपपीडने (राज्ञि दुःखिते सति) नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवः (सम्मुखशुक्रः) नहि दोषकृत् 'भवति' ॥ ३ ॥

भाषा—नगरप्रवेश, ग्रामके उपद्रव, विवाह के निमित्त यात्रा, देवता तीर्थकी यात्रा, राजा से पीड़ा होने पर अन्य देश को यात्रा और नवीन वधूप्रवेश में सन्मुख शुक्र का दोष नहीं होता ॥ ३ ॥

तथा द्वितीय परिहार ।

पित्र्ये गृहे चेत् कुचपुष्पसंभवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसंभवः ।
भृग्वंगिरोवत्सवशिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥४॥

अन्वयः—पित्र्ये गृहे चेत् (पितुर्गृहे यदि) कुचपुष्पसंभवः (स्त्रीणां कुचस्य रजोदर्शने वा जाते सति) प्रतिशुक्रसम्भवः (सम्मुखशुक्रदोषः) नास्ति ।

भृग्वङ्गिरोवत्सवशिष्ठकश्यपात्रीणां (एतेषां ऋषीणां) भरद्वाजमुनेश्च कुले 'स्त्रीणां' दोषो नास्ति ॥ ४ ॥

भाषा--यदि पिताके गृह स्त्री के कुच निकल आयें और रजोदर्शन हो जाय तो सन्मुख शुक्रका दोष नहीं होता । भृगु, अंगिरा, वत्स, वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि और भरद्वाज इन ऋषियों के कुलकी स्त्रियों को शुक्र सम्मुख का दोष नहीं है ॥ ४ ॥

इति द्विरागमनप्रकरणं समाप्तम् ॥ ८ ॥

अथ अग्न्याधानप्रकरणम् ।

अग्निहोत्रमुहूर्त्त ।

स्यादग्निहोत्रविधिरुत्तरगे दिनेशे
मिश्रध्रुवांत्यशशिशुक्रसुरेज्यधिष्ण्ये ।
रिक्तासु नो शशिकुजेज्यभृगौ न नीचे
नास्तंगतेन विजिते न च शत्रुगेहे ॥ १ ॥

अन्वयः—दिनेशे (सूर्ये) उत्तरगे (उत्तरायणे सति) मिश्रध्रुवान्त्यशशिशुक्रसुरेज्यधिष्णये (एषु दिनेषु नक्षत्रेषु च) नो रिक्तासु, न शशिकुजेज्यभृगौ (चन्द्रभौमगुरुशुक्रे) नीचे (नीचस्थानगते) न अस्तंगते, न विजिते, च शत्रुगेहे 'गते सति' अग्निहोत्रविधिः स्यात् ॥ १ ॥

भाषा--उत्तरायण सूर्य, कृत्तिका विशाखा तीनों उत्तरा रोहिणी रेवती मृगशिरा ज्येष्ठा नक्षत्रों में और रिक्ता (४।९।१४) ये तिथियां न हों, चन्द्रमा मंगल बृहस्पति और शुक्र इन चारों ग्रहों में कोई ग्रह नीच का न हो, अस्त शत्रुक्षेत्री और ग्रहयुद्ध में हारा हुआ नक्षत्र न हो तो अग्न्याधान प्रारम्भ करना शुभ है ॥ १ ॥

अग्न्याधान में लग्नशुद्धि ।

नो कर्कनक्रझषकुंभनवांशलग्ने
नोच्चे तनौ रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे ।

केंद्रर्क्षषड्भवनगे च परस्त्रिलाभे
षट्खस्थितैर्निधनशुद्धियुते विलग्ने ॥ २ ॥

अन्वयः—नो कर्कनक्रझपकुम्भनवांशलग्ने नो अब्जे (चन्द्रे) तनौ (लग्ने) 'सति' नो रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे 'गते सति' अथवा केन्द्रर्क्षषड्षड्भवनगेषु (प्रथमचतुर्थसप्तमदशमषष्ठतृतीयैकादशस्थानेषु) परैः शनिराहुकेतुशुक्रबुधैः (त्रिलाभषट्संस्थितैः) निधनशुद्धियुते (अष्टमे शून्ये सति) अग्निहोत्रविधिः 'शुभः' स्यात् ॥ २ ॥

भाषा--कर्क मकर मीन कुम्भ इनमें से कोई लग्न वा इनका नवमांशा न हो और चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तो अग्न्याधान कर्म करना चाहिये । रवि और चन्द्रमा ९ । ५ हो अथवा १ । ४ । ७ । १० । ६ । में होवे, शनि राहु केतु शुक्र बुध तीसरे ग्यारहवें छठें दसवें स्थानमें स्थित हों और अष्टम स्थान ग्रहशून्य हो तो अग्न्याधान कर्म शुभ होता है ॥

यज्ञमें लग्नशुद्धि ।

चापे जीवे तनुस्थे वा मेषे भौमेम्बरे द्युने ।
षट्त्र्याये वा रवौ वा स्याज्जाताग्निर्यजति ध्रुवम् ॥३॥

अन्वयः—जीवे (बृहस्पतौ) चापे धनराशौ) वा भौमे तनुस्थे मेषे अम्बरे द्युने 'सति' अब्जे (चन्द्रे) षट्त्र्याये वा रवौ षट्त्र्याये जाताग्निः ध्रुवम् जयति ॥३॥

भाषा--लग्न में धन राशिका बृहस्पति और मेषराशि का मंगल स्थित हो, छठें आठवें ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा तथा मंगल हो तो ऐसे लग्न में अग्निहोत्र का प्रारम्भ करना शुभ होता है ॥ ३ ॥

इति अग्न्याधानप्रकरणं समाप्तम् ॥ ९ ॥

अथ राज्याभिषेकप्रकरणम् ।

राज्याभिषेक में कालशुद्धि ।

राज्याभिषेकः शुभ उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैरुदितैर्बलान्वितैः ।
भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैर्नोचैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे ॥ १ ॥

अन्वयः—उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैः (बृहस्पतिचन्द्रभार्गवैः, भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैः बलान्वितैः सबलैः) नो चैत्ररिक्तारमलिम्लुचे (चैत्रमासरिक्तातिथिभौमवासरअधिकमासेषु) राजाभिषेकः शुभः 'स्यात्' ॥ १ ॥

भाषा—उत्तरायण सूर्य में बृहस्पति चन्द्रमा और शुक्र उदित हो और मंगल सूर्य लग्नेश दशमेश जन्मलग्नेश बलयुक्त उच्च अथवा निज स्थान में स्थित हो तो चैत्रमास रिक्ता तिथि मंगलवार रात्रि और अधिकमास को छोड़कर अन्य तिथि वार और मासों में राज्याभिषेक शुभ होता है ॥ १ ॥

नक्षत्र और लग्नशुद्धि ।

शाक्रश्रवःक्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः शीर्षोदये वोपचये शुभे तनौ ।
पापैस्त्रिषष्ठायगतैः शुभग्रहैः केंद्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थितैः ॥ २ ॥

अन्वयः—शाक्रश्रवःक्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः (ज्येष्ठाश्रवणअश्विनीपुष्यहस्ताभिजित्चित्रामृगशिरःरेवतीअनुराधारोहिणीउत्तरात्रयेषु) शीर्षोदये वा उपचये शुभे तनौ पापैः (त्रिषष्ठायगतैः) शुभग्रहः केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थैः 'सद्भिः' राजाभिषेकः शुभो भवति ॥ २ ॥

भाषा—ज्येष्ठा श्रवण अश्विनी पुष्य हस्त चित्रा मृगशिरा रेवती अनुराधा रोहिणी और तीनों उत्तरा नक्षत्रों में राज्याभिषेक शुभ होता है । मिथुन सिंह कन्या तुला वृश्चिक कुम्भ ये लग्न हों और जन्मलग्न तथा जन्मराशि से तीसरे छठें ग्यारहवें कोई लग्न होवे और शुभग्रह लग्न में होवे अथवा शुभग्रह की दृष्टि हो तो राज्याभिषेक शुभ होता है। पापग्रह तीसरे छठें ग्यारहवें स्थानमें हों और शुभग्रह ६।८।१२। स्थानको छोड़कर अन्यत्र स्थित हो तो राज्याभिषेक शुभ होता है ॥ २ ॥

स्थानविशेष से ग्रहों का फल ।

पापैस्तनौ रुङ्निधने मृतिः सुते पुत्रार्तिरर्थव्ययगैर्दरिद्रता ।
स्यात्खेऽलसो भ्रष्टपदो द्युनांबुगैः सर्वं शुभं केंद्रगतैः शुभग्रहैः ॥ ३ ॥

अन्वयः—पापैः (पापग्रहैः) तनौ (लग्ने सति) रुक् (रोगः) 'स्यात्' । निधने (अष्टमस्थे सति) मृतिः (मरणं) 'स्यात्' । सुते (पंचमस्थे) पुत्रार्तिः (पुत्रपीड़ा) 'स्यात्' । अर्थव्ययगैः (द्वितीयद्वादशस्थैः) दरिद्रता 'स्यात्' ।

खे (दशमे) 'पापग्रहैः' अलसः, द्युनाम्बुगैः (सप्तमचतुर्थस्थानस्थितैः पापैः) भ्रष्टपदः (ऐश्वर्यरहितः) 'स्यात्'। शुभग्रहैः केन्द्रगतैः सर्वं शुभं (कल्याणात्मकं) 'भवति' ॥ ३ ॥

भाषा—पापग्रह लग्न में हो तो राजा की मृत्यु, आठवें स्थान में हो तो मृत्यु, पाँचवें स्थान में हो तो पुत्रपीड़ा, दूसरे और वारहवें स्थान में हो तो दरिद्रता, दसवें स्थानमें हो तो उद्योगरहित और सातवें, चौथे स्थानमें हो तो ऐश्वर्य भ्रष्ट हो जाता है। यदि शुभग्रह केन्द्र में हों तो सब दोष शुभ हो जाते हैं ॥ ३ ॥

स्थिरसंपत्तियोग।

गुरुर्लग्नकोणे कुजोऽरौ सितः खे स राजा सदा मोदते राजलक्ष्म्या।
तृतीयायगौ सौरिसूर्यौ खबंध्वोर्गुरुर्द्धरित्रीस्थिरास्यान्नृपस्य ॥

अन्वयः—गुरुः लग्नकोणे (लग्ने पंचमनवमस्थाने वा) कुजः अरौ (षष्ठस्थाने) सितः (शुक्रः) खे दशमस्थाने 'स्याच्चेत्तदा' राजा राजलक्ष्म्या मोदते। सौरिसूर्यौ (रविशनी) तृतीयायगौ (तृतीयैकादशस्थौ) गुरुः खबन्ध्वोः दशमचतुर्थे वा) 'स्याच्चेत् तदा' नृपस्य धरित्री स्थिरा स्यात् ॥ ४ ॥

भाषा--लग्न, नवें और पाँचवें स्थान में और वृहस्पति तथा मंगल छठें स्थान में हो तो राज्याभिषेक राजलक्ष्मी को बढ़ाता है। शनिश्चर तीसरे, सूर्य ग्यारहवें, दसवें और वृहस्पति चौथे स्थान में हो तो ऐसे योग में राज्याभिषेक राजाकी पृथ्वी सदैव स्थिर रखता है ॥ ४ ॥

दशमं राज्याभिषेकप्रकरणं समाप्तम् ॥ १० ॥

अथ यात्राप्रकरणम्।

यात्रा मुहूर्त बनाने का क्रम।

यात्रायां प्रविदितजन्मनां नृपाणां दातव्यं दिवसमबुद्धजन्मनां च।
प्रश्नाद्यैरुदयनिमित्तमूलभूतैर्विज्ञाते ह्यशुभशुभे बुधः प्रदद्यात् ॥१॥

अन्वयः--प्रविदितजन्मनां (ज्ञातजन्मकालीनग्रहाणां) नृपाणां, अबुद्धजन्मनां (अज्ञातजन्मकालीनग्रहाणां नृपाणां) च उदयनिमित्तमूलभूतैः प्रश्ना-

द्यौः अशुभशुभे विज्ञाते 'सति' बुधः दिवसं (यात्रा मुहूर्तं) प्रदद्यात् ॥ १ ॥

भाषा--जन्मकाल ग्रह जान और उनका शुभ दिन तथा बलाबल देखकर, और यदि जन्मकाल का ग्रह न जाने तो प्रश्नलग्न से शुभाशुभ जानकर यात्रा का मुहूर्त्त बताना चाहिये ॥ १ ॥

प्रश्नलग्नविचार।

जननराशितनू यदि लग्नगे तदधिपौ यदि वा तत एव वा।
त्रिरिपुखायगृहं यदि वोदयो विजय एव भवेद्वसुधापतेः ॥ २ ॥

अन्वयः—यदि जननराशितनू लग्नगे (जन्मराशिजन्मलग्नौ लग्नगौ स्याताम्) यदि वा तदधिपौ (तत्स्वामिनौ) 'लग्नगौ स्याताम्' अथवा तत एव (जन्मलग्नजन्मराशिभ्यामेव) त्रिरिपुखायगृहं (तृतीय षष्ठदशमैकादश) उदयः 'स्यात् तदा यात्रायां' वसुधाधिपतेः (राज्ञः) विजय एव भवेत् ॥ २ ॥

भाषा--जन्मलग्न और जन्मराशि यदि प्रश्नलग्न में हो और जन्मराशि तथा जन्मलग्न का पति प्रश्नलग्न में हो तथा तीसरा, छठाँ, दशवां, ग्यारहवां स्थान लग्न में हो तो यात्रा में राजा की जय कहे ॥२॥

अन्य प्रश्नलग्नफल।

रिपुजन्मलग्नभमथाधिपौ तयोस्त एव वोपचयसद्म चेद्भवेत्।
हिबुके द्युनेऽथ शुभवर्गकस्तनौ यदि मस्तकोदयगृहं जयः ॥ ३ ॥

अन्वयः--'प्रश्नलग्नात्' रिपुजन्मलग्नभं तदधिपौ (तत्स्वामिनौ) वा हिबुके (चतुर्थे) द्यूने (सप्तमे) स्याताम् तदा राज्ञः (नृपतेः) विजय एव 'स्यात्' तत एव (रिपुलग्नराशिभ्यामेव) उपचयसद्म (तृतीयषष्ठदशमैकादशस्थानम्) चेद् भवेत् 'तदापि विजय एव स्यात्'। 'प्रश्नलग्नात्' हिबुके (चतुर्थे) द्युने (सप्तमे) 'चेत्' अथवा तनौ (लग्ने) शुभवर्गकः (सद्ग्रहाणां षड्वर्गकः स्यात्तदापि) जय एव। यदि मस्तकोदयं गृहं तदापि जय एव 'स्यात्' ॥ ३ ॥

भाषा—यदि शत्रु का जन्मलग्न जन्मराशि और जन्मराशिका स्वामी प्रश्नलग्न से चौथे वा सातवें स्थान में हो तो राजा की जय हो। शत्रुके जन्मलग्न से जन्मराशि तीसरे छठें दशवें ग्यारहवें और प्रश्नलग्न से चौथे सातवें हो तो जय हो। यदि प्रश्नलग्न से शुभग्रहों

का षड्वर्ग हो अथवा शीर्षोदय राशि प्रश्न में हो तो भी राजा की जय होती है ॥ ३ ॥

पुनः प्रश्नलग्न का फल ।

यदि पृच्छितनौ वसुधा रुचिरा शुभवस्तु यदि श्रुतिदर्शनगम् ।
यदि पृच्छति चादरतश्च शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नमपि ॥ ४ ॥

अन्वयः—यदि पृच्छितनौ (प्रश्नलग्ने) वसुधा (भूमिः) रुचिरा 'स्यात्' यदि वा 'किंचित्' शुभवस्तु दर्शनगं (दृष्टिपथं) यायात् यदि वा आदरतः पृच्छति अथवा शुभदृष्टयुतं चरलग्नं अपि 'भवेत् तदा' वसुधाधिपतेः जय एव स्यात् ॥४॥

भाषा—प्रश्न लग्न में सुन्दर भूमि हो, शुभ वस्तु दीखती हो, राजा आदर से पूछे अथवा चर लग्न और शुभग्रह की दृष्टि होय तो राजा की अवश्य जय होती है ॥ ४ ॥

अशुभफलप्रद लग्नविचार ।

विधुकुजयुतलग्ने सौरिऽदृष्टेऽथ चन्द्रे
मृतिभमदनसंस्थे लग्नगे भास्करेपि ।
हिबुकनिधनहोरा द्यूनगे वापि पापे ।
सपदि भवति भंगः प्रश्नकर्तुस्तदानीम् ॥ ५ ॥

अन्वयः—विधुकुजयुतलग्ने (चन्द्रभौमसमन्विते लग्ने) सौरिदृष्टे अथ चन्द्रे मृतिभमदनसंस्थे (अष्टमसप्तमस्थानस्थिते), भास्करे (सूर्ये) लग्नगे, अपि वा पापे (पापग्रहे) हिबुकनिधनहोराद्यूनगे (चतुर्थाष्टमस्थानस्थिते) 'सति' तदानीं प्रश्नकर्तुः (जनस्य) सपदि (त्वरितं) भङ्गो भवति ॥५॥

भाषा—चन्द्र मंगल युक्त लग्न हो, शनैश्चर की दृष्टि हो, चन्द्रमा आठवें सातवें हो, रवि लग्न में हो और चन्द्रमा सूर्य वा पापग्रह चौथे तथा आठवें स्थान में स्थित हों तो प्रश्न करने वाले राजा का पराजय हो ॥५॥

प्रश्न लग्न से दिशाज्ञान ।

त्रिकोणे कुजात्सौरिशुक्रज्ञजीवो यदैकोऽपिवा नो गमोर्काच्छशी वा ।
बलीयांस्तु मध्ये तयोर्यो ग्रहः स्यात् स्वकीयां दिशं प्रत्युतासौ नयेच्च

अन्वयः-कुजात् (भौमात् सकाशात्) सौरिशुक्रज्ञजीवा (शनिशुक्र-

बुधगुरवः, त्रिकोणे (नवमे पंचमे स्थाने) 'अथवा' यदा एकोऽपि (शनिशुक्र-बुधगुरुषु मध्ये कोऽपि, त्रिकोणे 'स्यात् तदा' गमः (गमनं) न 'भवति' वा अर्कात् शशी त्रिकोणे 'स्यात् तदाऽपि' गमनं न 'भवति' तयोः मध्ये यो ग्रहः बलीयान् 'स्यात्' असौ स्वकीयां दिशं प्रत्युत (विपरीतक्रमेण) नयेत् (प्राप्नुयात्) ॥ ६ ॥

भाषा—मंगलसे नवें पाँचवें शनि शुक्र बुध बृहस्पति हों या इन ग्रहों में से कोई ग्रह त्रिकोण में हो तो उस दिशा को गमन न करे और सूर्य से चन्द्रमा त्रिकोण में हो तो भी विचारित दिशा में गमन नहीं होता है। यदि बलवान् ग्रह हो तो अपनी दिशा को उलटा प्राप्त हो ॥ ६ ॥

तथा अन्य प्रकार।

प्रश्ने गम्यदिगीशात्खेटः पंचमगो यः ।
बोभूयाद्बलयुक्तः स्वामाशां नयतेऽसौ ॥७॥

अन्वयः—गम्यदिगीशात् खेटः (ग्रहः) प्रश्ने (प्रश्नलग्ने) यः (ग्रहः) बलयुक्तः (बलवान्) पञ्चमगश्च बोभूयात् असौ (ग्रहः) स्वां (स्वकीयां) आशां (दिशं) नयते (प्रापयति) ॥७॥

भाषा—गन्तव्य दिशा का स्वामी प्रश्नलग्न में हो और उससे पाँचवें स्थान का ग्रह बल युक्त हो तो वह अपनी दिशा को प्राप्त कराता है ॥ ७ ॥

यात्रासमय वर्णन।

धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता
शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या ।
रवौ कर्कमीनालिसंस्थेऽतिदीर्घा
जनुः पंचसप्तत्रितारश्च नेष्टाः ॥ ८ ॥

अन्वयः—रवौ धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता (सुखदा) 'भवति'। शनिज्ञोशनोराशिगे रवौ (मकरकुम्भमिथुनकन्यावृषतुलाराशिषु स्थिते रवौ) यात्रा मध्या (मध्यमफलदा) 'भवति'। कर्कमीनालिसंस्थे (कर्कमीनवृश्चिकराशिषु

स्थिते रवौ) 'यात्रायाः' अतिदीर्घा जनुः (अतिदीर्घकालात् प्रत्यागमनं) 'स्यात्'। 'यात्रायां' पञ्चसप्तत्रितारश्च नेष्टाः ॥ ८ ॥

भाषा—धन, मेष और सिंह राशि के सूर्य में यात्रा शुभदायक होती है, मकर कुम्भ मिथुन कन्या वृष तुला राशि के सूर्य में मध्यम और कर्क मीन तथा वृश्चिक के सूर्य में यात्रा करने वाला बहुत रोज के बाद घर आता है। यात्रा में प्रथम पांचवीं सातवीं और तीसरी तारा शुभ नहीं होती ॥ ८ ॥

यात्रा में तिथिशुद्धिविचार।

न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो
सिताद्या तिथिः पूर्णिमाऽमा न रिक्ता।
हयादित्यमित्रेन्दुजीवांत्यहस्त-
श्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता ॥ ९ ॥

अन्वयः—न षष्ठी न द्वादशी न अष्टमी न सिताद्या तिथिः (शुक्लप्रतिपत्) न पूर्णिमा अमा (अमावास्या) न रिक्ता 'एताः तिथयः यात्रायामनिष्टाः' हयादित्यमित्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैः (एभिर्नक्षत्रैः) एव यात्रा प्रशस्ता भवति ॥९॥

भाषा—शुक्लपक्ष की षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी, प्रतिपदा, पौर्णिमा, अमावस्या, चौथ, चतुर्दशी और नवमीको यात्रा श्रेष्ठ नहीं है। अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, हस्त और श्रवण इन नक्षत्रों में यात्रा श्रेष्ठ होती है ॥ ९ ॥

वारशूल और नक्षत्रशूल।

न पूर्वदिशि शक्रभे न विधुसौरिवारे तथा
न चाजपदभे गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः।
न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधेऽर्यमर्क्षे तथा
न सौम्यककुभि व्रजेत् स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥१०॥

अन्वयः—न शक्रभे (ज्येष्ठायां) तथा विधुसौरिवारेऽपि पूर्वदिशि न 'व्रजेत्'। अजपादभे (पूर्वाभाद्रपदे) गुरौ (बृहस्पतिवासरे) यमदिशि (दक्षिणे) न व्रजेत्। इनदैत्येज्ययोः (रविशुक्रयोः) धातृभे (रोहिणीनक्षत्रे) कुजबुधे

(मंगलबुधवासरे) तथाऽर्यमर्क्षे (उत्तराफाल्गुन्यां) स्वजयजीवितार्थी बुधः सौम्ये ककुभि (उत्तरस्यां दिशि) न व्रजेत् ॥ १० ॥

भाषा––ज्येष्ठा नक्षत्र और सोमवार तथा शनिवार को पूर्व, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण, शुक्रवार तथा रोहिणी नक्षत्र में पश्चिम और मंगल तथा बुधवार को उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा को न जाना चाहिये ॥ १० ॥

कालविचार ।

पूर्वाह्ने ध्रुवमिश्रभैर्न नृपतेर्यात्रा न मध्याह्नके
तीक्ष्णाख्यैरपराह्नके न लघुभैर्नो पूर्वरात्रे तथा ।
मित्राख्यैर्न च मध्यरात्रिसमये चौग्रैस्तथा नोत्तरे
रात्र्यंते हरिहस्तपुष्यशशिभिः स्यात्सर्वकाले शुभा ॥११॥

अन्वयः—ध्रुवमिश्रभैः (एभिर्नक्षत्रैः) पूर्वाह्ने नृपतेर्यात्रा न 'शस्ता' तीक्ष्णाख्यैः (नक्षत्रैः) मध्याह्नके (मध्याह्नकाले) लघुभैः अपराह्नके, मित्राख्यैः पूर्वरात्रे, तथा उग्रैः (नक्षत्रैः) मध्यरात्रिसमये 'यात्रा न शुभा भवति' । चरैः राव्यन्ते 'यात्रा न शुभा' । हरिहस्तपुष्यशशिभिः (श्रवणहस्तपुष्यमृगशिरानक्षत्रैः) सर्वकाले यात्रा शुभा 'स्यात्' ॥११॥

भाषा––तीनों उत्तरा, रोहिणी, विशाखा और कृत्तिका इन नक्षत्रों के पूर्वाह्नकाल में राजा का यात्रा करना शुभ होता है । मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा नक्षत्र के मध्याह्नकाल में यात्रा करना अच्छा नहीं होता, हस्त, पुष्य, अश्विनी और अभिजित् नक्षत्र के अपराह्नकाल में यात्रा अशुभ होती है । मृगशिरा रेवती चित्रा और अनुराधा इन नक्षत्रों के पूर्व भाग रात्रि में और स्वाती पुनर्वसु, श्रवण धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र के अन्य भाग में यात्रा का करना शुभ नहीं होता । श्रवण, हस्त, पुष्य, मृगशिरा इन नक्षत्रों में दिनरात चाहे जिस समय यात्रा करे, शुभ है ॥११॥

नक्षत्रों की वर्ज्य घड़ी ।

पूर्वाग्निपित्र्यंतकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरंगमाः स्युः ।
स्वातीविशाखेंद्रभुजंगमानां नाड्यो निषिद्धा मनुसंमिताश्च ॥१२॥

अन्वयः—पूर्वाग्निपित्र्यंतकतारकाणां (पूर्वात्रयकृत्तिकामघानक्षत्राणां) भूपप्रकृत्युग्रतुरंगमाः (षोडशैकविंशैकादशघट्यः) 'निषिद्धाः'। स्वातीविशाखेन्द्रभुजंगमानां (नक्षत्राणां) मनुसम्मिताः नाड्यः (चतुर्दश घट्यः) निषिद्धाः स्युः ॥ १२ ॥

भाषा—तीनों पूर्वा में प्रथमकी सोलह घड़ी, कृत्तिकामें इक्कीस घड़ी, मघा में ग्यारह घड़ी, भरणी में सात घड़ी और स्वाती विशाखा आश्लेषा और ज्येष्ठा में चौदह घड़ी निषिद्ध हैं ॥ १२ ॥

वर्ज्य घड़ी।

पूर्वार्द्धमाग्नेयमघानिलानां त्यजेद्धि चित्राहियमोत्तरार्द्धम्।
नृपः समस्तां गमने जयार्थी स्वातीं मघां चौशनसो मतेन ॥१३॥

अन्वयः—आग्नेयमघानिलानां (कृत्तिकामघास्वातीनां) पूर्वार्द्धम् त्यजेत् चित्राहियमोत्तरार्द्धम् 'त्यजेत्'। उशनशः (शुक्राचार्यस्य) मतेन जयार्थी (जयाभिलाषी) नृपः गमने (यात्रायां) स्वातीं मघां समस्तां (सम्पूर्णां) 'त्यजेत्' ॥ १३ ॥

भाषा—कृत्तिका मघा और स्वाती नक्षत्र के पूर्वार्ध और चित्रा आश्लेषा भरणी नक्षत्र का उत्तरार्द्ध यात्रा में जय की इच्छा से त्यागना चाहिये। शुक्राचार्य के मत से स्वाती और मघा नक्षत्र समग्र ही त्याग देना उचित होता है ॥ १३ ॥

नक्षत्रों की जीवपक्षादि संज्ञा।

तमोभुक्तताराः स्मृता विश्वसंख्या शुभो जीवपक्षो मृताश्चापि भोग्याः।
तदाक्रांतभं कर्तरीसंज्ञमुक्तं ततोऽक्षेंदुसंख्यं भवेद्ग्रस्तनाम ॥१४॥

अन्वयः—तमोभुक्तताराः (राहुभुक्तताराः) विश्वसंख्या (त्रयोदशसम्मिताः) भोग्याः जीवपक्षः शुभः। ते विश्वसंख्या मृताः (मृतपक्षकाश्च) तदाक्रान्तभं कर्तरीसंज्ञं उक्तम्। ततोक्षेन्दुसंख्यं ग्रस्तनाम भवेत् ॥ १४ ॥

भाषा—राहु के भोग के तेरह नक्षत्रों की जीवपक्ष संज्ञा है, जो शुभ है और राहुक्रांत नक्षत्र से भोग्य तेरह नक्षत्रों की मृतपक्ष संज्ञा है, जिस पर राहु रहता, उसकी कर्तरी संज्ञा है और पन्द्रहवें नक्षत्र की ग्रस्त संज्ञा है ॥ १४ ॥

मार्तण्डे मृतपक्षगे हिमकरश्चेज्जीवपक्षे शुभा
यात्रा स्याद्विपरीतगे क्षयकरी द्वौ जीवपक्षे शुभा ।
ग्रस्तर्क्षं मृतपक्षतः शुभकरं ग्रस्तात्तथा कर्त्तरी
यायी दुःस्थितिमान् रविर्जयकरौ तौ द्वौ तयोर्जीवगौ ॥१५॥

अन्वयः—मार्त्तण्डे (सूर्ये) मृतपक्षगे 'सति' हिमकरः चेज्जीवपक्षे 'स्यात् तदा' यात्रा शुभा 'भवति' । विपरीतगे (सूर्ये जीवपक्षे चन्द्रे मृतपक्षे स्यात् तदा) यात्रा क्षयकरी (विनाशकारिणी) 'स्यात्' । द्वौ (सूर्यचन्द्रौ) जीवपक्षे 'स्यातां चेत्तदा' यात्रा शुभा (शुभकरी) 'स्यात्' । मृतपक्षतः ग्रस्तर्क्षं शुभकरं 'स्यात्' (ग्रस्तनक्षत्रात्) कर्तरी शुभा 'भवति' । इन्दुः (चन्द्रः) यायी (गमनशीलः) 'स्यात्' । रविः (सूर्यः) स्थितिमान् 'भवेत्' । तौ द्वौ (जीवपक्षगौ) तयोः जयकरौ 'स्याताम्' ॥ १५ ॥

भाषा—मृतपक्ष में सूर्य और जीवपक्ष में चन्द्रमा हो तो यात्रा शुभ होती है, जीवपक्ष सूर्य हो और मृतपक्ष में चन्द्रमा हो तो यात्रा करनेवाला नाशको प्राप्त होता है। चन्द्रमा सूर्य दोनों जीवपक्ष में हों तो यात्रा शुभ होती है और मृतपक्ष नक्षत्र से ग्रस्त नक्षत्र अर्थात् पन्द्रहवां नक्षत्र शुभ है और सूर्य जीवपक्ष में हो तो किलायुक्त राजा की जीत हो और चन्द्रमा जीवपक्ष में हो तो चढ़नेवाले राजा की जीत हो और दोनों जीवपक्ष में हों तो मेल करा देवें ॥ १५ ॥

कुलाकुलादियोग वर्णन ।

स्वात्यंतकाहिवसुपौष्णकरानुराधादित्य-
ध्रुवाणि विषमास्तिथयोऽकुलाः स्युः ।
सूर्येन्दुमंदगुरवश्च कुलाकुलज्ञो
मूलांबुपेशविधिभं दशषट्द्वितिथ्यः ॥ १६ ॥

पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहना द्वीशेन्द्रचित्रास्तथा
शुक्रारौ कुलसंज्ञकाश्च तिथयोऽर्काष्टेंद्रवेदैर्मिताः ।
यायी स्यादकुले जयी च समरे स्थायी च तद्वत्कुले
संधिः स्यादुभयोः कुलाकुलगणे भूमीशयोर्युध्यतोः ॥१७॥

अन्वयः—स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्णकरानुराधादित्यध्रुवाणि विषमाः तिथयः सूर्येन्दुमन्दगुरवः (रविचन्द्रभौमवृहस्पतिवासराः) 'एते सर्वेऽपि' अकुलाः (अकुलसंज्ञकाः) 'भवन्ति'। ज्ञो मूलाम्बुपेशविधिभं (बुधवासरः मूलशतभिषाआर्द्राभिजिन्नक्षत्राणि) दशषड्द्वितिथ्यः (दशमीषष्ठीद्वितीयातिथयः) कुलाकुलसंज्ञकाः भवन्ति ॥ १६ ॥

अन्वयः—पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्राः तथा शुक्रारौ (शुक्रमंगलवासरौ) अर्काऽष्टेन्द्रवेदैर्मिताः (द्वादशी अष्टमी चतुर्दशी चतुर्थीतिथयः) 'सर्वेऽपि' कुलसंज्ञकाः 'स्युः'। अकुले (अकुलसंज्ञके तिथिवारनक्षत्रगणे) समरे 'सति' यायी राजा जयी (विजयी स्यात्) तद्वत् कुले (कुलसंज्ञके समरे सति) स्थायी (भवनस्थः) राजा विजयी 'स्यात्'। कुलाकुलगणो युध्यतोः उभयोः (द्वयोः भूमीशयोः) सन्धिः स्यात् ॥ १७ ॥

भाषा—स्वाती, भरणी, आश्लेषा, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा और रोहिणी ये बारह नक्षत्र विषम हैं। प्रतिपदा, तीज, पंचमी, सप्तमी, नवमी, एकादशी और पूर्णिमा ये आठ तिथियाँ तथा एतवार, सोमवार, शनिश्चर और वृहस्पति ये चार वार अकुल-संज्ञक हैं। बुधवार, मूल, शतभिषा और आर्द्रा अभिजित् ये चार नक्षत्र और दशमी, छठ, द्वितीया, ये न्यारे २ कुलाकुलसंज्ञक हैं ॥१६॥ तीनों पूर्वा, अश्विनी, पुष्य, मघा, मृगशिरा, श्रवण, कृत्तिका, विशाखा, ज्येष्ठा और चित्रा ये बारह नक्षत्र शुक्र मंगल वार द्वादशी अष्टमी चतुर्थी ये चार तिथियाँ एक एक के प्रति कुलसंज्ञक है। यदि अकुल संज्ञक तिथि वार नक्षत्रों में युद्ध आरम्भ हो तो राजा की जय हो और कुलाकुलयोग में परस्पर मिलाप हो जावे ॥ १७ ॥

मार्ग में राहुविचार।

स्युर्धर्मे दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राण्यथार्थे
याम्याजांघ्रींद्रकर्णादितिपितृपवनोडून्यथो भानि कामे।
वह्न्यार्द्राबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानिमोक्षेथ रोहि-
ण्याप्यैद्वंत्यर्क्षविश्वार्यमभदिनकरर्क्षाणि पथ्यादिराहौ ॥१८॥

अन्वयः—पथ्यादिराहौ (पथिराहुचक्रे) दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राणि

धर्मे (धर्मस्थाने) स्युः । याम्यधाजाङ्घ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडूनि (एतानि नक्षत्राणि) अर्थे स्युः । अथ वह्न्यार्द्राबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि (नक्षत्राणि) कामे स्युः । अथ रोहिण्याप्येन्द्वन्त्यर्क्षविश्वार्यमभदिनकरर्क्षाणि (रोहिणीपूर्वाषाढ़ामृगशिरोरेवतीउत्तराषाढ़ोत्तराफाल्गुनीहस्तैतानि नक्षत्राणि) मोक्षे स्युः ॥ १८ ॥

ध०	अ०	का०	मो०
अ०	भ०	कृ०	रो०
पु०	पु०	आ०	मृ०
आ०	म०	पु०	उ०
वि०	स्वा०	चि०	ह०
अ०	ज्ये०	मू०	पू०
ध०	श्र०	०	उ०
श०	पू०	उ०	रे०

भाषा—अश्विनी पुष्य आश्लेषा धनिष्ठा शतभिषा विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों को धर्मस्थान में स्थापन करै । भरणी पूर्वा भाद्रपद ज्येष्ठा श्रवण पुनर्वसु मघा और स्वाती इन्हें अर्थस्थान में स्थित करै । कृत्तिका आर्द्रा उत्तराभाद्रपद चित्रा अभिजित् और पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र को काम स्थान में लिखे । रोहिणी पूर्वाषाढ मृगशिरा रेवती उत्तराषाढ उत्तराफाल्गुनी और हस्त ये नक्षत्र मोक्षस्थान में लिखे जाते हैं । इसी को पथिराहुचक्र कहते हैं ॥१८॥

राहुचक्रफलम् ।

धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी वित्तगे धर्ममोक्षस्थितः शस्यते ।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभने मोक्षगे केवलं धर्मगः प्रोच्यते ॥१९॥

अन्वयः—धर्मगे (धर्मभागे) भास्करे (सूर्ये स्थिते सति) वित्तमोक्षे (अर्थमोक्षे) शशी (चन्द्रः) 'स्थितश्चेत्' शस्यते (शुभात्मको भवति) । (अर्थस्थाने) 'भास्करे सति' धर्ममोक्षस्थितः 'शशी' शस्यते । अथ कामस्थाने स्थिते 'सूर्ये' धर्ममोक्षार्थगः 'शशी' शोभनः 'भवति' । मोक्षगे 'सूर्ये' धर्मगः 'शशी' शोभनः प्रोच्यते । 'अर्थात्तद्विपरीतावस्थितयोः शशिसूर्ययोरशुभत्वं स्यात्' ॥ १९ ॥

भाषा—धर्ममार्ग में सूर्य स्थित हो और अर्थ तथा मोक्षस्थान में चन्द्रमा हो तो शुभ होता है । अर्थस्थान में सूर्य और धर्म तथा मोक्षस्थान में

चन्द्रमा हो तो भी शुभ है। कामस्थान में स्थित रवि और धर्म अर्थ मोक्ष इन स्थानों में स्थित चंद्रमा हो तो शुभ है। मोक्ष में सूर्य और धर्म में चंद्रमा हो तो भी शुभ होता है। इनसे विपरीत स्थित सूर्य-चन्द्रमा यात्रा को अशुभ फल दिखलाते हैं ॥ १९ ॥

तिथिचक्र।

पौषे पक्षत्यादिका द्वादशैवं तिथ्यो माघादौ द्वितीयादिकास्ताः।
कामात्तिस्रः स्युस्तृतीयादिवच्च याने प्राच्यादौ फलं तत्र वक्ष्ये ॥२०॥
सौख्यं क्लेशो भीतिरर्थागमश्च शून्यं नैःस्व्यं निःस्वता मिश्रता च।
द्रव्यक्लेशो दुःखमिष्टाप्तिरर्थो लाभः सौख्यं मंगलं वित्तलाभः ॥२१॥
लाभो द्रव्याप्तिर्धनं सौख्यमुक्तं भीतिर्लाभो मृत्युरर्थागमश्च।
लाभः कष्टं द्रव्यलाभः सुखं च कष्टः सौख्यं क्लेशलाभौ सुखं च ॥२२॥
सौख्यं लाभः कार्यसिद्धिश्च कष्टः क्लेशः कष्टात्सिद्धिरर्थो धनं च।
मृत्युर्लाभो द्रव्यलाभौ च शून्यं शून्यं सौख्यं मृत्युरत्यंतकष्टः ॥२३॥

अन्वयः--पौषे 'मासे' पक्षत्यादिकाः (कृष्णशुक्लप्रतिपदमारभ्य) द्वादश तिथ्यः लेख्याः। माघादौ (माघादिमासेषु) द्वितीयादिकास्तिथयः 'लेख्याः' (यथा माघे द्वितीयादिकाः, फाल्गुने तृतीयादिकाः, चैत्रे चतुर्थ्यादिकाः, वैशाखे, पञ्चम्यादिकाः, द्वादश तिथयः लेख्याः) ताः तिथयः क्रमात् त्रयोदशीतः तिस्रः त्रयोदशीचतुर्दशीपञ्चदश्यस्तृतीयादिवत्स्युः। यथा त्रयोदशी तृतीयावत, चतुर्दशी चतुर्थीवत्, पञ्चदशी पञ्चमीवत् स्मातः) तत्र प्राच्यादौ याने (यात्रायाम्) फल वक्ष्ये (कथयिष्ये)। सौख्यं क्लेशः भीतिः अर्थागमश्च शून्यं नैःस्व्यम् (दारिद्रयम्) निःस्वता मिश्रता द्रव्यक्लेशः दुःखं इष्टार्थलाभः सौख्यं मंगलं वित्तलाभः लाभः द्रव्याप्तिः धनं सौख्यं भीतिः लाभः मृत्युः अर्थागमः लाभः कष्टं द्रव्यलाभः सुखं कष्टं सौख्यं लाभः कार्यसिद्धिः कष्टं क्लेशः कष्टात् सिद्धिः अर्थः धनञ्च मृत्युः लाभः द्रव्यलाभः शून्यं सौख्यं अत्यन्तकष्टम् 'एतत्सर्वं द्वितीयादितिथिषु ज्ञेयम्' ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

भाषा--पौष के महीने से बारह मास बराबर लिखे और उतने ही (१२) कोष्ठ नीचे लिखे अर्थात् १४४ कोठों में शुक्ल से कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तक की तिथियों को लिखे ॥२०॥ दक्षिण पश्चिम उत्तर इनको

क्रम से सौख्य, क्लेश, भीति, अर्थागम, शून्य, नैःश्व्य, निःस्वत्व, नम्रता, द्रव्यक्लेश, दुःख, इष्टाप्ति, अर्थलाभ, सौख्य, मंगल, वित्तलाभ ॥ २१ ॥ लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सौख्य, भीतिलाभ, मृत्यु, अर्थागमलाभ, कष्ट, द्रव्यलाभ, सुख, कष्ट, सौख्य, क्लेशलाभ, सुख, सौख्यलाभ, कार्यसिद्धि, कष्ट, क्लेश, कष्टसिद्धि, अर्थ, धन, मृत्युलाभ, द्रव्यलाभ, शून्य, शून्य, सौख्य, मृत्यु, अत्यन्त कष्ट आदि फलों को जाने ॥ २२ ॥ २३ ॥

तिथ्यृक्षवारयुतिरद्रिगजाग्नितष्टा
स्थानत्रयेऽत्र वियति प्रथमेऽतिदुःखी ।
मध्ये धनक्षतिरथो चरमे मृतिः
स्यात्स्थानत्रयेऽङ्कयुजि सौख्यजयौ निरुक्तौ ॥२४॥

अन्वयः—तिथ्यृक्षवारयुतिः (तिथिनक्षत्रवाराणां योगः) स्थानत्रये 'स्थाप्या' अद्रिगजाग्नितष्टा (सप्ताष्टत्रयैर्भक्तावशिष्टा सती) प्रथमे वियति (शून्ये सति ।) 'यायी' अतिदुःखी 'स्यात्'। मध्ये (द्वितीयस्थाने) वियति 'सति' धनक्षतिः (द्रव्यनाशः) अथ चरमे (तृतीयस्थाने) वियति 'सति' मृतिः (मरणं) स्यात् । स्थानत्रयेऽङ्कयुजि (स्थानत्रयेऽपि ऽयंकेऽत्रस्थिते सति) सौख्यजयः निरुक्तः (कथितः) ॥ २४ ॥

भाषा—शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से तिथि, वार और नक्षत्रों को पृथक् २ स्थापन कर क्रम से सात आठ और तीन का भाग देने से यदि प्रथम स्थान में शून्य बचे तो यात्रा करने वाला दुःखी हो, द्वितीय स्थान में बचने से धननाश, तृतीय स्थान में शून्य बचने से मृत्यु और तीनों स्थानों में शून्य न बचे तो सौख्य और जय होता है ॥ २४ ॥

महाडल और भ्रमणदोष ।

रवेर्भतोऽब्जभोन्मितिर्नगावशेषिता द्व्यगा ।
महाडलो न शस्यते त्रिषण्मिता भ्रमो भवेत् ॥ २५ ॥

अन्वयः—रवेर्भतः (सूर्यनक्षत्रात्) अब्जभोन्मितिः (चन्द्रनक्षत्रस्य गणना कार्या) नगावशेषिता (सप्तभिरेवावशेषिता) द्व्यगा (अङ्कद्वये शेषे सति सप्तशेषिता वा भवेत्तदा) महाडलः (महाडलाभिधानः योगः यात्रायां) न शस्यते

(न शुभकारी भवति) त्रिषण्मिता (त्रिशेषमिता षट्शेषमिता वा स्यात्तदा) भ्रमः (भ्रमाख्यः योगः) भवेत् 'सोऽपि यात्रायां न शस्यते' ॥ २५ ॥

भाषा—सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्रतककी गणना करने से जो मिले, उसमें सात का भाग देवै। यदि दो या शून्य बचै तो महाडल दोष कहे जो यात्रा में अशुभ है। तीन या छः बचे तो भ्रमण नाम का दोष होता है, यह भी यात्रा में अशुभ ही है ॥ २५॥

हैम्वरयोग।

शशांकभं सूर्यभतोऽत्र गण्यं पक्ष्यादितिथ्या दिनवासरेण।
युतं नवाप्तं नगशेषकं चेत् स्याद्धैम्वरं तद्गमनेऽतिशस्तम् ॥२६॥

अन्वयः—अत्र सूर्यभतः शशांकभं गण्यं पक्षादितिथ्यादिदिनवासरेण युतं नवाप्तं (नवभिर्भक्तम्) नगशेषकं (सप्तावशिष्टम्) 'सत्' हैंवरम् (हैंवराख्यम्) गमने अतिशस्तं (अतिशुभात्मकं भवति) ॥ २६ ॥

भाषा—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनकर तिथि-वार मिला देवे और नौ का भाग देवे, यदि सात बचे तो हैंवरयोग कहना—जो यात्रा में उत्तम है ॥ २६ ॥

राशिक्रम से घातचन्द्र वर्णन।

भूपंचांकद्व्यंगदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचंद्रः।
मेषादीनां राजसेवाविवादे यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः॥२७॥

अन्वयः—मेषादीनां (मेषादिराशीनां) भूपञ्चाङ्कद्व्यङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च (प्रथमपंचमनवमद्वितीय) षष्ठदशमतृतीयसप्तमचतुर्थअष्टमैकादशद्वादशाः घातश्चाख्यचन्द्रः स्यात्। राजसेवाविवादे युद्धाद्ये च वर्ज्यः अन्यत्र (विवाहान्नाशनादि मंगलकृत्ये) न वर्ज्यः ॥ २७ ॥

भाषा—मेष और वृषराशि को पांचवां, मिथुन को नवां, कर्क को दूसरां, सिंह को छठां, कन्या को दसवां तुला को तीसरा, वृश्चिक को सातवां, धनको चौथा, मकर को आठवां, कुंभ को ग्यारहवाँ, मीन को बारहवाँ घातचन्द्र कहलाता है जो राजसेवा विवाह युद्ध आदि कार्यों में वर्जित है, पर और जगहों में शुभ होता है ॥ २७ ॥

घात नक्षत्र ।

आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे ।
मूलब्राह्माजपादर्क्षे पित्र्यमूलाजभे क्रमात् ॥ २८ ॥
रूपद्व्यग्न्यग्निभूरामद्व्यब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः ॥
घातचन्द्रे धिष्ण्यपादा मेषाद्वर्ज्या मनीषिभिः ॥२९॥

अन्वयः—आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे (कृत्तिकाचित्राशतभिषामघा-धनिष्ठाआर्द्रानक्षत्रेषु) मूलब्राह्माजपादर्क्षे (मूलरोहिणीपूर्वाभाद्रपदेषु च) पित्र्यमूलाजभे क्रमात् 'मेषादिराशीनां घातचन्द्रा ज्ञेयाः' ॥ २८ ॥ रूपद्व्यग्न्यग्निभूरामद्व्यग्न्यब्ध्यब्धियुगाग्नयः धिष्ण्यपा (पूर्वोक्तकृत्तिकादि-नक्षत्राणां क्रमशः प्रथम द्वितीयादयः पादाः) मेषात् (मेषराशिमारभ्य) मनी-षिभिः (विद्वद्भिः) घातचन्द्रे वर्ज्याः (ज्ञेयाः) ॥ २९ ॥

भाषा--कृत्तिका, चित्रा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा, आर्द्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद, मूल और उत्तराभाद्रपद, मेषादि बारहों राशिके क्रमसे घात नक्षत्र हैं ॥ २८ ॥ किसी २ आचार्य का मत है कि मेष राशिको कृत्तिका का प्रथम चरण, वृषराशि को चित्रा का दूसरा चरण, मिथुन राशि को शतभिषा का तीसरा चरण, कर्क राशि को मघा का तीसरा चरण, सिंह राशिको धनिष्ठा का प्रथम चरण, कन्या राशि को आर्द्रा का तीसरा चरण, तुलाराशि को मूलका दूसरा चरण, वृश्चिक राशि को रोहिणी का चौथा चरण, धन राशि को पूर्वभाद्रपद का तीसरा चरण, मकर राशिको मघा का चौथा चरण, मीनराशि को उत्तरा भाद्र-पदका तीसरा चरण घात है। इसको इसी क्रम से जाने ॥ २९ ॥

तिथिघातविचार ।

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रानृयुक्कर्कटकेऽथ नंदा ।
कौर्प्याजयोर्नक्रघटे च रिक्ता जया धनुःकुंभहरौ न शस्ता ॥३०॥

अन्वयः—गोस्त्रीझषे (वृषकन्यामीनेषु) पूर्णा (पंचमी दशमी पूर्णिमा) घाततिथिः । अथ नृयुक्कर्कटके (मिथुनकर्के) भद्रा (द्वितीया सप्तमी द्वादशी) घाततिथिः । कौर्प्याजयोः (वृश्चिकमेषयोः) नन्दा (प्रतिपत्षष्ठी एकादशी)

'घाततिथिः'। नक्रघटे (मकरे तुलायां च) रिक्ता (चतुर्थी नवमी चतुर्दशी) 'घाततिथिः' 'यात्रायां' न शस्ता (त्याज्या इत्यर्थः) ॥ ३० ॥

भाषा—वृष कन्या और मीन राशिको पंचमी दशमी और पूर्णिमा, मिथुन और कर्क राशि को द्वितीया द्वादशी और सप्तमी, वृश्चिक और मेषराशिको प्रतिपदा षष्ठी एकादशी, मकर तथा तुलाराशि को चौथ चतुर्दशी और नवमी, धन-कुंभ और सिंह राशिको तृतीया त्रयोदशी अष्टमी तिथि यात्रा में अशुभ होती है ॥ ३० ॥

घातवारविचार।

नक्रे भौमे गोहरिस्त्रीषु मंदश्चंदो द्वंद्वेऽर्कोऽजभे ज्ञश्च कर्के।
शुक्रः कोदंडालिमीनेषु कुंभे जूके जीवो घातवारा न शस्ताः॥३१॥

अन्वयः—नक्रे (मकरे) भौमः (भौमवासरः) गोहरिस्त्रीषु (वृषसिंह-कन्यासु) मन्दः (शनिवारः) द्वन्द्वे (मिथुने) चन्द्रः, (मेषे) अर्कः (रवि-वासरः) कर्के ज्ञः (बुधवासरः) कोदण्डालिमीनेषु (धनवृश्चिकमीनेषु) शुक्रः कुम्भे जूके (तुलायां) जीवः (वृहस्पतिवासरः) 'एते' घातवारा न शस्ता (यात्रादिषु सर्वथा त्याज्याः) ॥ ३१ ॥

भाषा—मकर राशि के पुरुषों को मंगलवार, वृष सिंह और कन्या को शनैश्चर, मिथुन को सोमवार, मेष को रविवार, कर्क को बुधवार, धन मीन और वृश्चिक को शुक्रवार तथा कुंभ और तुला को वृहस्पतिवार घात है, जिसमें यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥३१॥

पुनः घातनक्षत्रोंका विचार।

मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यंबुपान्त्यभम्।
याम्यं ब्राह्मेशसार्पं च मेषादेर्घातभं न सत्॥ ३२ ॥

अन्वयः—मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् (मघाहस्तस्वातीअनुराधामूलश्रवणशतभिषारेवतीनक्षत्राणि) याम्ये ब्रह्मेशसार्पञ्च (भरणी रोहिणी आर्द्रा अश्लेषा च) मेषादेः (क्रमशः मेषादीनां) घातभं (घातनक्षत्रं) 'यात्रादिषु' न सत् ॥ ३२ ॥

भाषा—मेषको मघा, वृषको हस्त, मिथुन को स्वाती, कर्कको अनु-

राधा, सिंहको मूल, कन्याको श्रवण, तुलाको शतभिषा, वृश्चिक को रेवती, धनको भरणी, मकर को रोहिणी, कुम्भको आर्द्रा, मीनको आश्लेषा घात नक्षत्र है, जो यात्रा में श्रेष्ठ नहीं है ॥ ३२ ॥

घातलग्नोंका विचार।

भूमिद्व्यब्ध्यद्रिदिक्सूर्यांगाष्टांकेशाग्निसायकाः।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत्सुधीः ॥ ३३ ॥

अन्वयः—भूमिद्व्यब्ध्यद्रिदिक्सूर्याः (मेषवृषकर्कतुलामकरमीनाः) अंगाष्टांकेशाष्टसायकाः (कन्यावृश्चिकधनकुम्भमिथुनसिंहराशयः) मेषादिघातलग्नानि यात्रायां सुधीः (विद्वान्) वर्जयेत् (सर्वथा परित्यजेत्) ॥ ३३ ॥

भाषा—मेष आदि बारहों राशियोंको क्रमसे मेष वृष कर्क तुला मकर मीन कन्या वृश्चिक कुभ मिथुन और सिंह घात लग्न है जो यात्रा में वर्जित है ॥ ३३ ॥

पूर्वादि दिशाओं में घाततिथि और योगिनी दोष।

नवभूम्यः शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्ककृताः शक्ररसास्तुरंगतिथ्यः।
द्विदिशोऽमावसवश्च पूर्वतः स्युस्तिथयः संमुखवामगा न शस्ताः ॥३४॥

अन्वयः—पूर्वतः (पूर्वदिशमारभ्य) 'दश दिक्षु योगिनी ज्ञेयम्' 'पूर्वस्यां' नवभूम्यः (नवमी प्रतिपद्) 'आग्नेय्यां' शिववह्नयः (एकादशी तृतीया) 'दक्षिणस्यां' अक्षविश्वे (तृतीया त्रयोदशी) 'नैर्ऋत्यां' अर्ककृताः (द्वादशी चतुर्थी) 'पश्चिमे' शक्ररसाः (चतुर्दशी षष्ठी) 'वायव्ये' तुरङ्गतिथ्यः (सप्तमी पूर्णिमा) 'उत्तरस्यां' द्विदिशः (द्वितीया दशमी) 'ईशाने' अमावसवश्च (अमावास्याष्टमी च) तिथयः सम्मुखवामगा न शस्ताः ॥ ३४ ॥

भाषा—प्रतिपदा और नवमी को पूर्व दिशा में, एकादशी और तीज को अग्निकोण में, पंचमी त्रयोदशी को दक्षिण में, चतुर्थी और द्वादशी को नैर्ऋत्यकोण में, षष्ठी चतुर्दशी को पश्चिम दिशा में, सप्तमी और अमावस्या को वायव्य कोण में, द्वितीया और दशमी को उत्तर दिशा में, अमावस्या और अष्टमी को ईशान कोण में योगिनी का वास होता है, जो सन्मुख और बायें अशुभ तथा पीछे और दहिने शुभ होती है ॥ ३४ ॥

कालपाशवर्णन ।

कौवेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्ये सन्मुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे संमुखे वर्जनीयौ ॥३५॥

अन्वयः—कौवेरीतः (उत्तरतः) अर्काद्ये वारे वैपरीत्येन (विपरीतक्रमेण) कालः तस्य (कालस्य) सम्मुखे पाशः 'ज्ञेयः' (यथा-रवावुत्तरे कालः दक्षिणे पाशः इतिवत्) एतौ (कालपाशौ) रात्रौ वैपरीत्येन गण्यौ 'एतौ यात्रायुद्धे सम्मुखे 'सर्वदा' वर्जनीयौ 'स्याताम्' ॥ ३५ ॥

भाषा—उत्तर दिशा से सूर्यादि वारों में विपरीत करके कालपाश जानना । जैसे—रविवार को उत्तर में, चन्द्रवार को वायव्य में ऐसे और पाशको उलटे क्रमसे गिनना चाहिये—जो यात्रा में अति निन्दित है ॥३५॥

परिघदंडयोग ।

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु सप्तसप्तानलर्क्षतः ।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं परिघं नैव लंघयेत् ॥ ३६ ॥

अन्वयः—पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु अनलर्क्षतः (कृत्तिकातः) सप्त सप्त भानि (यथा—पूर्वस्यां कृत्तिकातः सप्तभानि, मघातः सप्त दक्षिणस्यां, अनुराधातः सप्त पश्चिमायाम्, धनिष्ठातः सप्त भान्युत्तरस्याम् तत्र) वायव्याग्नेयदिक्संस्थं परिघं 'दण्डं' नोल्लंघयेत् ॥ ३६ ॥

भाषा—कृत्तिका से सात नक्षत्र पूर्व में, मघा से सात नक्षत्र दक्षिण में, अनुराधा से सात नक्षत्र पश्चिम और उत्तर में, इस चतुष्कोण चक्र में अग्निकोण और वायव्यकोण में परिघ रेखा का उल्लंघन न कर जिस दिशा का नक्षत्र हो उसी दिशा में यात्रा करनी चाहिये ॥ ३६ ॥

अग्नेर्दिशं नृपभयात्पुरुहूतदिग्भैरेवं प्रदक्षिणगता विदिशोऽथ कृत्ये । आवश्यकेऽपि परिघं प्रविलंघ्य गच्छेच्छूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिरस्ति ॥ ३७ ॥

अन्वयः—नृपः पुरुहूतदिग्भैः (कृत्तिकादिसप्तनक्षत्रैः) अग्नेर्दिशं इयात् (गच्छेत्) । एवं अनेन प्रकारेण विदिशः (नैर्ऋत्यादिकोणे) प्रदक्षिणगतौ आवश्यके कृत्ये 'सति' परिघं प्रविलंघ्य (लंघयित्वा) यदि दिक्तनुशुद्धिः अस्ति 'तदा' शूलं विहाय (परित्यज्य) गच्छेत् (व्रजेत्) ॥ ३७ ॥

भाषा-राजा पूर्व दिशा को कृत्तिकादि नक्षत्रों में अग्निकोण को यात्रा करे, उसी तरह दक्षिण दिशा के नक्षत्रों से नैर्ऋत्यकोण और पश्चिम के नक्षत्र से वायव्य कोण यात्रा करे और उत्तर के नक्षत्रों से ईशानकोण को यात्रा करे तो शुभ है। यदि आवश्यक कार्य हो तो दिक्शूलको त्यागकर यात्रा करे ॥३७॥

सर्वदिग्द्वार नक्षत्र तथा केन्द्र में वक्री ग्रहका विचार।

मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैर्निरुक्ता यात्रा शुभा सर्वदिशासुतज्ज्ञैः।
वक्री ग्रहः केंद्रगतोस्य वर्गे लग्ने दिनं चास्य गमे निषिद्धम्॥३८॥

अन्वयः—मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैः (एभिर्नक्षत्रैः) सर्वदिशासु तज्ज्ञैः (ज्योतिर्विद्भिः) यात्रा शुभा निरुक्ता (कथिता)। 'किन्तु' वक्री ग्रहः केन्द्रगतः अथवास्य लग्ने वर्गः षड्वर्गश्चेत् सोपि अस्य दिनं च गमे (गमने) निषिद्धम् 'उक्तम्' ॥ ३८ ॥

भाषा—अनुराधा, हस्त, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र में सब दिशाओं में यात्रा करना शुभ है, पर वक्री ग्रह केन्द्र में हो तो अशुभ है। वक्री ग्रह का लग्न में षड्वर्ग और दिन भी निषिद्ध है ॥ ३८ ॥

यात्रा में अयनशूलशुद्धिवर्णन।

सौम्यायने सूर्यविधू तदोत्तरां प्राचीं व्रजेत्तौ यदि दक्षिणायने।
प्रत्यग्यमाशां च तयोर्दिवानिशं भिन्नायनत्वेऽथ वधोन्यथा भवेत्॥३९॥

अन्वयः—यदि सूर्यविधू (सूर्यचन्द्रौ) सौम्यायने (उत्तरायणे स्याताम्) तदा उत्तरां (उत्तरदिशं) प्राचीं (पूर्वदिशं वा व्रजेत्) तौ (सूर्यचन्द्रौ) यदि दक्षिणायने 'स्याताम्' 'तदा' प्रत्यक् (पश्चिमां दिशं) यमाशां (दक्षिणां दिशं च) व्रजेत्। अथ (तयोः सूर्यचन्द्रमसोः) भिन्नायनत्वे (अयनभेदे सति) दिवानिशं (अहोरात्रं) व्रजेत्। अन्यथा वधः (मरणं) भवेत् ॥ ३९ ॥

भाषा—सूर्य और चन्द्रमा उत्तरायण में हों तथा उत्तर और पूर्वदिशा में दक्षिणायन सूर्य हो तो दक्षिण और पश्चिम दिशा में एवं जिस अयन में सूर्य हो, उस दिन में दिन को जावे और चन्द्रमा जिस अयनमें हो उस दिन रात्रिको यात्रा करना शुभ होता है ॥३९॥

सन्मुख शुक्रदोष।

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति गौडभ्रमाद्वाथ ककुब्भसंघे।
त्रिधोच्यते संमुख एव शुक्रो यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥ ४०॥

अन्वयः—शुक्रः 'प्राच्यां प्रतीच्यां वा' यस्यां दिशि (उदेति कालवशेनोदयं याति) अथवा गोलभ्रमात् ककुब्भसंघे वा 'एषः' शुक्रः पूर्वोक्तरीत्या त्रिधा उच्यते कथ्यते स शुक्रः यत्र (यस्यां दिशि) उदितः (उदयंगतः) तां दिशं न यायात् (न गच्छेत्) ॥ ४० ॥

भाषा—शुक्र जिस दिशा में उदय हो अथवा दक्षिण उत्तर गोल के भ्रमण से और कृत्तिकादि नक्षत्र करके पूर्वादि दिशा विषे उक्त तीनों में जिस दिशा में उदय हो, वही प्रधान मानने योग्य है। उस दिनकी यात्रा अशुभ होती है ॥४०॥

वक्रास्तादि दोष।

वक्रास्तनीचोपगते भृगोःसुते राजा व्रजन् याति वशं हि विद्विषाम्।
बुधोऽनुकूलो यदि तत्र संचलन् रिपून् जयेन्नैव जयः प्रतीन्दुजे ॥४१॥

अन्वयः—भृगोः सुते (शुक्रे) वक्रास्तनीचोपगते (वक्रोपगते अस्तोपगते नीचोपगते वा) व्रजन् (गच्छन् सन्) राजा विद्विषां (शत्रूणां) वशं याति (निबद्धो भवति) तत्र (शुक्रास्ते) यदि बुधः अनुकूलः (पृष्ठगः) 'स्यात् तदा' सञ्चलन् व्रजन् 'सन्' राजा रिपून् (शत्रून्) जयेत्। प्रतीन्दुजे (बुधे प्रतिकूले सति) गंतुः राज्ञः नैव जयः (पराजय इत्यर्थः) ॥ ४१ ॥

भाषा—शुक्र वक्री, अस्त या नीचका हो और ऐसे समय में राजा युद्ध के लिये जाय तो शत्रु के वश में हो जावे। शुक्र के अस्त में बुध पीछे हो तो जय प्राप्त हो यदि सम्मुख हो तो जय नहीं होती ॥ ४१ ॥

सम्मुख शुक्र का परिहार।

यावच्चन्द्रः पूषभात्कृत्तिकाद्ये पादे शुक्रोन्धो न दुष्टो ग्रहर्क्षे।
मध्ये मार्गे भार्गवास्ते च राजा यावत्तिष्ठेत्संमुखत्वेपि तस्य ॥४२॥

अन्वयः—पूषभात् कृत्तिकाद्ये पादे यावच्चन्द्रः तिष्ठति 'तावत्' शुक्रः अन्धः 'ज्ञेयः'। 'अन्धे शुक्रे' अग्रदक्षे (अग्रे दक्षिणे च) न दुष्टः। राजा मध्ये मार्गेऽपि

भार्गवास्ते (शुक्रेऽस्तंगते सति) तस्य (शुक्रस्य) सम्मुखत्वेऽपि 'शुक्रशुद्धिं यावत्' तिष्ठेत् ॥ ४२ ॥

भाषा—यदि अंध शुक्र हो तो सन्मुख और दक्षिण दोष नहीं होता। रेवती नक्षत्र से कृत्तिका के प्रथम चरण तक शुक्र अंध रहता है। यदि यात्रा करने पर मार्ग में शुक्र अस्त और सन्मुख हो जावे तो वहीं ठहर जाय और शुक्र शुद्ध होने पर यात्रा करनी चाहिये ॥ ४२ ॥

यात्रा में निषिद्ध लग्न ।

कुम्भकुंभांशकौ त्याज्यौ सर्वथा यत्नतो बुधैः ।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे ॥ ४३ ॥

अन्वयः—तत्र (यात्रायाम्) बुधैः (विद्वद्भिः) यत्नतः (उपायेन) सर्वथा कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ (वर्जनीयौ) तत्र (कुम्भकुम्भांशके) प्रयातुः (गमनकर्तुः) नृपतेः (राज्ञः) पदे पदे अर्थनाशः (सम्पद्विनाशः) स्यात् ॥ ४३ ॥

भाषा—कुम्भ लग्न और कुम्भका नवमांश सदैव त्यागने योग्य है। यदि इसमें यात्रा करे तो राजा की लक्ष्मी पद पद पर नाश होती जाती है ॥ ४३ ॥

इष्टानिष्ट लग्न ।

अथ मीनलग्न उतवा तदंशके चालितस्य वक्रमिह वर्त्म जायते ।
जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतस्तदा तदुदये शुभो गमः ॥४४॥

अन्वयः—अथ मीनलग्ने उतवा (अथवा) तदंशके (मीनांशे) चालितस्य (गच्छतः) नृपतेः (राज्ञः) वर्त्म वक्रं (तिर्यक्) जायते। जनिलग्नजन्मभपती 'यदि' शुभग्रहौ भवतः 'तदा' गमः (गमनं शुभः मंगलमयः) स्यात् ॥४४॥

भाषा-मीन लग्न वा मीन लग्न के नवमांश में यदि राजा यात्रा करे तो पीछे फिर आवे, पर जन्म लग्न और जन्मराशिका स्वामी शुभग्रह लग्न में हो तो यात्रा शुभदायक होती है ॥ ४४ ॥

दूसरा योग ।

जन्मराशितनुतोऽष्टमेऽथवा स्वारिभाच्च रिपुभे तनुस्थिते ।
लग्नगा तदधिपा यदाथवा स्युर्गतं हि नृपतेर्मृतिप्रदम् ॥४५॥

अन्वयः—जन्मराशितनुतः 'स्वस्य जन्मराशेः' अष्टमे राशौ तनुस्थिते (लग्नस्थे) 'तथा' स्वारिभात् (स्वशत्रोर्भात्) रिपुभे (षष्ठराशौ) तनुस्थिते 'सति' तदधिपा स्वराशिलग्नाभ्यामष्टमभवने स्वशत्रोर्जन्मराशिलग्नाभ्यां षष्ठभवने स्युः 'तदा' हि (निश्चयेन) नृपतेर्गतं (गमनं) मृतिप्रदं (मरणदायकम्) स्यात् ॥४५॥

भाषा–जिनकी जन्मराशि या जन्मलग्न से आठवीं राशि में लग्न स्थित हो और जाने वाले शत्रु की राशि और लग्न से छठीं राशि में लग्न स्थित हो अथवा अपनी राशि लग्न इनसे अष्टम भवन में और शत्रु की जन्मराशि और लग्न इनसे छठें स्थान में और उनका स्वामी यात्रा लग्न में हो तो यात्रा करने से राजा की मृत्यु होती है ॥ ४५ ॥

शुभलग्न वर्णन।

लग्ने चंद्रे वापि वर्गोत्तमस्थे यात्रा प्रोक्ता वांछितार्थैकदात्री।
अंभोराशौ वा तदंशे प्रशस्तं नौकायानं सर्वसिद्धिप्रदायि ॥४६॥

अन्वयः—'मीनकुम्भव्यतिरिक्ते यस्मिन् कस्मिंश्चिल्लग्ने' वर्गोत्तमस्थे (वर्गोत्तमनवांशगते वा) 'अथवा' चन्द्रे वर्गोत्तमस्थे 'सति' वाञ्छितार्थैकदात्री (मनोऽभीष्टार्थस्याद्वितीया दात्री) अम्भोराशौ (जलचरराशौ) तदंशे (तन्नवांशे वा) नौकायानं सर्वसिद्धिप्रदायि प्रशस्तं 'स्यात्' ॥ ४६ ॥

भाषा–मीन और कुंभ वर्जित कोई लग्न वर्गोत्तम के नवमांश में स्थित हो या चन्द्रमा वर्गोत्तम में स्थित हो तो यात्रा मनवांछित फल देने वाली होती है और जलराशि लग्न में हो वा लग्न में जलराशि का अंश हो तो नौका का चलाना सर्व सिद्धियों का देने वाला होता है ॥ ४६ ॥

अन्य प्रकार से लग्न दिग्द्वारलग्न वर्णन।

दिग्द्वारभं लग्नगते प्रशस्ता यात्रार्थदात्री जयकारिणी च।
हानिं विनाशं स्थिरतो भयं च कुर्यात्तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने ॥४७॥

अन्वयः—दिग्द्वारभे लग्नगते यात्रा अर्थदात्री (धनदायिनी) जयकारिणी च प्रशस्ता 'स्यात्'। तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने 'लग्नगते सति' यात्रां कुर्याच्चेत् 'तदा' हानिं (यात्राहानिं) विनाशं (द्रव्यविनाशं) रिपुतः (शत्रुतः) भयं च कुर्यात् ॥ ४७ ॥

भाषा–दिग्द्वार राशि के लग्न में यात्रा धन और जयप्रद होती है । यदि इससे विपरीत लग्न में यात्रा हो तो हानि, विनाश और शत्रुभय होता है ॥ ४७ ॥

राशिः स्वजन्मसमये शुभसंयुतो यो
यः स्वारिभान्निधनगोऽपि च वेशिसंज्ञः ।
लग्नोपगः स गमने जयदोऽथ भूप-
यागैर्गमो विजयदो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥४८॥

अन्वयः—स्वजन्मसमये यो राशिः शुभसंयुतः (शुभग्रहैश्चन्द्रबुधगुरुशुक्रैः संयुतश्च) स्वारिभान्निधनगोऽपि यो राशिः 'अथवा' यः राशिः वेशिसंज्ञश्च (सूर्याक्रान्तराशेर्द्वितीयो राशिः वेशिसंज्ञः) लग्नोपगः 'स्यात्' 'तदा' स राशिः गमने जयदः 'प्रोक्तः' । अथ भूपयोगैः (राजयोगैः) गमः (यात्रा) मुनिभिः विजयदः प्रदिष्टः ॥ ४८ ॥

भाषा–यात्रा के जन्मसमय में जो शुभग्रह सहित राशि हैं, वे यात्रा-लग्नमें हों अथवा जिन शत्रुओं के जन्मलग्न से आठवीं राशि यात्रा के लग्न में हो और जन्मसमय में सूर्याक्रांत राशि से दूसरी राशि लग्न में स्थित हो तो यह मुहूर्त्त यात्रा में जय देनेवाला होता है ॥ ४८ ॥

दिक्स्वामीकथन ।

सूर्यः सितो भूमिसुतोऽथ राहुः शनिः शशी ज्ञश्च बृहस्पतिश्च ।
प्राच्यादितो दिक्षु विदिक्षु चापि दिशामधीशाः क्रमतः प्रदिष्टाः ४९

अन्वयः—अथ प्राच्यादितः (प्राचीमारभ्य) दिक्षु विदिक्षु चापि सूर्यः सितः (शुक्रः) भूमिसुतः (भौमः) राहुः शनिः शशी ज्ञः (बुधः) बृहस्पतिश्च 'क्रमतः' दिशामधीशाः प्रदिष्टाः (कथिताः स्युः) ॥ ४९ ॥

भाषा––पूर्व दिशा का स्वामी सूर्य, अग्निकोण का शुक्र, दक्षिण का मंगल, उत्तर का राहु, पश्चिम का शनैश्चर, वायव्य का चन्द्रमा, उत्तर का बुध और ईशानकोण का स्वामी बृहस्पति होता है ॥ ४९ ॥

दिक्स्वामिप्रयोजन ।

केन्द्रे दिगधीशे गच्छेदवनीशः ।
लालाटिनि तस्मिन्नेयादरिसेनाम् ॥५०॥

अन्वयः—दिगधीशे (दिक्स्वामिनि) केन्द्रे 'सति' अवनीशः (राजा) गच्छेत्। तस्मिन् (दिगधीशे ललाटिनि) अरिसेनान् (शत्रुसेनाम्) न इयात् न गच्छेत् ५०

भाषा—केन्द्र में दिशा का स्वामी हो तो राजा शत्रु की सेना में घुसे और लालाटिक योग में न जाय। क्योंकि वह अशुभ है ॥५०॥

लालाटिक योग।

प्राच्यादौ तरणिस्तनौ भृगुसुतो लाभव्यये भूपसुतः
कर्मस्थोऽथ तमो नवाष्टमगृहे सौरिस्तथा सप्तमे।
चन्द्रः शत्रुगृहात्मजेऽपि च बुधः पातालगो गीष्पतिः
वित्तभ्रातृगृहे विलग्नसदनाल्लालाटिकाः कीर्तिताः ॥५१॥

अन्वयः—अथ प्राच्यादौ (प्राच्याद्यष्टदिक्षु) 'क्रमेण' विलग्नसदनात् (यात्रागृहलग्नात्) तरणिः (सूर्यः) तनौ (लग्ने) भृगुसुतः (शुक्रः) लाभव्यये, भूसुतः (दशमस्थः) तमः (राहुः) नवाष्टमगृहे तथा सौरिः (शनिः) सप्तमे चन्द्रः शत्रुगृहात्मजे बुधः पातालगः (चतुर्थस्थः) गीष्पतिः (गुरुः) वित्तभ्रातृगृहे चेत्तदा लालाटिकाः कीर्तिताः ॥ ५१ ॥

भाषा—पूर्वादि आठ दिशाओं में, लग्न आदि स्थानों में और सूर्यादि ग्रह हों तो लालाटिक योग होता है। जैसे लग्न में सूर्य हो तो पूर्व को, ग्यारहवें-बारहवें शुक्र हो तो अग्निकोण, मंगल दसवें हो तो दक्षिण, राहु नवें या आठवें हो तो नैर्ऋत्यकोण, शनैश्चर सातवें हो तो पश्चिम, पांचवें-छठें चन्द्रमा हो तो वायव्य, बुध सातवें हो तो उत्तर, बृहस्पति तीसरे हो तो ईशान कोण में लालाटिक होता है ॥ ५१ ॥

पर्युषितयोग वर्णन।

मृगे गत्वा शिवे स्थित्वादितौ गच्छञ्जयेद्रिपून्।
मैत्रे प्रस्थाय शाक्रेऽह्नि स्थित्वा मूले व्रजन्तथा ॥ ५२ ॥
प्रस्थाय हस्तेऽनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा जयार्थी प्रवसेद्द्विदैवे।
वस्वंत्यपुष्ये निजसीम्नि चैके रात्रोषितः क्ष्मां लभतेऽवनीशः ॥५३॥

अन्वयः—मृगे (मृगशिरानक्षत्रे) गत्वा शिवे (आर्द्रायां) स्थित्वा अदितौ

(पुनर्वसौ) गच्छन् सन् रिपून् शत्रून् जयेत् तथा मैत्रे (अनुराधायां) प्रस्थाय शाक्रे (ज्येष्ठायां) मूले व्रजन् 'सन्' शत्रुन् हि निश्चयेन जयेत् ।। ५२ ।।

अन्वयः-जयार्थी (जयकामः) हस्ते प्रस्थाय (प्रस्थानं कृत्वा) अनिलतक्षधिष्ण्ये द्विदैवे (विशाखायां) प्रवसेत् (गच्छेत्) वस्वन्त्यपुष्ये (धनिष्ठारेवतीपुष्येषु) 'प्रस्थाय' निजसीम्नि च एकरात्रोषितः अवनीशः (राजा) क्ष्मां (पृथ्वीं) लभते (प्राप्नोति) ।। ५३ ।।

भाषा-मृगशिरा नक्षत्र में प्रस्थान करके यदि किसी मित्र के मकान में ठहर जावे और वहां पर आर्द्रा नक्षत्र बिताकर पुनर्वसु नक्षत्र में घर लौटे वा अनुराधा में यात्रा करके ज्येष्ठा को पूर्ववत् व्यतीत करके मूल नक्षत्र में लौटे तो जयाभिलाषी राजा शत्रु को जीत ले ।। ५२ ।।

भाषा-हस्त में प्रस्थान कर स्वाती और चित्रा बिताकर विशाखा में लौटे और धनिष्ठा, रेवती या पुष्य नक्षत्र में प्रस्थान कर एक रात्रि अपनी सीमा में रहकर यात्रा करने से राजा पृथ्वी पाता है। ये चारों सिद्ध योग हैं ।। ५३ ।।

समयबल।

ऊषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना।
विनोत्तरां निशीथः सन् याने याम्यां विनाऽभिजित् ।।५४।।

अन्वयः-उषःकालो विना (उषाकालं विहाय) पूर्वां 'दिशं' पश्चिमां 'दिशं गोधूलिः विना' उत्तरां दिशं विना निशीथः (अर्द्धरात्रि) विहाय याम्यां (दक्षिणां दिशं) विना अभिजित् (मध्याह्नकालं विहाय) याने (गमने) सन् 'स्यात्' ।।५४।।

भाषा-ऊषःकाल (प्रातःकाल में पूर्वाह्न) गोधूलि (सूर्यास्त के समय) पश्चिम दिशा, निशीथकाल में [अर्धरात्र] उत्तर दिशा और अभिजित् (मध्याह्नकाल में) दक्षिण दिशाकी यात्रा श्रेष्ठ नहीं है। अतएव इन्हें त्यागकर यात्रा करनी चाहिये ।। ५४ ।।

लग्नादि बारह भावों की संज्ञा।

लग्नाद्भावाः क्रमाद्देहकोशधानुष्कवाहनम्।
मंत्रोरिर्मार्ग आयुश्च हृद्व्यापारा गमव्ययाः ।। ५५ ।।

अन्वयः—लग्नात् 'क्रमशः' देहकोशधानुष्कवाहनं मंत्रः अरिः मार्गं आयुः हृद्व्यापारा आगमव्ययाः 'एते द्वदश' भावाः उक्ताः ॥ ५५ ॥

भाषा—१ देह २ कोश ३ धानुष्क ४ वाहन ५ मंत्र ६ शत्रु ७ मार्ग ८ आयु ९ हृदय १० व्यापार ११ प्राप्ति १२ व्यय इन बारह लग्न से भाव जान कर जिन स्थानों में क्रूरग्रह हो उनको पीड़ा दायक और जिनमें सौम्य ग्रह हों तो उन्हें शुभ कहना चाहिये ॥ ५५ ॥

केन्द्रादि में शुभग्रह विचार ।

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभा स्युर्याने पापस्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।
नेष्टो लग्नान्त्यारिरंध्रे शनिः खेऽस्ते शुक्रो लग्नेट्नागान्त्यारिरंध्रे ५६

अन्वयः—यदि सौम्यखेटाः (शुभग्रहाः) केन्द्रे कोणे 'स्युः तदा' याने (यात्रायां) 'ते' शुभाः । पापाः (पापग्रहाः) त्र्यायषट्खेषु (तृतीयैकादशषष्ठ-दशमस्थानेषु स्थिताः) शुभाः, चन्द्रः लग्नान्त्यारिरंध्रे (लग्नद्वादशषष्ठाष्टमेषु) 'स्थितः' नेष्टः (अशुभफलदः) । शनिः खे (दशमे) नेष्टः । शुक्रः अस्ते (सप्तमे) नेष्टः, लग्नेट् (यात्रास्वामी) नगान्त्यारिरंध्रे (सप्तमद्वादशषष्ठाष्टमेषु) नेष्टः ॥५६॥

भाषा—शुभग्रह केन्द्र १, ४, ७, १०, में हो तो शुभ है और पापग्रह ३, ११, ६, १०, में हो तो शुभ है और चन्द्रमा १, १२, ६, ८, हो तो अशुभ है और लग्नस्वामी सातवें, बारहवें, छठें तथा आठवें स्थान में हो तो अशुभ जानना चाहिये ॥ ५६ ॥

यात्रा से राजा और ब्राह्मणों आदि के योग नक्षत्रादि का बल ।

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीनामृत्क्षगुणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणामपि शुभशकुनैरुक्ता भवति मुहूर्त्तादपि मनुजानाम् ॥५७॥

अन्वयः—धरणिपतीनां (राज्ञां) योगात् (वक्ष्यमाणयोगयात्रालग्नवशात् दुष्टेऽपि तिथ्यादौ) सिद्धिः (वाञ्छितकार्यनिष्पत्तिः) स्यात् । भूदेवानाम् (ब्राह्मणानां) ऋक्षगुणैः (नक्षत्रगुणैः) अपि 'सिद्धिः स्यात्' । चौराणां शुभशकुनैः सिद्धिः उक्ता (कथिता) मनुजानां (साधारणमनुष्याणां) मुहूर्तादपि सिद्धिः 'उक्ता' ॥५७॥

भाषा—राजाओं को योग से, ब्राह्मणों को नक्षत्रबल से, चोरों को शकुन से और सामान्य मनुष्यों को मुहूर्त्त से सिद्धि मिलती है ॥५७॥

यात्रायोग में लग्नशुद्धि।

सहजे रविर्दशमगश्च शशी तथा शनिमंगलौ रिपुगृहे सितः सुते।
हिबुके बुधो गुरुरपीह लग्नगः स जयत्यरीन्प्रचलितोऽचिरान्नृपः ५८

अन्वयः-रविः सहजे (तृतीये) शशी (चन्द्रः) दशमे (दशमस्थाने) तथा शनिमंगलौ रिपुगृहे (षष्ठस्थाने) सितः सुते (पंचमे) बुधः हिबुके (चतुर्थे) गुरुः अपि इह लग्नगः 'चेत्' एवंविधे योगे प्रचलितः (प्रस्थितः) नृपः अचिरात् (शीघ्रं) अरीन् (शत्रून्) जयति (वशीकरोति) ॥ ५८ ॥

भाषा-सूर्य तीसरे, चन्द्रमा दसवें, शनि तथा मंगल छठें, बुध और वृहस्पति लग्न में और शुक्र चौथे हो तो ऐसे योग में राजा शत्रु को जीतकर शीघ्र ही लौट आता है ॥ ५८ ॥

दूसरा योग।

भ्रातरि सौरिर्भूमिसुता वैरिणि लग्ने देवगुरुः।
आयगतेऽर्के शत्रुजयश्च चेदनुकूलो दैत्यगुरुः ॥ ५९ ॥

अन्वय-भ्रातरि (तृतीयस्थाने) सौरिः 'स्यात्'। वैरिणि (षष्ठस्थाने) भूमिसुतः। लग्ने देवगुरुः। अर्के (सूर्ये) आयगते (लाभस्थाने) 'स्थिते' दैत्यगुरुः (शुक्रः) अनुकूलश्चेत्तदा शत्रुंजयः (योगः) 'स्यात्' ॥ ५९ ॥

भाषा-यदि यात्रालग्न में शनैश्चर तीसरे घर में, मंगल छठें स्थान में, वृहस्पति लग्न में, सूर्य ग्यारहवें और शुक्र अनुकूल हो तो यात्रा करने वाले राजाओं को जय मिलता है ॥ ५९ ॥

लग्न वश से दूसरा योग।

तनौ जीव इन्दुर्मृतौ वैरिगार्कः।
जयत्येव प्रयातो महीन्द्रो शत्रुन् ॥ ६० ॥

अन्वयः-तनौ (लग्ने) जीवः (गुरुः) मृतौ (अष्टमस्थाने) इन्दुः अर्कः वैरिगः (षष्ठस्थितः) 'एवंविधे योगे' प्रयातः महीन्द्रः (नृपतिः) शत्रून् जयत्येव ॥ ६० ॥

भाषा-राजाओं के शत्रु पर चढ़ाई करने के समय यदि वृहस्पति लग्न में, सूर्य छठें और चन्द्रमा आठवें हो तो विजय और लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥ ६० ॥

राजविजयसंज्ञक योग।

लग्नगतः स्याद्देवपुरोधाः। लाभधनस्थैः शेषनभोगैः ॥६१॥

अन्वयः-देवपुरोधाः (बृहस्पतिः) लग्नगतः 'स्यात्'। शेषनभोगैः (अन्यग्रहैः) लाभधनस्थैः (एकादशद्वितीयस्थानस्थैः) 'एवंविधे योगे राजा शत्रून् जयत्येव' ६१

भाषा-यदि लग्न में बृहस्पति और बाकी आठ ग्रह ग्यारहवें या दूसरे स्थान में हों तो राजा अवश्य दिग्विजय प्राप्त करे ॥ ६१ ॥

जयशाली योग।

द्यूने चन्द्रे समुदयगेऽर्के जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे।
ईदृग्योगे चलति नरेशो जेता शत्रून् गरुड इवाहीन् ॥६२॥

अन्वयः-चन्द्रे द्यूने (सप्तमस्थाने) 'सति' अर्के (सूर्ये) समुदयगे 'सति' जीवे शुक्रे विदि (बुधे) धनसंस्थे (द्वितीयस्थानस्थिते) ईदृग्योगे (एतादृग्योगे) नरेशः चलति चेत् 'तदा' गरुडः अहीन् इव (सर्पान् इव) शत्रून् जेता ॥ ६२ ॥

भाषा-सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो, सूर्य लग्न में हो, बृहस्पति शुक्र तथा बुध दूसरे स्थान में हों तो सर्पों पर गरुड़ की नाईं राजा शत्रुदल पर विजय प्राप्त करता है ॥६२॥

तथा दूसरा योग।

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः।
लग्नगतो भृगुपुत्रः स्युः शलभा इव सर्वे ॥ ६३ ॥

अन्वयः—शशिपुत्रः (बुधः) वित्तगतः (धनस्थानस्थितः) वासरनाथः (सूर्यः) भ्रातरि (तृतीयस्थानस्थितः) भृगुपुत्रे (शुक्रे) लग्नगते 'सति' सर्वे (शत्रवः) शलभाः (पतङ्गा इव) 'नश्यंति' ॥ ६३ ॥

भाषा-यदि यात्राकाल में बुध दूसरे, सूर्य तीसरे और शुक्र लग्न में हों तो शत्रुदल अग्नि में पतंगों की भांति भस्म हो जाते हैं ॥६३॥

शत्रुसेनावश योग।

उदये रविर्यदि सौरिररिगः शशी दशमेऽपि।
वसुधापतिर्यदि याति रिपुवाहिनी वशमेति ॥ ६४ ॥

अन्वयः—यदि उदये (लग्ने) रविः 'स्यात्' सौरिः (शनिः) अरिगः (षष्ठस्थानस्थितः) 'स्यात्' शशी (चन्द्रः) दशमे (दशमस्थानस्थितः) 'स्यात्तदा' वसुधाधिपतिः (नरेशः) यदि याति 'तदा' रिपुवाहिनी (शत्रुसेना) वशमेति ६४

भाषा–यदि यात्रा के समय सूर्य लग्न में, शनैश्चर छठें और चन्द्रमा दसवें स्थान में हों तो शत्रु की सेना राजा के वश में हो जाती है ॥६४॥

तथा अन्ययोग ।

तनौ शनिकुजौ रविर्दशमभे बुधो भृगुसुतोऽपि लाभदशमे ।
त्रिलाभरिपुभेषु भूसुतशनिगुरुज्ञभृगुजास्तथा बलयुताः ॥ ६५ ॥

अन्वयः—तनौ (लग्ने) शनिकुजौ (शनिमंगलौ) 'स्याताम्' रविः (सूर्यः) दशमभे 'स्यात्' । बुधः भृगुसुतोऽपि वा (शुक्रोऽपि) लाभदशमे (एकादशे दशमस्थाने वा) 'स्यात्' । त्रिलाभरिपुभेषु (तृतीयैकादशषष्ठस्थानेषु तेषु) तथा भूसुतशनिगुरुज्ञभृगुजाः बलयुताः 'स्युस्तदा गन्तू राज्ञो विजयो भवति' ॥ ६५ ॥

भाषा–यदि लग्न में वृहस्पति, सातवें चन्द्रमा, चौथे बुध और शुक्र और पापग्रह तीसरे स्थान में हों तो शत्रु की सेना वश में हो जाती है ॥ ६५ ॥

तथा अन्य योग ।

समुदयगे विबुधगुरौ मदनगते हिमकिरणे ।
हिबुकगतौ बुधभृगुजौ सहजगताः खलखेचराः ॥६६॥

अन्वयः—विबुधगुरौ (वृहस्पतौ) समुदयगे (लग्नस्थे) 'सति' हिमकिरणे (चन्द्रे) मदनगते (सप्तमस्थाने) 'सति' बुधभृगुजौ (बुधशुक्रौ) हिबुकगतौ (चतुर्थस्थौ) खलखचराः (पापग्रहाः) सहजगताः (तृतीयस्थानसंप्राप्ताः) 'एवंविधे योगे यदि वसुधाधिपतिः याति तदा रिपुवाहिनी वशमेति' ॥ ६६ ॥

भाषा–यदि लग्न में वृहस्पति, चन्द्रमा सातवें, चौथे बुध तथा शुक्र और पापग्रह तीसरे स्थान में हों तो राजा शत्रु की सेना को वश में करै ॥६६॥

अब और भी यात्रायोग कहते हैं ।

त्रिदशगुरुस्तनुगे मदने हिमकिरणो रविरायगतः ।
सितशशिजावपि कर्मगतौ रविसुतभूमिसुतः सहजे ॥६७॥

अन्वयः—त्रिदशगुरुः (बृहस्पतिः) तनुगः (लग्नस्थः) हिमकिरणः मदने (सप्तमस्थाने) रविः आयगतः (दशमस्थः) सितशशिजौ (बुधशुक्रौ) कर्मगतौ (दशमस्थानसंप्राप्तौ) रविसुतभूमिसुतौ (शनिभौमौ) सहजे (तृतीयस्थाने स्याताम्) 'एवंविधे योगे यदि नरपतिर्याति तदा विजयो भवत्येव' ॥६७॥

भाषा—यदि लग्न में बृहस्पति, सातवें सूर्य, ग्यारहवें शुक्र, बुध दसवें एवं शनि और मंगल तीसरे स्थान में हों तो अवश्य विजय प्राप्त होती है ।। ६७ ।।

तथा अन्य योग ।

देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे वासरनाथे रिपुभवनस्थे ।
पंचमगेहे हिमकरपुत्रः कर्मणि सौरिः सुहृदि सितश्च ।। ६८ ।।

अन्वयः—देवगुरौ शशिनि (चन्द्रे वा) तनुस्थे (लग्नगते सति) वासरनाथे (सूर्ये) रिपुभवनस्थे (षष्ठस्थे) हिमकरपुत्रः (बुधः) पञ्चमगेहे सौरिः (शनिः) कर्मणि सितः (शुक्रः) सुहृदि (चतुर्थस्थः) 'एवंविधे योगे राज्ञो विजयः' ॥ ६८ ॥

भाषा—शत्रु पर चढ़ाई करने के समय यदि बृहस्पति अथवा चन्द्रमा लग्न में, सूर्य छठें, बुध पांचवें, शनि दसवें और शुक्र चौथे स्थान में हो तो राजा अवश्य विजय पावे ।। ८६ ।।

दूसरा योग ।

हिमकिरणसुतो बली चेत्तनौ त्रिदशपतिगुरुर्हि केन्द्रे स्थितः ।
व्ययगृहसहजारिधर्मस्थितौ यदि च भवति निर्बलश्चंद्रमाः ॥६९॥

अन्वयः—हिमकिरणसुतः (बुधः) बली 'सन्' चेत्तनौ 'लग्ने स्यात्' त्रिदशपतिः (गुरुः) हि (निश्चयेन) केन्द्रस्थितः निर्बलः 'स्यात्' चन्द्रमा व्ययगृहसहजारिधर्मस्थितः भवति 'एवंविधे योगेऽपि राज्ञो विजयः स्यात्' ॥ ६९ ॥

भाषा—जिस यात्रालग्न में बुध बली हो, बृहस्पति केन्द्र में हो और निर्बल चन्द्रमा बारहवें, तीसरे, छठवें वा नवें स्थान में हो तो राजा विजय और लक्ष्मी को प्राप्त करता है ।। ६९ ।।

द्रव्यलाभ का दूसरा योग ।

अशुभखगैरनवाष्टमदनस्थैर्हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः ।
कविरिह केन्द्रगगीष्पतिदृष्टो वसुचयलाभकरः खलु योगः ॥७०॥

अन्वयः—अशुभखगैः (पापग्रहैः) अनवाष्टमदनस्थैः (नवमाष्टमसप्तमस्थानं परित्यज्य अन्यत्र स्थितैः) कविः (शुक्रः) हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः (चतुर्थैकादशतृतीयगः) केन्द्रगगीष्पतिदृष्टौ (चतुर्थतृतीयैकादशस्थानस्थिते बृहस्पतौ शुक्रस्य दृष्टिः स्यात् तदा एषः) खलु (निश्चयेन) वसुचयलाभकरः (द्रव्यसमूहलाभकरः) योगः 'कथितः' ॥ ७० ॥

भाषा—पापग्रह नवें, आठवें और सातवें स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में हो, शुक्र चौथे तीसरे या ग्यारहवें स्थान में हो और केन्द्रस्थित बृहस्पति पर शुक्र की दृष्टि हो तो राजा को यात्रा में द्रव्य मिलता है ॥ ७० ॥

राजा की विजय का दूसरा योग ।

रिपुलग्नकर्महिबुके शशिजे परिवीक्षितशुभनभोगमनैः ।
व्ययलग्नमन्मथगृहेषु जयः परिवर्जितेष्वशुभनामधरैः ॥७१॥

अन्वयः—शशिजे (चन्द्रे) रिपुलग्नकर्महिबुके (षष्ठदशमचतुर्थस्थे) शुभनभोगमनैः (शुभनक्षत्रैः) परिवीक्षिते (दृष्टे सति) व्ययलग्नमन्मथगृहेषु (द्वादशप्रथमसप्तमेषु) परिवर्जितेषु (परित्यक्तेषु) अशुभनामधरैः 'उपलक्षिते' 'एवंविधे योगे राज्ञो विजय एव स्यात्' ॥ ७१ ॥

भाषा—बुध छठें, दसवें, चौथे, लग्न में या किसी स्थान में हो और शुभ ग्रह की दृष्टि हो पापग्रह बारहवें, लग्न में या सातवें स्थान को छोड़ कर अन्य स्थानों में स्थित हों तो राजा यात्रा करने से विजय और लक्ष्मी को प्राप्त करता है ॥ ७१ ॥

राज्यप्राप्तियोग ।

लग्ने यदि जीवः पापा यदि लाभे
कर्मण्यपि वा चेद्राज्याधिगमः स्यात् ।
द्यूने बुधशुक्रौ चन्द्रो हिबुके वा
तद्वत्फल मुक्तं सर्वैर्मुनिवर्यैः ॥ ७२ ॥

अन्वयः—जीवः (गुरुः) यदि लग्ने 'स्यात्' लाभे (एकादशस्थाने) कर्मणि (दशमस्थाने वा) पापाः पापग्रहाश्चेत्स्युः 'तदा' राज्याधिगमः (राज्यप्राप्तिः) 'स्यात्' अथवा बुधशुक्रौ द्यूने (सप्तमे) चन्द्रः हिबुके (चतुर्थस्थाने वा) 'स्यात्' एवंविधे योगे सर्वैः मुनिवर्यैः (मुनिश्रेष्ठैः) तद्वत् फलं (राज्याधिगमरूपम्) उक्तम् 'कथितम्' ॥ ७२ ॥

भाषा—बृहस्पति लग्न में और पापग्रह ग्यारहवें या दसवें स्थान में हों अथवा बुध-शुक्र सातवें और चन्द्रमा चौथे स्थान में हो तो आचार्यों का मत है कि राज्यप्राप्ति हो ॥ ७२ ॥

तथा अन्य योग।

रिपुतनुनिधने शुक्रजीवेन्दवो ह्यथ बुधभृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ।
मदनभवनगश्चन्द्रमा वांबुगः शशिसुतभृगुजांतर्गतश्चन्द्रमाः ॥७३॥

अन्वयः—शुक्रजीवेन्दवः (शुक्रगुरुचन्द्रमसः) रिपुतनुनिधने (षष्ठलग्नअष्टमेषु) 'स्युः'। अथ बुधभृगुजौ (बुधशुक्रौ) तुर्यगेहस्थितौ (चतुर्थस्थानस्थितौ) चन्द्रमाः मदनभवनगः (सप्तमस्थानस्थितः) अथवा चन्द्रमाः अम्बुगः (चतुर्थस्थः) शशिसुतभृगुजान्तर्गतः (बुधशुक्रयोर्मध्यवर्ती स्यात्) एतादृक्षु योगेषु गन्तू राज्ञो विजयः स्यात् ॥ ७३ ॥

भाषा—यदि यात्रालग्न से छठें घर में शुक्र, लग्न में बृहस्पति और आठवें स्थान में चन्द्रमा हो तो यात्रा करने से जय प्राप्त होती है। बुध शुक्र चौथे और चन्द्रमा सातवें स्थान में हो तो भी राजा की जय होती है अथवा चन्द्रमा सातवें हो तो भी राजा की जय होती है ॥ ७३ ॥

राजा का विजययोग।

सितजीवभौमबुधभानुतनूजास्तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे चेत्।
क्रमतोऽरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैर्गुरुदिनेऽखिलखेटैः ॥७४॥

अन्वयः—सितजीवभौमबुधभानुतनूजाः (शुक्रगुरुभौमबुधशनयः) 'क्रमशः' तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे (लग्नसप्तमषष्ठचतुर्थतृतीयस्थानेषु) स्युश्चेत् 'तदैवंविधे योगे राज्ञो विजयः स्यात्'। गुरुदिने अखिलखेटैः (समस्तग्रहैः) सूर्यादिभिः 'सप्तभिः' क्रमतः अरिसोदरशात्रवहोराहिबुकायगैः (षष्ठतृतीयषष्ठदशमलग्नचतुर्थएकादशस्थानस्थितैः) एभिः समन्विते योगे यदि नृपतिर्याति तदा विजयो भवति ॥ ७४ ॥

भाषा—लग्न में शुक्र, सातवें बृहस्पति, छठें मंगल, तीसरे शनैश्चर, चौथे बुध हो और राजा यात्रा करे तो जय प्राप्त हो। बारहवें बृहस्पति, छठें सूर्य, तीसरे चन्द्रमा, दसवें मंगल, छठें बुध, लग्न में बृहस्पति, चौथे शुक्र, ग्यारहवें शनिश्चर हो और राजा यात्रा करे तो विजय हो ॥७४॥

तथा विजययोग ।

सहजे कुजो निधनगश्च भार्गवो
मदने बुधो रविररौ तनौ गुरुः ।
अथ चेत्स्युरिज्यसितभानवो
जलत्रिगता हि सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ ॥ ७५ ॥

अन्वयः—कुजः (भौमः) सहजे (तृतीये) भार्गवः (शुक्रः) निधनगः बुधः मदने (सप्तमस्थाने) रविः अरौ (षष्ठस्थाने) गुरुः तनौ (लग्ने) 'स्याच्चेत्तदा एवंविधे योगे गन्तू राज्ञो विजय एव'। अथ इज्यसितभानवः (गुरुशुक्ररवयः) जलत्रिगताः (चतुर्थतृतीयस्थानस्थिताः) सौरिरुधिरौ (शनिमंगलौ) रिपुस्थितौ (षष्ठस्थानस्थितौ) एवंविधे योगे यदि नरपतिर्याति तदा विजयी भवति ॥ ७५ ॥

भाषा—तीसरे मंगल, आठवें शुक्र, सातवें बुध, छठें सूर्य और लग्न में बृहस्पति हो तो यात्रा करने से राजा की जय होती है। गुरु शुक्र सूर्य चौथे तीसरे स्थान में और शनि-मंगल छठें स्थान में हों और राजा चले तो अवश्य जय प्राप्त होती है ॥ ७५ ॥

अलियोग और योगाधियोग वर्णन ।

एको ज्ञेज्यसितेषु पंचमतपः केंद्रेषु योगस्तथा
द्वौ चेत्तेष्वधियोग एषु सकला योगाधियोगाः स्मृताः ।
योगक्षेममथाधियोगगमने क्षेमं रिपूणां वधं
चाथो क्षेमयशोवनीश्च लभते योगाधियोगे व्रजन् ॥७६॥

अन्वयः—ज्ञेज्यसितेषु (बुधगुरुशुक्रेषु) एकोऽपि पञ्चमतपःकेन्द्रेषु (पञ्चमस्थाननवमस्थानकेन्द्रस्थानेषु) 'स्यात्तदा' योगः (योगाख्यो योगो भवति) तेषु (बुधगुरुशुक्रेषु) द्वौ चेत्तदा अधियोगः (अधियोगनामा योगो भवति) एषु

सकलाः सम्पूर्णाः 'चेत्स्युः तदा' योगाधियोगः भवति । अथ योगे व्रजन् (गच्छन् सन्) 'राजा' क्षेमं (कुशलं) लभते । अधियोगे व्रजन् क्षेमं रिपूणां वधञ्च लभते । योगाधियोगे व्रजन् क्षेमयशोऽवनीश्च लभते ॥ ७६ ॥

भाषा—बुध, वृहस्पति और शुक्र इन तीनों में से एक भी पंचम, नवम और केन्द्र में हो तो योगाख्य योग कहना चाहिये । इसमें राजा यात्रा करे तो आने जाने में कुशल से रहे । यदि दो ग्रह उक्त स्थानों में हों तो अधियोगाख्य योग कहना चाहिये। इसमें राजा यात्रा करे तो कुशल से शत्रु को मारे और यदि तीनों ग्रह उक्त स्थानों में हों तो योगाधियोग होता है । इस योग में यदि राजा शत्रु पर चढ़ाई करे तो कुशल, यश और पृथ्वी प्राप्त करके शत्रु को जीते ॥ ७६ ॥

विजया दशमी सिद्ध मुहूर्त ।

इषमासि सिता दशमी विजया शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता ।
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा नृपतेस्तु गमे जयसंधिकरी ॥ ७७ ॥

अन्वयः—इषमासि (आश्विने मासे) सिता दशमी (शुक्लपक्षस्य दशमी) विजया (विजयदायिनी) शुभकर्मसु सिद्धिकरी च कथिता । नृपतेः गमे (यात्रायां) श्रवणर्क्षयुता (श्रवणनक्षत्रसम्पन्ना चेत्) सुतराम् (अत्यन्तम्) शुभदा जयसन्धिकरी कथिता ॥ ७७ ॥

भाषा—आश्विन शुक्लपक्ष की दशमी को लोग विजया दशमी कहते हैं जो सब कामों को सिद्ध करने वाली है । यदि वह श्रवण नक्षत्र से युक्त हो तो वहुत ही शुभदायक होती है । इसमें राजा दूसरे राज्यपर चढ़ाई करे तो विजय अथवा संधि (मिलाप) हो जावे ॥ ७७ ॥

अङ्गस्फुरणमुहूर्त ।

चेतोनिमित्तशकुनैः खलु सुप्रशस्तै-
र्ज्ञात्वा विलग्नवलमुर्व्यधिपः प्रयाति ।
सिद्धिर्भवेदथ पुनः शकुनादितोपि
चेतोविशुद्धिरधिका न च तां विनेयात् ॥ ७८ ॥

अन्वयः—चेतोनिमित्तशकुनैः (चेतः-अन्तःकरणम्, निमित्तम्-अङ्गस्फुरणादि, शकुनानि-वक्ष्यमाणानि) सुप्रशस्तैः (सुशोभनैः सद्भिः) विलग्नबलमपि ज्ञात्वा

ऊर्व्यधिपः (नृपः) प्रयाति (गच्छति चेत्) सिद्धिश्च भवेत्। अथ पुनः शकुनादितोऽपि चेतोविशुद्धिः (मनःशुद्धिः) अधिका (बलवती) तां (चेतोविशुद्धिं) विना न इयात् (न गच्छेत्) ॥ ७८ ॥

भाषा--अंतःकरण अर्थात् शुद्ध अंगों का फड़कना आदि शुभशकुन अच्छे हों और लग्न बली हो तो राजा मनवाञ्छित फल को प्राप्त करे। यदि लग्न शुद्ध हो, पर शकुन अच्छा न हो तथा शकुन अच्छे हों और चित्त प्रसन्न न हो तो कदापि यात्रा न करनी चाहिये ॥ ७८ ॥

शकुनाशकुनविचार।

व्रतबंधनदैवतप्रतिष्ठाकरपीडोत्सवसूतकासमाप्तौ।
न कदापि चलेदकालविद्युद्घनवर्षातुहिनेपि सप्तरात्रम् ॥७९॥

अन्वयः—व्रतबन्धनदेवताप्रतिष्ठाकरपीडोत्सवसूतकासमाप्तौ (व्रतबन्धनम्–यज्ञोपवीतम्, देवताप्रतिष्ठा–देवस्थापनम्, करपीडा-विवाहः, उत्सवः–होलिकादिः, सूतकं–जननसूतकं मरणसूतकं वा एतेषां असमाप्तौ-समाप्तिं विना) न चलेत् (न प्रस्थानं कुर्यात्) अकालविद्युद्घनवर्षातुहिनेऽपि सप्तरात्रम् (सप्तरात्रिपर्य्यंतम्) कदापि न चलेत् ॥ ७९ ॥

भाषा—यज्ञोपवीत, देवताओं की प्रतिष्ठा, विवाह, उत्सव, जनन और मृतशौच इनके समाप्त होने के प्रथम यात्रा न करनी चाहिये। बिना समय के बिजली और मेघ गर्जने, मेघ बरसने, पत्थर वा बिनौरी गिरने से सात दिन पर्यन्त कभी भी यात्रा नहीं करनी चाहिये। ऐसे समय में यात्रा शुभ नहीं होती ॥ ७९ ॥

एक ही दिन में गमनागमनविचार।

महीपतेरेकदिने पुरात्पुरं यदा भवेतां गमनप्रवेशकौ।
भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनी विचारयेन्नैव कदापि पंडितः ॥८०॥

अन्वयः—महीपतेः (राज्ञः) यदा पुरात् (एकस्मात्) पुरे (अन्यस्मिन् पुरे) एकदिने (एकस्मिन् दिवसे एव) गमनप्रवेशकौ भवेतां तदा पण्डितः भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीः कदापि नैव विचारयेत् ॥ ८० ॥

भाषा--यदि आना-जाना एकही दिन में हो तो पंडितजन नक्षत्र, वार, दिक्शूल, संमुख शुक्र तथा योगिनी आदि का विचार न करें ॥८०॥

यद्येकस्मिन् दिवसे महीपतेर्निर्गमप्रवेशौ स्तः।
तर्हि विचार्यः सुधिया प्रवेशकालो न यात्रिकस्तत्र ॥८१॥

अन्वयः—यदि एकस्मिन् दिवसे महीपतेः 'पुरात् पुरे' निर्गमप्रवेशौ स्तः तर्हि तत्र (निर्गमप्रवेशे) सुधिया (विदुषा) प्रवेशकालः विचार्यः यात्रिकः (यात्राकालः) न विचार्यः ॥ ८१ ॥

भाषा—यदि आना-जाना एक ही दिन में हो तो प्रवेशकाल विचार करने योग्य है–जाने के समय का न विचार करे ॥ ८१ ॥

नवम तिथि निषेध।

प्रवेशान्निर्गमं तस्मात्प्रवेशं नवमे तिथौ।
नक्षत्रे च तथा वारे नैव कुर्यात्कदाचन ॥ ८२ ॥

अन्वयः—प्रवेशात् (गृहप्रवेशतिथितः) नवमे तिथौ निर्गमः (प्रस्थानं) कुर्यात्। तथा नक्षत्रे (नवमे नक्षत्रे) वारे (नवमे वारे) कदाचन कदापि गमनं न कुर्यात् ॥ ८२ ॥

भाषा—प्रवेश की तिथि नक्षत्र और वार से नवम तिथि नक्षत्र वारों में गमन और गमनदिन से नवीं तिथि नक्षत्र और वारों में प्रवेश कदापि नहीं करना चाहिये ॥ ८२ ॥

यात्रादिनविधि।

अग्निं हुत्वा देवतां पूजयित्वा
नत्वा विप्रानर्चयित्वा दिगीशान्।
दत्त्वा दानं ब्राह्मणेभ्यो दिगीशं
ध्यात्वा चित्ते भूमिपालोऽधिगच्छेत् ॥८३॥

अन्वयः—'गमनकाले' अग्निं (पावकं) हुत्वा (हवनं कृत्वा) देवतां (इष्टदेवताम्) पूजयित्वा, ब्राह्मणेभ्यो दानं दत्त्वा दिगीशं (दिक्स्वामिनं) नत्वा (नमस्कृत्य) विप्रान् अर्चयित्वा (सम्पूज्य) चित्ते (मनसि) दिगीशं ध्यात्वा भूमिपालः (राजा) अधिगच्छेत् ॥ ८३ ॥

भाषा—राजाओं को अग्नि में हवन के पश्चात् देवताओं का पूजन करके ब्राह्मणों और दिशा के स्वामी को नमस्कार कर ब्राह्मणों को दान दे और दिक्स्वामी का ध्यान करके यात्रा करनी चाहिये ॥ ८३ ॥

नक्षत्रदोहदकथन।

कुल्माषांस्तिलतंडुलानि च तथा माषांश्च गव्यं दधि
त्वाज्यं दुग्धमथैणमांसमपरं तस्यैव रक्तं तथा।
तद्वत्पायसमेव चाषपललं मार्गं च शाशं तथा
षाष्टिक्यं च प्रियंग्वपूपमथवान् चित्रांडजा सत्फलम् ॥८४॥
कौर्मं सारिकगौधिकं च पललं शाल्यं हविष्यं हया-
द्रक्षे स्यात्कुसरान्नमुद्गमपि वा पिष्टं यवानां तथा।
मत्स्यान्नं खलु चित्रितान्नमथवा दध्यन्नमेवं क्रमात्
भक्ष्याभक्ष्यमिदं विचार्य मतिमान् भक्षेत्तथालोकयेत् ॥८५॥

अन्वयः—यात्राकाले अश्विन्यादिसप्तविंशन्नक्षत्राणां दोहदानि—कुल्माषान् (अक्षतस्विन्नमाषान्) तिलतण्डुलान् तथा माषान्, गव्यं दधि आज्यम् (गव्यं घृतम् दुग्धञ्च) अथ एणमांसम्, (मृगमांसम्) अपरं तथा तस्यैव (मृगस्यैव) रक्तं तद्वत् चापपललं (चापस्य मांसम्), मार्गम् (मृगमांसम्) शाशम् (शशमांसम्) षाष्टिक्यम् (षष्टिकान्नम्) प्रियङ्गु, अपूपम्, चित्राण्डजान् (बहुरंगपक्षिणः) सत्फलम्, कौर्मम् (कूर्ममांसम्) सारिकम् (सारिकाया मांसम्) गौधिकम् 'मांसं' शल्यं (शल्यपक्षिणो मांसम्) हविष्यम्, कृसरान्नम्, मुद्गं अपि वा यवानां पिष्टं, मत्स्यान्नम् (मत्स्यमांसम्) चित्रितान्नम् अथवा दध्यन्नम् एवं क्रमात् भक्ष्याभक्ष्यं विचार्य मतिमान् नरः भक्षेत् तथा आलोकयेत् ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

भाषा—अश्विनी आदि नक्षत्रों में निम्न लिखित चीजों का भक्षण, स्पर्श अथवा अवलोकन कर लेना चाहिये। बाकला (खड़े भींगे उड़द) १ तिल-चावल २ उड़द ३ गौका दही ४ गौ का घृत ५ गौका दूध ६ हरिणमांस ७ मृगरक्त ८ खीर ९ गौरैया का मांस १० मृगमांस ११ मूसा का मांस १२ साठी १३ प्रियंगु १४ पूआ १५ अनेक वर्णका पक्षी १६ उत्तम फल १७ ॥ ८४ ॥ कछुवा का मांस १९ गोह का मांस २० शैल (साही) का मांस २१ मूंग २२ खिचड़ी २३ मूंग-चावल २४ जवों का सत्तू २५ मछली का मांस २६ अनेक वर्ण का चावल २७ और भात २८ इन्हें खा या देखकर यात्रा करे। क्योंकि इससे दुष्ट नक्षत्रदोष दूर हो जाते हैं ॥ ८५ ॥

दिग्दोहदवर्णन ।

आज्यं तिलौदनं मत्स्यं पयश्चापि यथाक्रमम् ।
भक्षयेद्दोहदं दिश्यमाशां पूर्वादिकां व्रजेत् ॥ ८६ ॥

अन्वयः— 'पूर्वस्याम्' आज्यं (घृतम्) 'दक्षिणस्याम्' तिलौदनम् 'पश्चिमायां' मत्स्यम् 'उत्तरस्याम्' पयः (दुग्धम्) 'एते' यथाक्रमम् दिश्यं (दिग्भवं) दोहदं (अभीष्टम्) भक्षयेत् । ततः पूर्वादिकां 'दिशं' व्रजेत् ॥ ८६ ॥

भाषा—पूर्वके गमन में घृत, दक्षिण के गमन में तिल-चावल, पश्चिम के गमन में मछली और उत्तर के गमन में दूध खाकर यात्रा करे तो शुभदायक होता है ॥ ८६ ॥

रव्यादि वारों के दोहद ।

रसालां पायसं कांजीं शृतं दुग्धं तथा दधि ।
पयोऽशृतं तिलान्नं च भक्षयेद्वारदोहदम् ॥८७॥

अन्वयः—'रवौ' रसालाम् (रसाला शर्करादधिमरिचकर्पूरैलासंसृष्टा शिखरिणी तां) 'सोमे' पायसम् । 'भौमे' काञ्जीं, 'बुधे'शृतं (पक्वं) दुग्धम् तथा 'गुरौ' दधि 'शुक्रे' अशृतं (अपक्व) पयः (दुग्धम्) 'शनौ' तिलान्नञ्च 'एतद्' वारदोहदम् भक्षयेत् ॥ ८७ ॥

भाषा—१ सिखरन २ खीर ३ कांजी ४ औटा दूध ५ दही ६ कच्चा दूध और ७ तिल मिला हुआ चावल क्रम से रविवार आदि सातों वारों में भक्षण करे तो दुष्ट वारदोष दूर हो जाता है ॥ ८७ ॥

तिथिदोहद ।

पक्षादितोर्कदलतंडुलवारिसर्पिः
श्राणाहविष्यमपि हेमजलं त्वपूपम् ।
भुक्त्वा व्रजेद्रुजकमंबु च धेनुमूत्रं
यावान्नपायसगुडानसृगन्नमुद्गान् ॥ ८८ ॥

अन्वयः—पक्षादितः (पक्षस्यादिमतिथिमारभ्य) अर्कदलतण्डुलवारि (मन्दारस्य पत्रं तण्डुलजलं च) सर्पिः (घृतम्) श्राणा (यवागू) हविष्यमपि हेमजलं, तु (पुनः) अश्वम्, रुचकम्, अम्बु (जलं च) धेनुमूत्रम् यवान्नपायसगुडान्नसृगन्नमुद्गान् भुक्त्वा व्रजेत्॥ ८८ ॥

भाषा--१ प्रतिपदा को आक के पत्ते, २ दूज को चावल के धोवन, ३ को घी, ४ को यवागू, ५ को मूंग, ६ को सोना और जल, ७ को मालपूवा, ८ को बिजौरा ९ को जल, १० को गोमूत्र, ११ को जौ, १२ को खीर, १३ को गुड़ १४ को लड्डू तथा अमावास्या और पूर्णमासी को मूंग के भक्षण, स्पर्श वा दर्शन से तिथिदोहद दोष नष्ट हो जाता है ॥८८॥

गमनसमय में कर्तव्य विधि।

उद्धृत्य प्रथमत एव दक्षिणांघ्रिं द्वात्रिंशत्पदमभिगत्य दिश्ययानम्।
आरोहेत्तिलघृतहेमताम्रपात्रं दत्वादौ गणकवराय च प्रगच्छेत्॥८९॥

अन्वयः—गमनसमये राजा प्रथमतः (प्राक्) दक्षिणांघ्रि (दक्षिणचरणं) उद्धृत्य (उत्थाप्य) द्वात्रिंशत्पदमभिगत्य आदौ (प्रथमं) गणकवराय तिलघृत-हेमताम्रपात्रं दत्वा यानम् आरोहेत् (आरुह्य गच्छेत्)॥ ८९ ॥

भाषा--राजा प्रथम बत्तिस पद दक्षिण पग उठाकर चले और दिशा-विशेषकी सवारी पर चढ़ते समय तिल घृत सुवर्ण वा तांबा का पात्र ज्योतिषी को देकर यात्रा करे ॥ ८९ ॥

दिशाविशेष यान (सवारी) कथन।

प्राच्यां गच्छेद्गजेनैव दक्षिणस्यां रथेन हि।
दिशि प्रतीच्यामश्वेन तथोदीच्यां नरैर्नृपः ॥ ९० ॥

अन्वयः--नृपः प्राच्यां दिशि गजेनैव, दक्षिणस्यां हि रथेन, प्रतीच्यां दिशि अश्वेन तथा उदीच्यां नरैः गच्छेत् ॥ ९० ॥

भाषा—पूर्व में हाथी पर, दक्षिण में रथ पर, पश्चिम में घोड़े पर और उत्तर में पालकी पर चढ़कर राजा यात्रा करे ॥ ९० ॥

यात्रा प्रारम्भ करने का स्थान।

देवगृहाद्वा गुरुसदनाद्वा स्वगृहान्मुख्यकलत्रगृहाद्वा।
प्राश्य हविष्यं विप्रानुमतः पश्यञ्शृण्वन्मङ्गलमेयात् ॥ ९१ ॥

अन्वयः—देवगृहात्, वा गुरुसदनात्, वा स्वगृहात्, वा मुख्यकलत्रगृहात्, विप्रानुमतः (नृपः) हविष्यं प्राश्य मंगलं पश्यन् शृण्वन् एयात् (गच्छेत्) ॥९१॥

भाषा—देवमन्दिर से, गुरु के घर से, अपने घर से अथवा अपनी

प्रधान स्त्री के घर से हविष्य वस्तु चीखकर ब्राह्मणों की आज्ञानुसार मङ्गल वस्तु देखता सुनता हुआ यात्रा करे॥ ९१ ॥

प्रस्थान-विधि ।

कार्याद्यैरिह गमनस्य चेद्विलम्बो
भूदेवादिभिरुपवीतमायुधं च ।
क्षौद्रं चामलफलमाशु चालनीयं
सर्वेषां भवति यदेव हृत्प्रियं वा ॥ ९२ ॥

अन्वयः—इह कार्याद्यैः चेत् गमनस्य विलम्बो (भवेत् तदा) भूदेवादिभिः (क्रमात्) उपवीतं, आयुधं, च (तथा) क्षौद्रं, आमलं च आशु चालनीयम् वा सर्वेषां यदेव हृत्प्रियं भवति (तदेव चालनीयम्) ॥ ९२ ॥

भाषा—यात्राकाल का निश्चय होने पर किसी आवश्यक कार्यवश यदि यात्रा में विलम्ब हो तो ब्राह्मण यज्ञोपवीत, क्षत्रिय आयुध, वैश्य शहद, शूद्र उत्तम फल अथवा जो वस्तु जिसको अधिक प्रिय हो, वह उस वस्तु का प्रस्थान यात्रा की दिशा में रखे। आवश्यक कार्य हो जाने पर यात्रा करे ॥ ९२ ॥

प्रस्थान कितनी दूर पर रखना चाहिए ।

गेहाद्गेहान्तरमपि गमस्तर्हि यात्रेति गर्गः
सीम्नः सीमान्तरमपि भृगुर्बाणविक्षेपमात्रम् ।
प्रस्थानं स्यादिति कथयतेऽसौ भरद्वाज एवं
यात्रा कार्या वहिरिह पुरात्स्याद्वसिष्ठो ब्रवीति ॥ ९३ ॥

प्रस्थानमत्र धनुषां हि शतानि पञ्च
केचिच्छतद्वयमुशन्ति दशैव चान्ये ।
संप्रस्थितो य इह मन्दिरतः प्रयातो
गन्तव्यदिक्षु तदपि प्रयतेन कार्यम् ॥ ९४ ॥

अन्वयः—(यदि) गेहात् गेहान्तरं अपि गमः तर्हि अपि यात्रा (भवति) इति गर्गः ब्रवीति । (तथा) सीम्नः सीमान्तरं अपि यात्रा स्यात् इति भृगुः

ब्रवीति, (अथो) बाणविक्षेपमात्रं (यावत्) प्रस्थानं स्यात् एवं भरद्वाजः कथयते, इह पुरात् बहिः यात्रा कार्या इति वशिष्ठः ब्रवीति । अत्र केचित् धनुषां पञ्चशतानि प्रस्थानं उशन्ति, केचित् शतद्वयं, अन्ये च दशैव (यावत्) प्रस्थानं उशन्ति, इह यः सम्प्रस्थितः (सः) मन्दिरतः गन्तव्यदिक्षु प्रयातो (भवेत्) तदपि प्रयतेन कार्यम् ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

भाषा--अपने घर से चलकर समीप ही किसी दूसरे के घर में यदि रहे तो भी यात्रा हो जाती है, ऐसा गर्गजी कहते हैं । अपने गाँव की सीमा नाँघकर दूसरे गाँव की सीमा पर रहे, ऐसा शुक्रजी कहते हैं । फेंका हुआ तीर जितनी दूर जा सके, उतनी दूर पर प्रस्थान होता है, ऐसा भरद्वाजजी कहते हैं । गाँव से यात्रा करके बाहर रहे, ऐसा वसिष्ठजी कहते हैं ॥ ९३ ॥ कोई आचार्य यात्रा के स्थान से पाँच सौ धनुष पर, कोई दो सौ धनुष पर और कोई दश धनुष पर प्रस्थान रखने को कहते हैं। जिस दिशा में जाना हो उसी में सावधानी से प्रस्थान रखना चाहिए । जो अपने घर से स्वयं चल चुका है वह तो यात्री ही है ॥९४॥

प्रस्थान की स्थिति का प्रमाण तथा यात्रा में त्याज्य वस्तु ।

प्रस्थाने भूमिपालो दशदिवसमभिव्याप्य नैकत्र तिष्ठे-
त्सामन्तः सप्तरात्रं तदितरमनुजः पञ्चरात्रं तथैव ।
ऊर्ध्वं गच्छेच्छुभाहेऽप्यथ गमनदिनात्सप्तरात्राणि पूर्वं
चाशक्तौ तद्दिनेऽसौ रिपुविजयमना मैथुनं नैव कुर्यात् ॥९५॥

दुग्धं त्याज्यं पूर्वमेव त्रिरात्रं क्षौरं त्याज्यं पञ्चरात्रं च पूर्वम् ।
क्षौरं तैलं वासरेऽस्मिन्वमिश्च त्याज्यं यत्नाद् भूमिपालेन नूनम् ॥

अन्वयः—प्रस्थाने (सति) भूमिपालः दशदिवसं अभिव्याप्य एकत्र न तिष्ठेत् । सामन्तः सप्तरात्रं, तथैव तदितरमनुजः पञ्चरात्रं अभिव्याप्य एकत्र न तिष्ठेत् । ऊर्ध्वं शुभाहे गच्छेत् । अथ रिपुविजयमनाः असौ गमनदिनात् पूर्वं सप्तरात्राणि मैथुनं न कुर्यात्, अशक्तौ तद्दिनेऽपि मैथुनं नैव कुर्यात् । (गमनदिनात्) पूर्वमेव त्रिरात्रं दुग्धं त्याज्यं, पूर्वं पञ्चरात्रं क्षौरं च (तथा) अस्मिन् वासरे क्षौद्रं, तैलं, वमिश्च भूमिपालेन यत्नात् नूनं त्याज्यम् ॥ ९५ ॥ ९६॥

भाषा--राजा दस दिन तक, सामन्त अर्थात् ज़मींदार सात दिन

तक और सामान्य मनुष्य पाँच दिन तक, बराबर एक जगह प्रस्थान में न रहे और इन दिनों के उपरान्त आवश्यक हो तो फिर शुभ दिन निश्चय करके यात्रा करे। यात्रा में निषिद्ध वस्तु–यदि शत्रुओं को जीतने की इच्छा हो तो–यात्रा के दिन से सात दिन पहिले मैथुन न करे। यदि कामासक्त हो तो यात्रा के दिन मैथुन न करे। यदि यात्रा के दिन स्त्री ऋतुस्नाता हो तो मैथुन करके यात्रा करे ॥ ९५ ॥ यात्रा के दिन से पहिले तीन दिन पर्यन्त दूध और पाँच दिन पर्यन्त बाल बनवाना और यात्रा के दिन शहद, तेल, वमन इन सबका त्याग कर दे ॥ ९६ ॥

यात्रा के अन्य नियम।

भुक्त्वा गच्छति यदि चेत्तैलगुडक्षारपक्वमांसानि।
विनिवर्त्तते स रुग्णः स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतो मरणम् ॥ ९७ ॥
यदि मासु चतुर्षु पौषमासादिषु वृष्टिर्हि भवेदकालवृष्टिः।
पशुमर्त्यपदाङ्किता न यावद्वसुधा स्यान्नहि तावदेव दोषः ॥

अन्वयः—यदि चेत् तैलगुडक्षारपक्वमांसानि भुक्त्वा गच्छति (तदा) स रुग्णः विनिवर्तते (तथा) स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतः मरणं (भवेत्)। (यदि) पौषमासादिषु चतुर्षु मासु वृष्टिः भवेत्, (असौ) अकालवृष्टिः (अत्र) यावत् पशुमर्त्यपदाङ्किता वसुधा न स्यात् तावत् एव दोषः नहि भवेत् ॥ ९७ ॥ ९८ ॥

भाषा—जो तेल, गुड़, लोन, पका मांस, इनका भोजन करके यात्रा करता है, वह निश्चय करके रोगी होकर लौटता है और अपनी स्त्री तथा ब्राह्मण का अनादर करके जानेवाले का मरण होता है ॥ ९७ ॥ यदि पौषादि चार महीनों में वर्षा हो तो वह अकाल वृष्टि है, परन्तु जब तक पशु तथा मनुष्यों के पैरों से पृथ्वी चिह्नित न हो तब तक यात्रा में उस अकालवृष्टि का दोष नहीं होता ॥ ९८ ॥

आवश्यक यात्रा में अकालवृष्टि की शान्ति

अल्पायां वृष्टौ दोषोऽल्पो भूयस्यां दोषो भूया-
ञ्जीमूतानां निर्घोषे वृष्टौ वा जातायां भूयः।
सूर्येन्द्वोर्बिम्बे सौवर्णे कृत्वा विप्रेभ्यो दद्यात्

दुःशाकुन्ये साज्यं स्वर्णं दत्त्वा गच्छेत्स्वेच्छाभिः ॥९९॥

अन्वयः—अल्पायां वृष्टौ अल्पः दोषः, भूयस्यां वृष्टौ भूयान् दोषः, जीमूतानां निर्घोषे वा वृष्टौ जातायां भूपः सूर्येन्द्वोः सौवर्णे बिम्बे कृत्वा विप्रेभ्यः दद्यात, दुःशाकुन्ये (सति) साज्यं स्वर्णं दत्त्वा स्वेच्छाभिः गच्छेत् ॥ ९९ ॥

भाषा—थोड़ी अकालवृष्टि होने पर थोड़ा दोष और अधिक होने पर बहुत दोष होता है, इस कारण यात्राकाल में यदि मेघों का शब्द तथा वर्षा हो और जाना आवश्यक हो तो सूर्य-चन्द्रमा का बिम्ब सोने का बनवाकर ब्राह्मण को देवे, और यदि यात्राकाल में कोई असगुन हो तो घृत सहित सोना ब्राह्मण को देकर इच्छानुसार यात्रा करे ॥९९॥

शुभशकुन।

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं
वेश्या वाद्यमयूरचापनकुला बद्धैकपश्वामिषम्।
सद्वाक्यं कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि मृत्कन्यका
रत्नोष्णीपसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः ॥१००॥

आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजका मीनाज्यसिंहासनं
शावं रोदनवर्जितं ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम्।
भारद्वाजनृयानवेदनिनदा माङ्गल्यगीतांकुशा
दृष्टाः सत्फलदाः प्रयाणसमये रिक्तो घटः स्वानुगः १०१

अन्वयः—विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं वेश्या वाद्यमयूरचापनकुलाः बद्धैकपश्वामिषम्, सद्वाक्यम्, कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि, मृत्कन्यका, रत्नोष्णीपसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः, आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजकाः, मीनाज्यसिंहासनम्, रोदनवर्जितं शावं, ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम्, भारद्वाजनृयानवेदनिनदाः, माङ्गल्यगीताङ्कुशाः (इमे) प्रयाणसमये दृष्टाः सत्फलदाः (भवन्ति) तथा स्वानुगः रिक्तो घटः शुभः स्यात् ॥ १००॥ १०१ ॥

भाषा—बहुत से ब्राह्मण, घोड़ा, मदहीन हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसों, कमल, स्वच्छ वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर पक्षी, महोषपक्षी, न्योला, रस्सी से बाँधा हुआ बैल, मांस, शुभ वाक्य, फूल, ऊख,

जल से भरा हुआ कलश, छत्र, मिट्टी, कुमारी कन्या, रत्न, पगड़ी, श्वेत बैल, मद्य, पुत्र सहित स्त्री, जलती हुई अग्नि, दर्पण, सुर्मा, धोये वस्त्र लिये धोबी, मछली, घृत, देवतादि का सिंहासन, रोदनरहित शव, पताका, शहद, बकरा, आयुध, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, सुखपाल, वेदध्वनि, मंगलगान और अंकुश ये सब पदार्थ यात्राकाल में सम्मुख देखे हुए शुभ फलदायक होते हैं और पीछे से आया जलरहित घड़ा भी शुभ फल देनेवाला होता है ॥ १०० ॥ १०१ ॥

अशुभ शकुन।

बन्ध्याचर्मतुषास्थिसर्पलवणाङ्गारेन्धनक्लीवविट्-
तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः ।
नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिता व्यङ्गक्षुधार्ता असृक्
स्त्रीपुष्पं सरटः स्वगेहदहनं मार्जारयुद्धं क्षुतम् ॥१०२॥

काषायी गुडतक्रपङ्कविधवाकुब्जाः कुटुम्बे कलि-
र्वस्त्रादेः स्खलनं लुलायसमरं कृष्णानि धान्यानि च ।
कार्पासं वमनं च गर्दभरवो दक्षेऽतिरुड्गर्भिणी
मुण्डार्द्राम्बरदुर्वचोऽन्धबधिरोदक्या न दृष्टाः शुभाः १०३

अन्वयः—बन्ध्याचर्मतुषास्थिसर्पलवणांगारेन्धनक्लीवविट्तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः, नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिताः, व्यंगक्षुधार्ताः, असृक्, स्त्रीपुष्पं, सरटः, स्वगेहदहनं, मार्जारयुद्धं, क्षुतम्, काषायी, गुडतक्रपंकविधवा, कुब्जाः, कुटुम्बे कलिः, वस्त्रादेः स्खलनं, लुलायसमरं च (तथा) कृष्णानि धान्यानि, कार्पासं, वमनं च पुनः दक्षे गर्दभरवः, अतिरुट्, गर्भिणी, मुण्डार्द्राम्बरदुर्वचोऽन्धबधिरोदक्याः (प्रयाणसमये) दृष्टाः न शुभाः (भवन्ति) १०२॥१०३॥

भाषा—बाँझ स्त्री, चमड़ा, भूसा, हाड़, सर्प, नमक, अंगार, ईंधन, हिजड़ा, विष्ठा, तेल, सिड़ी मनुष्य, चर्बी, औषध, शत्रु, जटाधारी, संन्यासी, रोगी, लड़का को छोड़ नंगा, तेल लगाये हुए मनुष्य, खुले केशोंवाला, पतित ब्राह्मण, किसी अंग से रहित मनुष्य, भूखा मनुष्य, रक्त, स्त्रियों का ऋतु, गिर्गिट, अपने घर का जलना, बिलार की लड़ाई, छींक, लाल वस्त्र

ओढ़े प्राणी, गुड़, माठा, पंक, विधवा स्त्री, कुबड़ा, अपने कुटुम्ब में झगड़ा, वस्त्रादि का देह पर से गिरना, भैंसों की लड़ाई, काला धान्य, कपास, वान्त होना, दहिनी तरफ गधे का शब्द, क्रोध की अधिकता, गर्भवती स्त्री, मुँड़े सिरवाला, ओदे वस्त्रवाला, अशुभ वचन, अन्धा, बहिर और रजस्वला स्त्री, ये सब पदार्थ यात्राकाल में सम्मुख देखे हुए अशुभ फल देनेवाले होते हैं ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

अन्य शकुन

गोधाजाहकसूकराहिशशकानां कीर्तनं शोभनं
नो शब्दो न विलोकनं च कपिऋक्षाणामतो व्यत्ययः ।
नद्युत्तारभयप्रवेशसमरे नष्टार्थसंवीक्षणे
व्यत्यस्ताः शकुना नृपेक्षणविधौ यात्रोदिताःशोभनाः॥ १०४॥

अन्वयः—गोधाजाहकसूकराहिशशकानां कीर्तनं (नामोच्चारणं) शोभनं स्यात, (एषां) शब्दः नो शुभः, विलोकनं च न शोभनम् । तथा कपिऋक्षाणां अतो व्यत्ययः स्यात । नद्युत्तारभयप्रवेशसमरे नष्टार्थसंवीक्षणे शकुनाः व्यत्यस्ताः (ज्ञेयाः) नृपेक्षणविधौ यात्रोदिताः शकुनाः शोभनाः (ज्ञेयाः) ॥ १०४ ॥

भाषा—यात्राकाल में गोह, जाहक, सूकर, सर्प, शशक इन सबके नाम का अपने मुख से उच्चारण करना या किसी अन्य के मुख से सुनना शुभ होता है और इन सबका शब्द तथा दर्शन अशुभ होता है। परन्तु वानर और ऋक्षों को इससे विपरीत जानना, अर्थात् यात्राकाल में वानर और ऋक्ष का शब्द तथा दर्शन शुभ होता है और इनके नाम का उच्चारण अशुभ होता है। जिस यात्रा में नदी उतरना या कोई भय-कार्य या गृहप्रवेश या युद्ध या खोई हुई वस्तु को खोजना हो, उसमें पूर्वोक्त शकुन विपरीत अर्थात् ब्राह्मणादि शुभ शकुन अशुभ होते हैं और वंध्या चर्मेत्यादि अशुभ शकुन शुभ होते हैं। राजा के दर्शनार्थ यात्रा में शुभ शकुन शुभ और अशुभ शकुन अशुभ होते हैं ॥१०४॥

वामभाग में शुभ शकुन ।

वामाङ्गे कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला ।
पिङ्गला छुछुका श्रेष्ठा शिवा पुरुषसंज्ञिताः ॥ १०५ ॥

अन्वयः—कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला पिंगला छुछुका शिवा (तथा) पुरुषसंज्ञिताः वामांगे [वामभागे] श्रेष्ठाः (भवन्ति) ॥ १०५ ॥

भाषा—कोयल, छिपलकी, कबूतरी, गर्गरइया, रला, पिङ्गला, छछून्दरी, सियारी और पुरुषसंज्ञक अर्थात् कबूतर, खंजन, तित्तिर, हंस इत्यादि ये सब यात्रा करनेवाले के समय वाम भाग में मिलें तो शुभ होते हैं ॥ १०५ ॥

दक्षिण भाग में शुभ शकुन ।

छिक्करः पिक्को भासः श्रीकण्ठो वानरो रुरुः ।
स्त्रीसंज्ञकाःकाकऋक्षश्वानः स्युर्दक्षिणाः शुभाः ॥ १०६ ॥

अन्वयः—छिक्करः, पिक्कः, भासः, श्रीकण्ठः, वानरः, रुरुः, स्त्रीसंज्ञकाः काकऋक्षश्वानः दक्षिणाः शुभाः स्युः ॥ १०६ ॥

भाषा—छिक्कर अर्थात् मृगजाति, पिक्क पक्षिविशेष, भास, श्रीकण्ठ वानर, रुरु मृगविशेष और स्त्री नामवाले जीव, काक, ऋक्ष, कुत्ता ये सब यात्रा करनेवाले के दक्षिणभाग में शुभ होते हैं ॥ १०६ ॥

साधारण शकुन ।

प्रदक्षिणगताः श्रेष्ठा यात्रायां मृगपक्षिणः ।
ओजा मृगा व्रजन्तोऽतिधन्या वामे खरस्वनः ॥१०७॥

अन्वयः—यात्रायां मृगपक्षिणः प्रदक्षिणगताः श्रेष्ठाः, ओजाः (विषमसंख्यकाः) मृगाः व्रजन्तः (दृष्टाश्चेत् तदा) अतिधन्याः । (तथा) वामे खरस्वनः (शुभः स्यात्) ॥ १०७ ॥

भाषा—मृग और पक्षी ये सब यात्रा में दहिनी तरफ चलते हुए मिलें तो शुभ होते हैं और उनमें भी दहिनी तरफ चलते हुए मृग यदि विषम अर्थात् एक-तीन-पाँच इत्यादि हों तो अति शुभ होते हैं और बाईं तरफ गधे का शब्द हो तो भी शुभ होता है ॥ १०७ ॥

अशुभ शकुन का उद्धार ।

आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादश व्रजेत् ।
द्वितीये षोडशप्राणांस्तृतीये न क्वचिद्व्रजेत् ॥ १०८ ॥

अन्वयः—आद्ये अपशकुने एकादश प्राणान् स्थित्वा, द्वितीये अपशकुने षोडशप्राणान् स्थित्वा व्रजेत्, तृतीये अपशकुने क्वचित् न व्रजेत् ॥ १०८ ॥

भाषा—यात्राकाल में पहिले कोई अशुभ शकुन हो तो ग्यारह प्राण पर्यन्त और फिर दूसरी बार भी कोई अशुभ शकुन हो तो सोलह प्राण पर्यन्त स्थित रहकर फिर यात्रा करे और तीसरी बार फिर कोई अशकुन हो तो यात्रा न करे ॥ १०८ ॥

यात्रा से लौटने पर गृहप्रवेश का मुहूर्त्त।

यात्रानिवृत्तौ शुभदं प्रवेशनं मृदुध्रुवैः क्षिप्रचरैः पुनर्गमः।
द्वीशेऽनले दारुणभे तथोग्रभे स्त्रीगेहपुत्रात्मविनाशनं क्रमात् ॥

अन्वयः—यात्रानिवृत्तौ मृदुध्रुवैः प्रवेशनं शुभदं (स्यात्)। क्षिप्रचरैः पुनः गमः (गमनं भवति)। द्वीशे, अनले दारुणभे तथा उग्रभे (प्रवेशे सति) क्रमात् स्त्रीपुत्रगेहात्मविनाशनं (स्यात्) ॥ १०९ ॥

भाषा—यात्रा करके लौटने पर चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, इन नक्षत्रों में घर में जाना शुभ होता है। यदि अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, इन नक्षत्रों में गृहप्रवेश हो तो फिर शीघ्र ही यात्रा करनी पड़ती है, इसलिए ये नक्षत्र गृहप्रवेश में मध्यम हैं। विशाखा में प्रवेश हो तो स्त्री का नाश; कृत्तिका में घर का नाश; मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा, इन नक्षत्रों में गृहप्रवेश हो तो पुत्र का नाश और तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, इन नक्षत्रों में गृहप्रवेश हो तो अपना ही नाश होता है ॥ १०९ ॥

पूर्वोक्त दोषों का पुनः परिगणन।

अयनर्क्षमासतिथिकालवासरोद्भवशूलसंमुखसितज्ञदिक्पाः।
भृगुवक्रतादिपरिघाख्यदण्डकस्त्र्यृतुजाद्यशौचमपिचोत्सवादिकम् ॥
मृतपक्षरिक्तरवितर्कसंख्यकास्तिथयश्च सौररविभौमवासराः।
अपि वामपृष्ठगविधुस्तथाऽलो वसुपञ्चकाभिजिदथापि दक्षिणे १११

अन्वयः—अयनर्क्षमासतिथिकालवासरोद्भवशूलसम्मुखसितज्ञदिक्पाः भृगुवक्रतादिपरिघाख्यदंडकस्त्र्यृतुजाद्यशौचम् अपि वा उत्सवादिकं (दोषं यात्रायां

त्यजेत्) मृतपक्षरिक्तरवितर्कसंख्यकाः तिथयः. च सौरिरविभौमवासराः, अपि वामपृष्ठगविधुः तथा आडलः, अथ वसुपञ्चकाभिजित् अपि (सर्वे) दक्षिणे (त्याज्यम्) ॥ ११० ॥ १११ ॥

भाषा—उन्तालीसवें श्लोक में कहा हुआ 'सौम्यायने' इत्यादि, अयनशूल, दसवें श्लोक में कहा हुआ 'न पूर्वदिशि संक्रमे' इत्यादि नक्षत्रशूल, वृषादि तीन-तीन राशियों में सूर्य के रहते पूर्वादि दिशाओं में यात्रा करे। यह मासशूल, तैंतीसवें श्लोक में कहा हुआ 'नवभूम्य' इत्यादि योगिनीरूप तिथिशूल, चौवनवें श्लोक में कहा हुआ 'उषःकाल' इत्यादि कालशूल, दशवें श्लोक में कहा हुआ 'न सौरिविधुवारे' इत्यादि वारशूल, संमुख शुक्र-बुध तथा दिक्कप अर्थात् लालाटिक योग, शुक्र की वक्रता क्षीणतादि, परिघदण्ड दोष, स्त्री का रजोदर्शन, जननाशौच, मरणाशौच, विवाह, यज्ञोपवीतादि उत्सव ॥११०॥ और ऐसे ही मृतपक्ष, चौथ, नवमी, चतुर्दशी, द्वादशी, छठ ये तिथियाँ, शनैश्चर, रविवार और मंगल ये वासर, बाएँ तथा पीछे स्थित चन्द्रमा, आडलयोग और दक्षिण में धनिष्ठादि पाँच नक्षत्र तथा अभिजित् मुहूर्त्त ये सब यात्रा में निषिद्ध हैं ॥ १११ ॥

लग्न के दोषों का पुनः परिगणन ।

लग्ने जन्मर्क्षतन्वोर्मृतिगृहमहितर्क्षाच्च षष्ठं तदीशा
वा लग्ने कुम्भमीनर्क्षनवलवतनू चापि पृष्ठोदयं च ।
पृष्ठाशामृक्षसंस्थं दशमशनिरथो सप्तमे चापि काव्यः
केन्द्रे वक्राश्च वक्री ग्रहदिवसविवाहोक्तदोषाश्च नेष्टाः ११२

अन्वयः—जन्मर्क्षतन्वोः मृतिगृह च (तथा) अहितर्क्षात् षष्ठं लग्ने (स्थितं) वा तदीशाः लग्ने (स्थिताः) च (तथा) कुम्भमीनर्क्षनवलवतनू, अपि च पृष्ठोदयं, पृष्ठाशासंस्थं ऋक्षं अथो दशमशनिः, सप्तमे काव्यः, अपिच केन्द्रे वक्राः [वक्रग्रहाः] च पुनः वक्रीग्रहदिवसविवाहोक्तदोषाः (यात्रायां) नेष्टाः ॥११२॥

भाषा—लग्न के विचार में जन्मराशि और जन्मलग्न से आठवीं राशि, अपने शत्रु की जन्मराशि और जन्मलग्न से छठीं राशि, इनके स्वामी, कुम्भराशि और कुम्भराशि का नवांश तथा मीनराशि और मीन

राशि का नवांश और मेष, वृष, कर्क, धन, मकर ये राशियां लग्न में रहते यात्रा में निषिद्ध हैं। ऐसे ही पीछे स्थित लग्नराशि तथा दसवें स्थान में स्थित शनैश्चर, सातवें स्थान में शुक्र और केन्द्र में स्थित वक्रीग्रह का दिन और विवाह में कहे हुए सब दोष यात्रा में निषिद्ध माने गये हैं ॥ ११२ ॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ यात्राप्रकरणं समाप्तम् ॥ ११ ॥

—:❀:—

वास्तुप्रकरणम्।

यद्भंद्व्यङ्कसुतेशदिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभा-
त्स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम्।
काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विपरतो यस्याधिकाः सोऽर्थदोऽ-
थ द्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः ॥ १ ॥

अन्वयः—नामभात् यद्भं द्व्यंकसुतेशदिङ्मितं (भवेत्) असौ ग्रामः शुभः (स्यात्)। स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम्, अनयोः (नामग्रामयोः) काकिण्यः (स्युः) च तद्विपरतः यस्य अधिकारः स अर्थदः। अथ पूर्वतः द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां द्वारं हितं (स्यात्) ॥ १ ॥

भाषा—वस्तुनाम घर का है। गृहस्थों की सम्पूर्ण श्रौतस्मार्तक्रिया पराये घर में की हुई निष्फल हो जाती है, इस कारण अपना घर बनाना सबको आवश्यक है। वह घर शुभाशुभ गाँव के द्वारा शुभाशुभ फलदायक होता है, इसलिये शुभाशुभ गाँव कहते हैं—बसनेवाले के नाम की राशि से जिस गाँव के नाम की राशि दूसरी, नवीं, पाँचवीं, ग्यारहवीं हो वह गाँव उस बसनेवाले को शुभ फलदायक अन्यथा अशुभ फलदायक होता है। अब ऋणी गाँव कहते हैं। बसनेवाले के नाम का पहिला अक्षर (अ क च ट त प य श) इन आठों में से जिस वर्ग का हो, उस वर्ग की संख्या को द्विगुण करके उसमें गाँव के वर्ग की संख्या को जोड़कर अलग स्थापित करे और ऐसे ही गाँव के वर्ग की संख्या को द्विगुण करके उसमें बसनेवाले के वर्ग की संख्या को जोड़कर अलग स्थापित करे।

तदनन्तर इन अलग स्थापित दोनों संख्याओं में आठ का भाग देने से जिसमें कौड़ी अधिक शेष हों वह ऋणी होता है और जिसमें कम हों वह धनी होता है। यदि गाँव ऋणी हो तो शुभ अन्यथा अशुभ होता है। उदाहरण—नारायणदास इस नाम का पहिला अक्षर नकार तवर्ग में है और 'लखनऊ' इस गाँव के नाम का पहिला अक्षर लकार यवर्ग में है। अब नारायणदास के तवर्ग की पाँच संख्या को द्विगुण किया तो दस हुए। इनमें यवर्ग को सात संख्या जोड़ी तो सत्रह हुए। अब नारायणदास के नाम की सत्रह संख्या को अलग स्थापित किया। ऐसे ही लखनऊ के यवर्ग की सात संख्या को द्विगुण किया, चौदह हुए। इनमें तवर्ग की पाँच संख्या को जोड़ा तो उन्नीस हुए, लखनऊ की उन्नीस संख्या को अलग स्थापित किया। अब इन दोनों में आठ का भाग दिया तो नारायणदास की एक कौड़ी शेष रही और लखनऊ की तीन कौड़ी शेष रही। यहाँ नारायणदास से लखनऊ की कौड़ियाँ अधिक हैं, इस कारण लखनऊ नारायणदास का ऋणी है। ऐसे ही सेवक-स्वामी तथा स्त्री-पुरुष आदि में विचार करना चाहिये। अब वर्णक्रम से दरवाजे की दिशा कहते हैं। कर्क, वृश्चिक, मीन इन ब्राह्मणवर्ण राशिवाले पुरुषों के घर का दरवाजा पूर्व दिशा में और वृष, कन्या, मकर इन वैश्यवर्ण राशिवाले पुरुषों का दरवाजा पश्चिम में और मेष, सिंह, धन इन क्षत्रियवर्ण राशिवाले पुरुषों के घर का दरवाजा उत्तर दिशा में हो तो हितकारक होता है॥ १॥

राशिद्वारा निषिद्ध वासस्थान।

गोसिंहनक्रमिथुनं निवसेन्न मध्ये
ग्रामस्य पूर्वककुभोऽलिझषाङ्गनाश्च।
कर्को धनुस्तुलभमेषघटाश्च तद्व-
द्वर्गाःस्वपञ्चमपरा बलिनः स्युरैन्द्र्याः॥ २॥

अन्वयः—गोसिंहनक्रमिथुनं ग्रामस्य मध्ये न निवसेत्। च अलिझषाङ्गनाः कर्कः धनुस्तुलमेषघटाः(क्रमात्) पूर्वककुभः (पूर्वदिशमारभ्याष्टसु दिक्षु) न निवसेयुः च पुनः तद्वत् स्वपञ्चमपरा वर्गाः ऐन्द्र्याः (पूर्वतः क्रमात्) बलिनः (स्युः)॥२॥

भाषा—नौ भाग कल्पना किये हुए गाँव के मध्यभाग में वृष, सिंह, मकर, मिथुन राशिवाले पुरुष न बसें और पूर्वादि आठ दिशाओं में क्रम से वृश्चिक, मीन, कन्या, कर्क, धन, तुला, मेष, कुम्भ इन राशियोंवाले पुरुष न बसें, अर्थात् पूर्व में वृश्चिक राशिवाला, आग्नेय कोण में मीन राशिवाला, दक्षिण में कन्या राशिवाला, नैर्ऋत्य में कर्क राशिवाला, पश्चिम में धन राशिवाला, वायव्य में तुला राशिवाला, उत्तर में मेष राशिवाला और ईशान में कुम्भ राशिवाला पुरुष न बसे।

ग्रामनिषिद्ध वासस्थान चक्र।

कुम्भ	वृश्चिक	मीन
मेष	वृष सिंह मकर मिथुन	कन्या
तुला	धन	कर्क

भाषा—ऐसे ही अपने से पाँचवें शत्रुवाले वर्ग भी पूर्वादि आठ दिशाओं में बली होते हैं, अर्थात् पूर्व में अवर्ग, आग्नेय में कवर्ग, दक्षिण में चवर्ग, नैर्ऋत्य में टवर्ग, पश्चिम में तवर्ग, वायव्य में पवर्ग, उत्तर में यवर्ग, ईशान में शवर्ग बली होता है। इनमें अपने वर्ग से पाँचवाँ वर्ग शत्रु होता है, उस वर्ग की दिशा में वास करना तथा दरवाजा न लगाना चाहिए सो चक्र में स्पष्ट है ॥ २ ॥

अवर्ग	कवर्ग	चवर्ग	टवर्ग	तवर्ग	पवर्ग	यवर्ग	शवर्ग	वर्गाः
पूर्व	आग्ने.	दक्षि.	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	बलीदि.
पश्चिम	वाय.	उत्तर	ईशान	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	शत्रुदि.

इन नक्षत्र और इष्ट आय के द्वारा घर बनाने की और विस्तारादि आयों की विधि।

एकोनितेष्टर्क्षहता द्वितिथ्यो रूपोनितेष्टायहतेन्दुनागैः।
युक्ता घनै १७श्चापि युता विभक्ता भूपाश्विभिः शेषमितो हि पिण्डः।
स्वेष्टायनक्षत्रभवोथ दैर्घ्यहृत्स्याद्विस्तृतिर्विस्तृतिहृच्च दीर्घता।
आया ध्वजो धूम्रहरिश्वगोखरेभध्वांक्षकाः पिण्ड इहाष्टशेषिते॥४॥

अन्वयः——द्वितिथ्यः एकोनितेष्टर्क्षहताः रूपोनितेष्टायहतेन्दुनागैः युक्ताः घनैश्चापि युताः, भूपाश्विभिः विभक्ताः शेषमितः स्वेष्टायनक्षत्रभवः पिण्डः स्यात्। अथ (सः) दैर्घ्यहृत विस्तृतिः (स्यात्) च (तथा) विस्तृतिहृत् दीर्घता, इह पिण्डे अष्टशेषिते (क्रमेण) ध्वजः धूम्रहरिश्वगोखरेभध्वांक्षकाः (इति ध्वजादिकाः) आयाः (स्युः) ॥ ३ ॥ ४ ॥

भाषा—जिस प्रकार विवाह में स्त्री-पुरुष के जन्मनक्षत्र से नाड़ी-गण-वर्ण आदि कूटों का विचार किया जाता है, उसी प्रकार गाँव के नाम से तथा बसनेवाले के प्रसिद्ध नाम से विचार करने पर ठीक हो तो गाँव के नाम के नक्षत्र को इष्ट मानकर उसकी संख्या में से एक घटाकर जो शेष रहे, उससे एकसौ बावन १५२ को गुणा करने से जितनी संख्या हो उसे अलग स्थापित करे। तदनन्तर वर्ण आदि क्रम से अथवा द्वारक्रम से अथवा स्थानक्रम से जो ध्वजादिक आयों में से इष्ट आय हो उसकी संख्या में एक घटाने से जो शेष रहे, उससे एक्यासी को गुणने से जितनी संख्या हो उसको पूर्व स्थापित संख्या में जोड़े और उसी में सत्रह १७ और भी जोड़कर दोसौ सोलह २१६ का भाग दे। जो शेष रहे, वही उस घर का पिण्ड अर्थात् क्षेत्रफल होता है। उदाहरण——यथा बसनेवाले का नाम नरायनदास है, जहाँ घर बनवाना है उसका नाम बनारस है। होड़ाचक्र के अनुसार नीलकण्ठ का अनुराधा नक्षत्र और बाँसी का रोहिणी नक्षत्र हुआ। इन दोनों के राशिकूट सब ठीक हैं, इस कारण रोहिणी नक्षत्र इष्ट हुआ। अश्विनी से इसकी चार संख्या है। उसमें एक घटाया तो तीन शेष रहे। उनमें एकसौ बावन को गुण दिया तो चारसौ छप्पन हुए। घर का दरवाजा पूर्व दिशा में करना है, इस कारण सिंह नाम

आय इष्ट हुआ। ध्वजादि आयों के क्रम से उसकी तीन संख्या है। उसमें एक घटाया तो दो शेष रहे। उनमें एक्यासी को गुणा तो एकसौ बासठ हुए। उनको पूर्व कही हुई चारसौ छप्पन संख्या में जोड़ा तो छः सौ अठारह हुए। इनमें सत्रह और जोड़ा तो छः सौ पैंतिस हुए। इनमें दो सौ सोलह का भाग देने पर दोसौ तीन शेष रहे। यही उस घर का क्षेत्रफल हुआ ॥ ३ ॥

भाषा—इष्ट नक्षत्र तथा आय से सिद्ध पिण्ड में लम्बाई का भाग देने से चौड़ाई और चौड़ाई का भाग देने से घर की लम्बाई होती है। उदाहरण--यथा पिण्ड २०३ है, इसमें २९ का भाग देने से ७ लब्ध हुए, ७ का भाग देने से २९ होते हैं। २९ लम्बाई और ७ चौड़ाई हुई। वैसे ही पूर्व कहे हुए पिंड में आठ का भाग देने पर जो शेष रहे, वह ध्वज आदि क्रम से आय होते हैं। जैसे एक शेष हो तो ध्वज, दो शेष हों तो धूम, तीन हों तो सिंह, चार हों तो कुत्ता, पाँच हों तो गौ, छः हों तो गधा, सात हों तो हाथी और आठ शेष हों तो कौआ आय होता है ॥ ४ ॥

ध्वज आदि कार्यों का प्रयोजन

ध्वजादिकाः सर्वदिशि ध्वजे मुखं कार्यं हरौ पूर्वयमोत्तरे तथा ।
प्राच्यां वृषे प्राग्यमयोर्गजेऽथवा पश्चादुदक्पूर्वयमे द्विजादितः ॥५॥

अन्वयः—ध्वजादिकाः (इति पूर्वेण संबन्धः)। ध्वजे (आये सति) सर्वदिशि मुखं (कार्यं), हरौ पूर्वयमोत्तरे, तथा वृषे प्राच्यां, गजे प्राग्यमयोः (मुखं कार्यं), अथवा द्विजातितः (क्रमेण) पश्चादुदक् पूर्वयमे (द्वारं शुभं स्यात्) ॥ ५ ॥

भाषा–यदि ध्वज आय आता हो तो जिस दिशा में इच्छा हो उसमें मकान का दरवाजा लगावे। सिंह आय आता हो तो पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, इन तीनों में से जिस दिशा में इच्छा हो उसमें दरवाजा लगावे। नृप आय आता हो तो पूर्व दिशा में, गज आय आता हो तो पूर्व और दक्षिण दिशा में से किसी दिशा में दरवाजा लगावे। यदि ब्राह्मण मकान बनावे तो उसको ध्वज आय तथा पश्चिम दिशा में मकान का

दरवाजा शुभ होता है। क्षत्रिय को सिंह आय तथा उत्तर दिशा में मकान का दरवाजा, वैश्य को वृष आय तथा पूर्व दिशा में मकान का दरवाजा और शूद्र को गज आय तथा दक्षिण दिशा में मकान का दरवाजा शुभ होता है ॥ ५ ॥

गृहारम्भ में निषिद्ध काल।

गृहेशतत्स्त्रीसुखवित्तनाशोऽर्केन्दुीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे।
कर्त्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते पृष्ठगते खनिःस्यात्॥६॥

अन्वयः—अर्केन्दुीज्यशुक्रे विबले अस्तनीचे सति (क्रमात्) गृहेशतत्स्त्रीसुखवित्तनाशः स्यात्। विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते [सति] कर्त्तुः स्थितिः नो (भवेत्), पृष्ठगते (सति) खनिः स्यात् ॥ ६ ॥

भाषा—गृहारम्भ काल में यदि सूर्य निर्बल, अस्त या नीच स्थान में हो तो घर के स्वामी का मरण, यदि चन्द्रमा निर्बल, अस्त या नीच स्थान में हो तो उसकी स्त्री का मरण होता है। यदि बृहस्पति निर्बल, अस्त या नीच स्थान में हो तो सुख का नाश, यदि शुक्र निर्बल, अस्त या नीच स्थान में हो तो धन का नाश होता है। गृहारम्भकाल में चन्द्रमा का नक्षत्र या वस्तु का नक्षत्र घर के आगे पड़ता हो तो उस घर में स्वामी की स्थिति नहीं होती, पीछे पड़ता हो तो उस घर में सेंधि दी जाती है अर्थात् चोरी होती है। जिस नक्षत्र में चन्द्रमा स्थित हो वह चन्द्रनक्षत्र कहा जाता है। पूर्व कहे हुए घर के पिण्ड को आठ से गुणाकर सत्ताईस का भाग देने से जो शेष हो, वही अश्विनी आदि की गणना से वास्तुनक्षत्र होगा। चन्द्रमा वा वास्तु नक्षत्र की घर के आगे पीछे स्थिति जानने की यह रीति है कि कृत्तिका आदि सात-सात नक्षत्रों का पूर्व आदि चारों दिशाओं में न्यास करने पर जिस दिशा में ये दोनों नक्षत्र पड़ें, वह दिशा यदि घर के दरवाजे के सामने हो तो उक्त नक्षत्र घर के आगे होंगे और पीछे हो तो उक्त नक्षत्र भी घर के पीछे होंगे। अन्य आचार्य लग्न से चन्द्रमा की स्थिति कहते हैं। यथा लग्न में स्थित चन्द्रमा पूर्व द्वारवाले घर के आगे, दक्षिण द्वारवाले घर के बायें, पश्चिम द्वारवाले घर के पीछे और उत्तर द्वारवाले घर के दाहिने होगा ॥ ६ ॥

व्यय तथा अंश

भं नागतष्टं व्यय ईरितोऽसो ध्रुवादिनामाक्षरयुक् स पिण्डः ।
तष्टो गुणैरिन्द्रकृतान्तभूपा ह्यंशा भवेयुर्न शुभोऽन्तकोऽत्र ॥७॥

अन्वयः—भं नागतष्टं व्ययः ईरितः असौ ध्रुवादिनामाक्षरयुक् स पिण्डः गुणैः तष्टः (क्रमेण) इन्द्रकृतान्तभूपाः अंशाः भवेयुः, अत्र अन्तकः अंशः न शुभः ॥७॥

भाषा—इष्ट नक्षत्र की संख्या में आठ का भाग देने से जो शेष रहे वही व्यय कहा जाता है। इसका प्रयोजन यह है कि जिस घर का आय बहुत हो और व्यय थोड़ा हो, वह घर शुभ होता है। उदाहरण—इष्टर्क्ष रोहिणी की ४ संख्या में आठ का भाग देने से चार शेष रहे, यही इसका व्यय हुआ। परन्तु यही आय ३ ही है, इसलिये यह घर शुभ नहीं है। और वही व्यय (जिनको आगे कहेंगे) ध्रुव आदि नाम-वाले घरों के नामाक्षरों की संख्या में युक्त करके पिण्ड में जोड़े और उसमें तीन का भाग दे। यदि एक शेष हो तो इन्द्र, दो शेष हों तो यम और तीन शेष हों तो राज अंश होता है। प्रयोजन यह है कि जिस घर में यम का अंश रहता है, वह घर शुभ नहीं होता। इन्द्र और राज अंश-वाला घर शुभ होता है ॥ ७ ॥

शालाध्रुवांक

दिक्षु पूर्वादितः शाला ध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः ।
शालाध्रुवाङ्कसंयोगः सैको वेश्मध्रुवादिकम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—पूर्वादितः दिक्षु भूः, द्वौ कृताः, गजाः शालाध्रुवाः स्युः । शाला-ध्रुवाङ्कसंयोगः सैकः ध्रुवादिकं वेश्म स्यात् ॥ ८ ॥

भाषा—पूर्वादि चारों दिशाओं में क्रम से एक, दो, चार, आठ ये शालाध्रुवांक होते हैं। पूर्व दिशा में दरवाजा बनाने की इच्छा हो तो एक, दक्षिण में दो, पश्चिम में चार और उत्तर में आठ शालाध्रुवांक होते हैं। दिशा-भेद से मकान में जितने दरवाजे बनाना हो, उतने ही शालाध्रुवांकों का योग करके उसमें एक और जोड़े। वह जितनी संख्या हो उतनी ही संख्या वाला ध्रुव आदि नामका घर होता है। ध्रुव आदि सोलह नाम आगे कहेंगे ॥ ८ ॥

भ्रुवादिकों की नामाक्षरसंख्या

तिथ्यर्काष्टाष्टिगोरुद्रशक्रे नामाक्षरं त्रयम् ।
भूद्व्यब्धीष्वङ्गदिग्वह्निविश्वेषु द्वौ नगेऽब्धयः ॥ ६ ॥

अन्वयः—तिथ्यर्काष्टाष्टिगोरुद्रशक्रे नामाक्षरं त्रयं स्यात् । भूद्व्यब्धीष्वंगदिग्वह्निविश्वेषु नामाक्षरं द्वौ, नगे अब्धयः (चतुष्टयम्) ॥ ९ ॥

भाषा—पन्द्रहवें, बारहवें, आठवें, सोलहवें, नवें, ग्यारहवे और चौदहवें घर के नाम में तीन अक्षर हैं । पहिले, दूसरे, चौथे, पांचवें, छठें, दसवें, तीसरे और तेरहवें घर के नाम में दो अक्षर हैं । सातवें घर के नाम में चार अक्षर हैं। इन अक्षरों का प्रयोजन इसी प्रकरण के सातवें श्लोक में कह आये हैं ॥ ९ ॥

ध्रुव आदि सोलह घरों के नाम

ध्रुवधान्ये जयनन्दौ खरकान्तमनोरमं सुमुखं दुर्मुखोग्रम् ।
रिपुदं वित्तदनाशे चाक्रन्दं विपुलं विजयाख्यं स्यात् ॥१०॥

अन्वयः—श्लोकक्रमेणैव सुगमः ॥ १० ॥

भाषा—ध्रुव १ धान्य २ जय ३ नंद ४ खर ५ कान्त ६ मनोरम ७ सुमुख ८ दुर्मुख ९ उग्र १० रिपुद ११ वित्तद १२ नाश १३ आक्रन्द १४ विपुल १५ विजय १६ ये घरों के सोलह नाम हैं । इनमें ध्रुव उसका नाम है, जिसमें दरवाजा किसी दिशा में न हो, केवल ऊपर ही खुला हो । जिसमें पूर्व की ओर दरवाजा हो, उसका नाम धान्य है । दक्षिण दिशा में जिसका दरवाजा हो, उस घर का नाम जय है । पूर्व और दक्षिण द्वारवाले घर का नाम नन्द है । पश्चिम द्वारवाले घर का नाम खर है । पूर्व और पश्चिम द्वारवाले घर का नाम कान्त है । दक्षिण और पश्चिम द्वारवाले घर का नाम मनोरम है । पूर्व, पश्चिम और दक्षिण द्वारवाले घर का नाम सुमुख है । उत्तर द्वारवाले घर का नाम दुर्मुख है, पूर्व और उत्तर द्वारवाले घर का नाम उग्र है । दक्षिण और उत्तर द्वारवाले घर का नाम रिपुद है । पूर्व, उत्तर और दक्षिण द्वारवाले घर का नाम वित्तद है । पश्चिम और उत्तर द्वारवालेघरका नाम नाश

है । पूर्व, पश्चिम और उत्तर द्वारवाले घर का नाम आक्रन्द है । दक्षिण पश्चिम और उत्तर द्वारवाले घर का नाम विपुल है । पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर द्वारवाले घर का नाम विजय है । जिसका जैसा नाम है, वह घर वैसा फल देता है ॥ १० ॥

अन्य आचार्य के मत से आय-वार इत्यादि नव पदार्थों का साधन

पिण्डे नवाङ्काङ्गगजाग्निनागनागाब्धिनागैर्गुणितैःक्रमेण ।
विभाजितैर्नागनगाङ्कसूर्यनागर्क्षतिथ्यर्क्षखभानुभिश्च ॥११॥
आयो वारोंऽशको द्रव्यमृणमृक्षं तिथिर्युतिः ।
आयुश्चाथ गृहेशर्क्षगृहभैक्यं मृतिप्रदम् ॥ १२ ॥

अन्वयः—पिण्डे नवांकांगगजाग्निनागनागाब्धिनागैः गुणितैः क्रमेण नागनगाङ्कसूर्यनागर्क्षतिथ्यर्क्षखभानुभिः विभाजितैः (क्रमात्) आयः, वारः, अंशकः, द्रव्यं, ऋणं, ऋक्षं, तिथिः, युतिः, आयुश्च (ज्ञेयम्) अथ गृहेशर्क्षगृहभैक्यं मृतिप्रदं (स्यात्) ॥ ११॥१२ ॥

भाषा—पिण्ड में ९ । ९ । ६ । ८ । ८ । ४ । ८ इन अंकों को गुणा करके क्रम से अलग स्थापित करे । उनमें क्रम से ८ । ७ । ९ । १२ । ८ । २७ । १५ । २७ । १२० इन अंकों से भाग देने पर जो शेष हो वह क्रम से आय, वार, अंश, धन, ऋण, नक्षत्र, तिथि, योग, आयु होता है । अर्थात् पिण्ड को नौ से गुणकर आठ का भाग देने पर जो शेष हो वह आय और पिण्ड को नौ से गुणकर सात का भाग देने पर जो शेष हो वह वार होता है । ऐसे ही सब जानना चाहिए । उदाहरण—जिस मकान का रोहिणी नक्षत्र और सिंह आय इष्ट है, उसके २०३ पिण्ड को ९ । ९ । ६ । ८ । ३ । ८ । ८ । ४ । ८ । इन अंकों से गुणकर ८ । ७ । ९ । १२ । ८ । २७ । १५ । २७ । १२० इन अंकों का भाग दिया तो क्रम से ३ । ७ । ३ । ४ । १ । ४ । ४ । २ । ६४ ये अंक शेष रहे । इस कारण इस घर का सिंह आय शनिवार, तीसरा अंश, धन चार, ऋण एक, रोहिणी नक्षत्र, चौथ तिथि, प्रीतियोग और चौंसठ वर्ष की आयु हुई । प्रयोजन यह है कि विषम आयवाला

घर शुभ और सम आय वाला दुःख देनेवाला होता है। सूर्य और मङ्गल के वार, राशि, अंशवाले घर में अग्नि का भय होता है, इसलिए ये त्याज्य और अन्य गृहों के वार राशि अंश ग्रहण के योग्य होते हैं। ऐसे ही अधिक धन और न्यून ऋणवाला घर शुभ तथा न्यून धन और अधिक ऋणवाला घर अशुभ होता है। नक्षत्र जानने का प्रयोजन यह है कि मकान के नक्षत्र से गृहारम्भ के दिन नक्षत्र तक तथा स्वामी के नक्षत्र तक गिनकर जितनी संख्या हो उसमें नौ का भाग देने पर यदि १।३।५।७। शेष रहें तो मकान अशुभ और यदि २।४।६।८।९ शेष रहें तो मकान शुभ होता है। तिथि का प्रयोजन यह है कि यदि चौथ, नवमी, चतुर्दशी, अमावस्या, इनमें से कोई तिथि आती हो तो अशुभ होती है। ऐसे ही शुभाशुभप्रकरण में कहे हुए विष्कुम्भ–प्रीत्यादि अशुभ योगवाला मकान अशुभ तथा शुभ योगवाला मकान शुभ होता है। आयु का प्रयोजन तो स्पष्ट ही है कि अधिक दिन रहनेवाला मकान शुभ और थोड़े दिन रहनेवाला मकान अशुभ होता है। अब पूर्व में जो कहा है कि घर के स्वामी के नक्षत्र से तथा गाँव के नक्षत्र से स्त्री-पुरुष के विवाह का सा विचार करना चाहिए, उस पर विशेष कहते हैं। घर के स्वामी तथा घर का यदि एक ही नक्षत्र हो तो मृत्यु होती है, परन्तु यदि राशि एक न हो तो यह दोष नहीं होता। और भी यह विशेषता है कि यहाँ नाड़ीवेध दोषकारक नहीं होता। यहाँ राशि जानने की यह रीति है कि अश्विनी आदि तीन नक्षत्र तक मेष राशि, मघा आदि तीन नक्षत्र तक सिंहराशि, मूल आदि तीन नक्षत्र तक धनुराशि होती है और शेष नक्षत्रों में उचित क्रम से नौ राशियाँ होती हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥

गृहारम्भ में वृषवास्तुचक्र

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे ।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं रामैः पृष्ठे श्रीर्युगैर्दक्षकुक्षौ ॥ १३ ॥
लाभो रामैःपुच्छगैःस्वामिनाशो वेदैर्नैःस्वं वामकुक्षौ मुखस्थैः ।
रामैः पीडा सन्ततं वार्कधिष्ण्याद्श्वैरुद्रैर्दिग्भिरुक्तं ह्यसत्सत् ॥१४॥

अन्वयः—गेहाद्यारम्भे अर्कभात् वत्सशीर्षे रामैः (नक्षत्रैः) दाहः, अग्रपादे वेदभैः शून्यं, पृष्ठपादे वेदैः स्थिरत्वं, पृष्ठे रामैः श्रीः, दक्षकुक्षौ युगैः लाभः, पुच्छगैः रामैः स्वामिनाशः, वामकुक्षौ वेदैः नैःस्वं, मुखस्थैः रामैः सन्ततं पीडा (स्यात्)। वा अर्कधिष्ण्यात् अश्वैः रुद्रैः दिग्भिः (क्रमात्) हि असत् सत् उक्तम् ॥ १३॥१४ ॥

भाषा—बैल के समान चक्र बनावे। सूर्य के नक्षत्र से तीन नक्षत्र उस चक्र के शिर में स्थापित करे। यदि उनमें घर का आरम्भ हो तो घर में आग लगे। फिर उनसे अगले चार नक्षत्र उस चक्र के अगले पैरों पर स्थापित करे। उनमें घर बहुत दिनों तक स्थिर रहे। फिर तीन नक्षत्र पीठ पर स्थापित करे। उनमें घर लक्ष्मीयुक्त हो। फिर चार नक्षत्र दाहिनी कुक्षि में स्थापित करे। उनमें लाभ हो। फिर तीन नक्षत्र पूँछ में स्थापित करे। उनमें घर के स्वामी का नाश हो। फिर चार नक्षत्र बाईं कुक्षि में स्थापित करे। उनमें दरिद्रता हो। फिर तीन नक्षत्र मुख में स्थापित करे। उनमें सदा पीड़ा हो।

वृषवास्तुचक्रम्।

शिर	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	दक्षकुक्षि	पुच्छ	वाम कुक्षि	मुख	बैल के अंग
३	४	४	३	४	३	४	३	नक्षत्र
दाह	शून्य	स्थिरता	श्री	लाभ	स्वा. ना.	दरिद्र.	सदापी.	फल

भाषा—घर बनाने का आरम्भ करने के लिए सूर्य के नक्षत्र से सात नक्षत्र अशुभ, ग्यारह नक्षत्र शुभ और दस नक्षत्र अशुभ कहे गये हैं॥ १३–१४॥

गृहारम्भचक्रम्।

७	११	१०	नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	फल

सौर और चान्द्र महीनों की एकता से घर का दरवाजा

कुम्भेऽर्के फाल्गुने प्रागपरगृहमुखं श्रावणे सिंहकर्क्योः

पौषे नक्रे च याम्योत्तरमुखसदनं गोऽजगेऽर्के च राधे।
मार्गे जूकालिके सद्ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः
सूतीगेहं त्वदित्यां हरिभविधिभयोस्तत्र शस्तः प्रवेशः १५

अन्वयः—कुम्भे अर्के फाल्गुने, सिंहकर्कयोः (अर्के) श्रावणे, नक्रे पौषे च प्रागपरमुखगृहं सत् (शुभं) स्यात्। च (तथा) गोऽजगे अर्के राधे, जूकालिगे अर्के मार्गे, याम्योत्तरमुखसदनं सत् (स्यात्)। ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः (गृहारम्भः शुभः) अदित्यां सूतीगेहं सत (स्यात्)। तत्र (सूतीगेहे) हरिभविधिभयोः प्रवेशः शस्तः (स्यात्)॥ १५॥

भाषा—कुम्भराशि में सूर्य के रहते फाल्गुन महीने में, कर्क और सिंह राशि में सूर्य के रहते श्रावण महीने में तथा मकर राशि में सूर्य के रहते पौष महीने में घर बनावे तो उसका दरवाजा पूर्व या पश्चिम दिशा में शुभ होता है। मेष और वृषराशि में सूर्य के रहते वैशाख महीने में तथा तुला और वृश्चिक राशिमें सूर्य के रहते अगहन महीने में घर बनावे तो उसका दरवाजा उत्तर या दक्षिण दिशा में शुभ होता है। अब गृहारम्भ के नक्षत्र कहते हैं। तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती, शतभिषा, स्वाती, धनिष्ठा, हस्त और पुष्य नक्षत्र में गृहारम्भ शुभ होता है। अब सूतिकागृह का आरम्भ तथा प्रवेश के नक्षत्र में सूतिकागृह का आरम्भ और अभिजित् तथा श्रवण नक्षत्र में प्रवेश करना शुभ होता है॥ १५॥

अन्यप्रकार से सौर-चान्द्र मासों की एकता।

कैश्चिन्मेषरवौ मधौ वृषभगे ज्येष्ठे शुचौ कर्कटे
भाद्रे सिंहगते घटेऽश्वयुजि चोर्जेऽलौ मृगे पौषके।
माघे नक्रघटे शुभं निगदितं गेहं तथोर्जे न स-
त्कन्यायां च तथा धनुष्यपि न सत्कृष्णादिमासाद्भवेत् ॥१६॥

अन्वयः—कैश्चित् मेषरवौ मधौ, वृषभगे रवौ ज्येष्ठे, कर्कटे शुचौ, सिंहगते भाद्रे, घटे अश्वयुजि (आश्विने) च पुनः अलौ ऊर्जे, मृगे पौषके, नक्रघटे रवौ माघे गेहं शुभं निगदितम्। तथा च कन्यायां तथा धनुषि [रवौ] माघे तथा ऊर्जे कार्त्तिके गेहं न सत (मासगणना) कृष्णादिमासात् भवेत्॥ १६॥

भाषा—मेष राशि में सूर्य के रहते चैत्र में, वृष राशि में सूर्य के रहते ज्येष्ठ में, कर्क राशि में सूर्य के रहते आषाढ़ में, सिंह राशि में सूर्य के रहते भाद्रपद में, तुलाराशि में सूर्य के रहते आश्विन में, वृश्चिक राशि में सूर्य के रहते कार्त्तिक में, मकर राशि में सूर्य के रहते पौष में और मकर या कुम्भ राशि में सूर्य के रहते माघ में बनाया हुआ घर शुभ कहा गया है। कन्याराशि में सूर्य के रहते कार्त्तिक में तथा धनु राशि में सूर्य के रहते माघ में बनाया हुआ घर अशुभ कहा गया है। परन्तु यहाँ इन मासों की गणना कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से लेकर शुक्लपक्ष की पूर्णिमा पर्यन्त महीने के क्रम से होती है, अन्यथा शुक्लादि क्रम से उक्त संक्रान्तियों में उक्त मासों का होना दुर्घट है। चैत्र में शोक, वैशाख में धान्य, ज्येष्ठ में मृत्यु, आषाढ़ में पशु का हरण, श्रावण में द्रव्यवृद्धि, भाद्रपद में विनाश, कुआर में युद्ध, कार्त्तिक में मृत्युहानि, अगहन में धन, पौष में श्री, माघ में अग्नि का भय, फाल्गुन में लक्ष्मीप्राप्ति, इस प्रकार श्रीपति आचार्य ने गृहारम्भ में कुछ महीनों का निषेध किया है। उसकी एकता का यह क्रम है कि मीन राशि में सूर्य के रहते चैत्र, मिथुन राशि में सूर्य के रहते ज्येष्ठ और आषाढ़, कन्याराशि में सूर्य के रहते भादौं और कुआर, धनु राशि में सूर्य के रहते मार्गमास अशुभ, अन्यथा शुभ होता है। इसी विषय पर नारदजी ने तथा वशिष्ठजी ने भी स्पष्ट कहा है कि पौष, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण, कुआर, कार्त्तिक, ये महीने घर बनाने में शुभ और मिथुन, कन्या, धनु मीन ये संक्रान्तियाँ अशुभ होती हैं ॥१६॥

तिथियों के क्रम से द्वारका निषेध

पूर्णेन्दुतः प्राग्वदनं नवम्यादिषूत्तरास्यं त्वथ पश्चिमास्यम् ।
दर्शादितः शुक्लदले नवम्यादौ दक्षिणास्यं न शुभं वदन्ति ॥१७॥

अन्वयः—पूर्णेन्दुतः (पूर्णिमामारभ्याष्टमीं यावत्) प्राग्वदनं, तु (पुनः) नवम्यादिषु उत्तरास्यं, अथ दर्शादितः शुक्लदले पश्चिमास्यं नवम्यादौ दक्षिणास्यं [गृहं] शुभं न वदन्ति ॥ १७ ॥

भाषा—पूर्णमासी से लेकर कृष्णाष्टमी पर्यन्त पूर्व दिशा में, कृष्णपक्ष की नवमी से लेकर चतुर्दशी पर्यन्त उत्तर दिशा में, अमावास्या से लेकर शुक्लाष्टमी पर्यन्त पश्चिम दिशा में और शुक्लपक्ष की नवमी से

शुक्ल चतुर्दशी पर्यन्त दक्षिण दिशा में बनाया हुआ घर का द्वार शुभ नहीं होता। द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, छठ, सप्तमी, दशमी, एकादशी और द्वादशी में बनाया हुआ द्वार शुभ होता है, यह व्यवहार-समुच्चय में में कहा है। यह भी कहा है कि शुक्लपक्ष में सौख्य तथा कृष्णपक्ष में चोरी होती है। वराहमिहिर ने कहा है कि मार्ग, वृक्ष, किसी मकान का कोण, कूप और नापदान के सामने का द्वार शुभ नहीं होता। परन्तु जितनी ऊँची मकान की दीवार हो उसकी दूनी भूमि छोड़कर यदि मार्ग आदि हों तो दोष नहीं है। द्वार के प्रसंग में विश्वकर्मा ने कहा है कि देवस्थान, विहारस्थान, जलशाला, मण्डप और यज्ञशाला के मध्य में और अन्य मकानों के मध्य स्थान को छोड़कर द्वार लगाना चाहिए, क्योंकि मकान के मध्य में वास्तुपुरुष का वास रहता है ॥ १७ ॥

गृहारम्भ में पञ्चाङ्गशुद्धि

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेङ्गे विपञ्चके।
व्यष्टान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥१८॥

अन्वयः—भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोने अंगे, विपञ्चके शुभैः व्यष्टान्त्यस्थैः खलैः त्र्यायारिगैः गेहारम्भः (शुभः स्यात्) ॥ १८ ॥

भाषा—रविवार और मङ्गल को छोड़ अन्य वारों में; चौथ, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या और परीवा को छोड़ अन्य तिथियों में; धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और रेवतीको छोड़ अन्य नक्षत्रों में; मेष, कर्क, तुला और मकर को छोड़ अन्य लग्नों में; बारहवें, आठवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में शुभ ग्रहों के रहते तथा तीसरे, छठें, ग्यारहवें स्थान में पापग्रहों के रहते घर बनाने का आरम्भ करना शुभ होता है ॥ १८ ॥

देवालयादि स्थानभेद से राहु का मुख

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक् शुभा भवेत् ॥

अन्वयः—देवालये, गेहविधौ, जलाशये (क्रमेण) मेषार्कसिंहार्कमृगार्कतः

त्रिभे (त्रित्रिभे इत्यर्थः) शम्भुदिशः विलोमतः राहोः मुखं (स्यात्), खाते मुखात् पृष्ठविदिक् शुभा भवेत् ॥ १९ ॥

भाषा—देवालय का आरम्भ करने में मीन से लेकर तीन राशियों में सूर्य के रहते, मकान बनाने में सिंह राशि से लेकर तीन राशियों में सूर्य के रहते और जलाशय बनाने में मकर से लेकर तीन राशियों में सूर्य के रहते ईशान आदि कोणों में विपरीत क्रम से राहु का मुख रहता है। मुख से पिछला कोण नीव देने में शुभ होता है। उदाहरण—देवालय बनवाना हो और सूर्य मीन, मेष या वृष में हों तो राहु का मुख ईशान कोण में; मिथुन, कर्क या सिंह में हो तो वायव्य कोण में; कन्या, तुला, वृश्चिक में हो तो नैर्ऋत्य कोण में और धनु, मकर, कुम्भ में हो तो आग्नेयकोण में होता है। जब ईशान कोण में मुख होगा तो उससे पिछला आग्नेय कोण, जब वायव्य कोण में मुख हो तो उससे पिछला ईशान कोण, जब नैर्ऋत्य कोण में मुख होगा तो उससे पिछला वायव्य कोण और जब आग्नेय कोण में मुख होगा तो उससे पिछला नैर्ऋत्य कोण होगा। घर बनवाना हो और सूर्य, सिंह, कन्या या तुला में हो तो राहु का मुख ईशान कोण में; वृश्चिक, धनु या मकर में हो तो वायव्य कोण में इत्यादि। इसी प्रकार जलाशय बनाने में मकर, कुम्भ और मीन में, ईशान कोण में तथा मेष, वृष और मिथुन में सूर्य हों तो राहु का मुख वायव्य कोण में होता है। इसी क्रम से आगे भी समझना चाहिए ॥ १९ ॥

राहुचक्र

राहु	ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	आग्नेय	शुभ
देवालयारम्भ	मी०मे०वृ०	मि०क०सिं०	क०तु०वृ०	ध०म०कुं	सूर्यस्थिति
गृहारम्भ	सिं०क०तु०	वृ०ध०म०	कुं०मी०मे०	वृ०मि०क०	सूर्यस्थिति
जलाशयारम्भ	म०कु०मी०	मे० वृ० मि०	क०सिं०क०	तु०वृ०ध०	सूर्यस्थिति
राहु	आग्नेय	ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	पृष्ठ

घर में कूप बनाने की विधि

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्यवृद्धिः ।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च संपत्पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम् ॥२०॥

अन्वयः—वास्तोः मध्यदेशे कूपे (सति) अर्थनाशः स्यात्, तु (पुनः) ऐशान्यादौ (क्रमेण) पुष्टिः, ऐश्वर्यवृद्धिः, सूनोर्नाशः, मृतिः, च, सम्पत्, शत्रुतः पीडा, च सौख्यं स्यात् ॥ २० ॥

भाषा—यदि घर के मध्य भाग में कुआँ बनाया जाय तो धन का नाश होता है । ईशान आदि आठ दिशाओं में क्रम से पुष्टि, ऐश्वर्यवृद्धि, पुत्रनाश, स्त्रीनाश, गृहस्वामिमरण, सम्पत्ति, शत्रु से पीड़ा, सौख्य, ये फल होते हैं, अर्थात् घर के ईशान कोण में कुआँ बनाया जाय तो पुष्टि और पूर्व दिशा में ऐश्वर्य की वृद्धि होती है इत्यादि ॥ २० ॥

गृहकूपचक्र

ईशान पुष्टि	पूर्व ऐश्वर्यवृद्धि	आग्नेय पुत्रनाश
उत्तर सौख्य	धननाश	दक्षिण स्त्रीनाश
वायव्य शत्रुकृतपीड़ा	पश्चिम सम्पत्ति	नैऋत्य स्वामिमरण

मकान के भीतर कहां कौन घर बनाना चाहिए

स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजश्च धान्य-
भाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः ।
तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्या-
भ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम ॥ २१ ॥

अन्वयः—पूर्वतः (क्रमात्) स्नानस्य पाकशयनास्त्रभुजः धान्यभाण्डारदैवतगृहाणि स्युः । तु [तथा] तन्मध्यतः (क्रमेण) मथनाज्यपुरीषविद्याभ्यासरोदनरतौषधसर्वधाम (कार्यम्) ॥ २१ ॥

भाषा—पूर्व में स्नानघर, आग्नेय में अग्नि तथा रसोई का घर, दक्षिण में शयन का घर, नैर्ऋत्य में अस्त्रों का घर, पश्चिम में भोजन का घर, वायव्य में धान्य के संग्रह का घर, उत्तर में भंडार का घर और ईशान में देवता का घर बनाना चाहिए। इन्हीं आठ दिशाओं के मध्य में मंथन आदि के घर बनाना चाहिए, अर्थात् पूर्व-आग्नेय के मध्य में दही मथने का घर, आग्नेय-दक्षिण के मध्य में घृत रखने का घर, दक्षिण-नैर्ऋत्य के मध्य में विष्ठा त्यागने का घर, नैर्ऋत्य-पश्चिम के मध्य में विद्याभ्यास करने का घर, पश्चिम-वायव्य के मध्य में रोदन करने का घर, उत्तर-वायव्य के मध्य में मैथुन करने का घर, उत्तर-ईशान के मध्य में औषध का घर और ईशान-पूर्व के मध्य में अन्य वस्तुओं के संग्रह का घर बनाना चाहिए ॥ २१ ॥

गृहायुर्दाययोग

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु ।
स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्कारेज्ये तनुत्र्यङ्गसुते शते द्वे २२
लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयः ।
बन्धौगुरुर्व्योम्निशशीकुजार्कजौलाभेतदाशीतिसमायुरालयः ॥२३॥

अन्वयः—जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु शरदां शतं स्थितिः स्यात्, सितार्कारेज्ये तनुत्र्यंगसुते द्वे शते स्थितिः। भृगुज्ञभानुभिः लग्नाम्बरायेषु गुरौ केन्द्रे आलयः वर्षशतायुः स्यात्। गुरुः बंधौ, शशि व्योम्नि, कुजार्कजौ लाभे तदा अशीतिसमायुः आलयः स्यात् ॥ २२ ॥ २३ ॥

भाषा—जिस घर के प्रारम्भ काल में बृहस्पति लग्न में, सूर्य छठें स्थान में, बुध सातवें स्थान में, शुक्र चौथे स्थान में तथा शनैश्चर तीसरे स्थान में स्थित हो उस घर का सौ वर्ष का आयुर्दाय होता है। जिसके आरम्भ में शुक्र लग्न में, सूर्य तीसरे स्थान में, मङ्गल छठें स्थान में, बृहस्पति पाँचवें स्थान में स्थित हो तो उसका दो सौ वर्ष का आयुर्दाय होता है। जिसके आरम्भकाल में शुक्र लग्न में, बुध दसवें स्थान में, सूर्य ग्यरहवें स्थान में और बृहस्पति केन्द्र में स्थित हो उस घर का सौ वर्ष

का आयुर्दाय होता है और जिसके आरम्भ में बृहस्पति चौथे स्थान में, चन्द्रमा दसवें स्थान में और मङ्गल-शनैश्चर, ये दोनों ग्यारहवें स्थान में स्थित हों उस घर की अस्सी वर्ष आयु होती है ॥ २२ ॥ २३ ॥

लक्ष्मीयुक्त गृहयोग

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा ।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ॥२४॥

अन्वयः—शुक्रे स्वोच्चे लग्नगे वा गुरौ स्वोच्चे वेश्मगते, अथवा शनौ स्वोच्चे लाभगे [सति] चिरं लक्ष्म्या युक्तं गृहं (स्यात्) ॥ २४ ॥

भाषा—जिसके आरम्भकाल में उच्चस्थ अर्थात् मीन राशि में स्थित शुक्र लग्न में हो, अथवा कर्क राशि में स्थित बृहस्पति चौथे स्थान में हो, अथवा तुला राशि में स्थित शनैश्चर ग्यारहवें स्थान में हो, वह घर बहुत दिनों तक लक्ष्मी से युक्त रहता है ॥ २४ ॥

परहस्तगामी योग

द्युनाम्बरे यदैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम् ।
अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्याच्चेद्वर्णपोऽबलः ॥ २५ ॥

अन्वयः—यदा एकोऽपि ग्रहः परांशस्थः द्यूनाम्बरे (स्थितः) (तथा) चेत् वर्णपः अबलः (तदा) अब्दान्तः गृहं परहस्तस्थं कुर्यात् ॥ २५ ॥

भाषा—जिसके आरम्भकाल में शत्रु के नवांश में स्थित होकर कोई भी एक ग्रह लग्न के सातवें या दसवें स्थान में हो तो वह उस घर को एक वर्ष के भीतर ही अन्य के हाथ में कर देता है। परन्तु यह योग तभी ठीक उतरता है, जब घर बनानेवाले के वर्ण का स्वामी निर्बल रहता है ॥ २५ ॥

गृहारम्भ में शुभसूचक काल

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः सजीवै-
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात् ।
द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रै-
र्वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात् ॥ २६ ॥

सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः
कौजेऽह्नि वेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात्।
संज्ञैः कदास्त्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैव
वारे सुखपुत्रदं स्यात् ॥ २७ ॥
अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम् ॥२८॥

अन्वयः—सजीवैः पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः तद्वासरेण च कृतं (गृहं) सुतराज्यदं स्यात्। सशुक्रैः द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सितस्य वारे च (कृतं) गृहं धनधान्यदं स्यात् ॥ २६ ॥ सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः कौजे अह्नि (कृतं) वेश्म सुतार्तिदं स्यात्। संज्ञैः कदास्त्रार्यमतक्षहस्तैः ज्ञस्यैव वारे वेश्म सुखपुत्रदं स्यात् ॥ २७ ॥ समन्दैः अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः मन्दवारे कृतं गृहं रक्षोभूतयुतं स्यात् ॥ २८ ॥

भाषा—पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, श्रवण, आश्लेषा या पूर्वाषाढ़ नक्षत्र पर बृहस्पति हो तो बृहस्पति के दिन बनाया हुआ घर पुत्र और राज्य देता है। शुक्रयुक्त विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा या आर्द्रा पर शुक्र हो तो शुक्र के दिन बनाया हुआ घर धन-धान्य का लाभ कराता है। मङ्गलयुक्त हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढ़ अथवा मूल नक्षत्र पर मंगल हो तो मंगल के दिन बनाया हुआ घर अग्नि-भय और पुत्रों को क्लेश देता है। रोहिणी, अश्विनी, पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा अथवा हस्त नक्षत्र पर बुध हो तो बुध के दिन बनाया हुआ घर सुख और पुत्रों की प्राप्ति कराता है। ऐसे ही यदि शनैश्चर पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती अथवा भरणी नक्षत्र में हो और शनैश्चर के दिन घर बनाया गया हो तो उस घर में राक्षस और भूत रहते हैं ॥ २७ ॥ २८ ॥

द्वारचक्र

सूर्यर्क्षाद्युगभैः शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्ततः कोणभै-
र्नागैरुद्वसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत्।

देहल्यां गुणभैर्मृतिर्गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभैः
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम् ॥२९॥

अन्वयः—सूर्यर्क्षात् सिरसि युगभैः (गृहारम्भे) फलं लक्ष्मीः अथ नागैः कोणभैः उद्वसनं ततः शाखासु गजमितैः सौख्यं भवेत् देहल्यां गुणभैः गृहपतेः मृतिः, मध्यस्थितैः वेदभैः सौख्यं भवेत् सुधिया इदं चक्रं विलोक्य शुभं द्वारं विधेयम् । २९ ॥

भाषा--जिस नक्षत्र में सूर्य स्थित हो उससे चार नक्षत्र शिर अर्थात् उत्तमांग में स्थापित करे। इनमें यदि घर का दरवाजा लगाया जाय तो घर में लक्ष्मी हो, तदनन्तर आठ नक्षत्र चारों कोनों में स्थापित करे। इनमें दरवाजा लगावे तो घर उजड़ जाय। उसके बाद आठ नक्षत्र शाखा अर्थात् बाजुओं में स्थापित करे। इनमें घर के रहने वालों को सुख हो। उसके बाद तीन नक्षत्र देहली अर्थात् चौखट में स्थापित करे। इनमें घर के स्वामी का मरण होता है। तदनन्तर चार नक्षत्र दरवाजे के मध्य में स्थापित करे। इनमें भी घर के रहनेवालों को सुख होता है। इसलिये पण्डित को चाहिये कि इस चक्र को अच्छे प्रकार देखकर मकान में दरवाजा लगावे, जिससे वह शुभ हो ॥२९॥

द्वारचक्र

रिस	कोण	ब्राजू	देहली	मध्य
४	८	८	३	४
लक्ष्मी	उद्वसन	सौख्य	स्वामिमरण	सौख्य

इति मुहूर्तचिन्तामणौ वास्तुप्रकरणं समाप्तम् ॥ १२ ॥

गृहप्रवेशप्रकरणम् ।

गृहप्रवेश के लिए शुभ मुहूर्त

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे ।
स्याद्वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे ॥१॥

अन्वयः—सौम्यायने ज्येष्ठतपोन्त्यमाधवे द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभिः जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे यात्रानिवृत्तौ नृपतेः नवे गृहे वेशनं शुभं स्यात् ॥ १ ॥

भाषा—उत्तरायण में तथा ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन और वैशाख में, कृत्तिका आदि सात-सात नक्षत्र पूर्व आदि चारों दिशाओं में विभक्त करने पर जो नक्षत्र दरवाजे के सामने पड़ते हों उनमें और चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्र में; शुक्लपक्ष और दशमी तिथि पर्यन्त कृष्णपक्ष में; जन्मराशि वा जन्मलग्न से तीसरी छठीं, दसवीं, ग्यारहवीं लग्न में अथवा वृष, सिंह, वृश्चिक वा कुम्भ लग्न में विदेश से लौटने पर पुराने अथवा नये घर में राजा का गृहप्रवेश करना शुभ होता है। मनुष्यों में प्रधान होनेके कारण यहाँ राजा का नाम कहा है, इससे सब मनुष्यों को उक्त मुहूर्त्त में गृहप्रवेश करना शुभ होता है ॥ १ ॥

जीर्णगृहप्रवेश

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रावणिकेऽपि सत्स्यात् ।
वेशोम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादि विचारणात्र ॥ २ ॥

अन्वयः—जीर्णे गृहे, अग्न्यादिभयात् नवेऽपि गृहे मार्गोर्जयोः श्रावणिके अपि वेशः सत् स्यात् । तथा अम्बुपेज्यानिलवासवेषु (शुभः स्यात्)। अत्र अस्तादि-विचारणा नावश्यम् ॥ २ ॥

भाषा—कार्त्तिक, अगहन, श्रावण और पूर्वोक्त माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, इन महीनों में तथा शतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा और पूर्वोक्त चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी इन नक्षत्रों में तथा पूर्वोक्त लग्न में किसी अन्य के बनाये हुए या अपने पुराने घर में अथवा अग्नि, जल, राजा आदि के उपद्रवों से नष्ट हो

जाने पर फिर मरम्मत किये हुए या बनाये हुए घरमें प्रवेश करना शुभ होता है। परन्तु यहाँ पूर्वोक्त गृहप्रवेश का मतलब यह है कि शुक्र और बृहस्पति का अस्त, बाल्यावस्था, वृद्धावस्था वा सिंह-मकर राशि में स्थित बृहस्पति वा लुप्त संवत्सर इत्यादि दोषों का विचार आवश्यक नहीं है। विहित तिथि, वार, नक्षत्र आदि में वास्तुपूजा करके गृहप्रवेश करना शुभ होता है ॥ २ ॥

वास्तुपूजा आदि के नक्षत्र

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत्।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः ॥३॥
शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे।
अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम् ॥४॥

अन्वयः—मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे, वास्त्वर्चनं, भूतबलिं च कारयेत्। शुभैः त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः, च पापकैः त्रिषष्ठायगतैः शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ लग्ने व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे, भकूटशुद्धं [यथा स्यात् तथा] अग्रे अम्बुपूर्णं कलशं द्विजान् च कृत्वा वेश्म विशेत् ॥ ३ ॥ ४ ॥

भाषा—चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्टा, शतभिष वा मूल नक्षत्र में पुरोहित को चाहिये कि गृहस्वामी से वास्तुपूजा तथा भूतबलि करावे। क्योंकि वास्तुपूजा आदि किये बिना जो कोई नये घर में प्रवेश करता है वह सम्पूर्ण विपत्तियों को भोगता है। वास्तुपूजा तथा भूतबलि की विधि वसिष्ठसंहिता और प्रयोगरत्न आदि ग्रन्थों में शाखाभेद से कही गयी है। अब गृहप्रवेश में लग्न आदि की शुद्धि कहते हैं— जिसके पांचवें, नवें, पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, ग्यारहवें, दूसरे और तीसरे स्थान में शुभग्रह और तीसरे, छठें, ग्यारहवें स्थान में पापग्रह स्थित हों; चौथे और आठवें स्थान में कोई ग्रह न हो; ग्रह के स्वामी की जन्मलग्न और जन्मराशि से आठवीं लग्न न हो तथा रविवार और मंगलवार को छोड़ अन्य वारों में तथा चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या को छोड़ अन्य तिथियों में, चैत्र को छोड़ अन्य महीनों में; मेष

कर्क तुला और मकर को छोड़ अन्य लग्न में; घर के स्वामी को चाहिये कि जल से भरा हुआ पल्लवयुक्त कलश और ब्राह्मणों को आगे करके घर में प्रवेश करे। षष्ठाष्टक आदि भकूट और वर्ण वश्य तारादि शुद्ध होने चाहिये ॥ ३ ॥ ४ ॥

वामसूर्य

वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चभे प्राग्वदनादि मन्दिरे।

अन्वयः—मृत्युसुतार्थलाभतः पञ्चमे अर्के (क्रमेण) प्राग्वदनादिमन्दिरे वामः रविः (भवति) ॥

भाषा—लग्न से आठवें, नवें, दसवें और ग्यारहवें स्थान में स्थित सूर्य पूर्वद्वारवाले घर में प्रवेश करनेवाले के वाम, लग्न से पाँचवें, छठें, सातवें, आठवें और नवें स्थान में सूर्य दक्षिण द्वारवाले घर में प्रवेश करनेवाले के वाम; लग्न से दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें और छठें स्थान में सूर्य पश्चिम द्वारवाले घर में प्रवेश करनेवाले के वाम; लग्न से ग्यारहवें, बारहवें, दूसरे और तीसरे स्थान में सूर्य उत्तर द्वारवाले घर में प्रवेश करनेवाले के वाम पड़ता है। वाम सूर्य गृहप्रवेश करनेवाले को अति शुभ फल देता है।

वामसूर्यचक्र

पूर्वमुख	लग्न से	८	९	१०	११	१२	वामसूर्य
दक्षिणमुख	लग्न से	५	६	७	८	९	वामसूर्य
पश्चिममुख	लग्न से	२	३	४	५	६	वामसूर्य
उत्तरमुख	लग्न से	११	१२	१	२	३	वामसूर्य

तिथियों के क्रम से पूर्व आदि द्वारवाले घरों में प्रवेश।

पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तरानने॥५॥

अन्वयः—पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे, नन्दादिके तिथौ याम्यजलोत्तरानने गृहे (प्रवेशः) शुभः (स्यात्) ॥ ५ ॥

भाषा—पञ्चमी, दशमी और पूर्णमासी में पूर्वद्वारवाले घर में; परीवा, छठ और एकादशी में दक्षिणद्वारवाले घर में, द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी में पश्चिम द्वारवाले घर में और तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी में उत्तर द्वारवाले घर में प्रवेश करना शुभ होता है ॥ ५ ॥

गृहप्रवेश में कलशवास्तु चक्र

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः
प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे ।
श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे
रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत् सर्वदा ॥६॥

अन्वयः—कुम्भे (कुम्भचक्रे) वक्त्रे रविभात् भूः (एकं नक्षत्रं तत्) प्रवेशसमये (चेत् तदा) अग्निदाहः (स्यात्) कृताः प्राच्यां (तत्र) उद्वसनं कृताः यमगताः (तत्र) लाभः पश्चिमे कृताः (तत्र) श्रीः, उत्तरे वेदाः (तत्र) कलिः, गर्भे युगमिताः (तत्र) विनाशः, गुदे रामाः (तत्र) स्थैर्यम्, अतः अनलाः कण्ठे (तत्र प्रवेशे सति) सर्वदा स्थिरत्वं भवेत् ॥ ६ ॥

भाषा—घड़े के आकार का कलशचक्र बनावे। सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हों, उस नक्षत्र को उसके मुख में स्थापित करे। उसमें यदि गृहप्रवेश हो तो घर अग्नि से जले। उस नक्षत्र के अगले चार नक्षत्र उस चक्र के पूर्व में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो घर उजड़ जाय। उसके बाद चार नक्षत्र दक्षिण दिशा में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो लाभ हो। फिर चार नक्षत्र पश्चिम में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो घर में लक्ष्मी हो। उसके बाद चार नक्षत्र उत्तर में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो घरवालों में झगड़ा हो। फिर चार नक्षत्र उस चक्र के मध्य में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो विनाश हो। फिर तीन नक्षत्र गुदा में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो घर की स्थिरता हो। फिर तीन नक्षत्र कण्ठ में स्थापित करे। उनमें यदि गृहप्रवेश हो तो भी घर की स्थिरता हो ॥ ६ ॥

गृहप्रवेश के पश्चात् कर्तव्य विधि

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तम् ।
शिल्पज्ञदैवज्ञविधिज्ञपौरान् राजार्चयेद्भूमिहिरण्यवस्त्रैः ॥ ७ ॥

इति श्रीदैवज्ञरामविरचिते मुहूर्त्तचिन्तामणौ
वास्तुप्रकरणं समाप्तम् ॥ १२ ॥

अन्वयः—एवं राजा सुलग्ने वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तं स्वगृहं प्रविश्य शिल्पज्ञदैवज्ञविधिज्ञपौरान् भूमिहिरण्यवस्त्रैः अर्चयेत् ॥ ७ ॥

भाषा—राजा को चाहिये कि इस प्रकार शुभ मुहूर्त्त में वस्त्र, मण्डप, वन्दनवार, फूलों की माला, वेदध्वनि इत्यादि शुभ वस्तु संयुक्त अपने घर में प्रवेश करके भूमि, सुवर्ण, वस्त्र आदि से शिल्पी, ज्योतिषी, पुरोहित और पुरवासियों का सम्मान करे ॥ ७ ॥

ग्रंथकर्तृवंशवर्णनम् ।

आसीद्धर्मपुरे षडङ्गनिगमाध्येतृद्विजैर्मण्डिते
ज्योतिर्वित्तिलकः फणीन्द्ररचिते भाष्ये कृतातिश्रमः ।
तत्तज्जातकसंहितागणितकृन्मान्यो महाभूभुजां
तर्कालंकृतिवेदवाक्यविलसद्बुद्धिः स चिन्तामणिः ॥ १ ॥
ज्योतिर्विद्गणवन्दिताङ्घ्रिकमलस्तत्सूनुरासीत् कृती
नाम्नाऽनन्त इति प्रथामधिगतो भूमण्डलाहस्करः ।
यो रम्यां जनपद्धतिं समकरोद्दुष्टाशयध्वंसिनीं
टीकां चोत्तमकामधेनुगणितेऽकार्षीत्सतां प्रीतये ॥ २ ॥
तदात्मज उदारधीर्विबुधनीलकण्ठानुजो
गणेशपदपङ्कजं हृदि निधाय रामाभिधः ।
गिरीशनगरे वरे भुजभुजेषु चन्द्रै१५२२ मिंते
शके विनिरमादिमं खलु मुहूर्तचिन्तामणिम् ॥
इति श्री दैवज्ञरामविरचितो मुहूर्तचिन्तामणिः समाप्तः ॥ १४ ॥

अन्वयः--षडङ्गनिगमाध्येतृद्विजैः मण्डिते धर्मपुरे (नगरे) ज्योतिर्विंत्तिलकः फणीन्द्ररचिते भाष्ये कृतातिश्रमः तत्तज्जातकसंहितागणितकृत् तर्कालंकृतिवेदवाक्यविलसद्बुद्धिः महाभूभुजां मान्यः स चिन्तामणिः आसीत्। तत्सूनुः ज्योतिर्विद्गणवन्दितांघ्रिकमलः कृती नाम्ना अनन्त इति प्रथां अधिगतः भूमण्डलाहस्करः आसीत्, यः दुष्टाशयध्वंसिनीं रम्यां जनपद्धतिं समकरोत् च पुनः सतां प्रीतये उत्तमकामधेनुगणिते टीकां अकार्षीत्, तदात्मजः उदारधीः विबुधनीलकण्ठानुजः रामाभिधः वरे गिरीशनगरे (काशीपुरे) हृदि गणेशपदपङ्कजं निधाय भुजभुजेषुचन्द्रैर्मिते शके इमं मुहूर्त्तचिन्तामणिं विनिरमात् खलु ॥ १-३ ॥

भाषा--नर्मदा नदी के किनारे विदर्भ देश में शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द, निरुक्त इन छः अंगों समेत ऋग्, यजुः, साम और अथर्व इन चारों वेदों के पढ़ने-पढ़ानेवाले, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों से भूषित धर्मपुर नामक ग्राम में ज्योतिष के जाननेवालों में श्रेष्ठ प्रसिद्ध श्रीचिन्तामणि नाम के ब्राह्मण थे। उन्होंने श्रीशेष जी के बनाये हुए हुए महाभाष्य ग्रन्थ में अतिशय परिश्रम किया था और जातक, संहिता तथा गणित इन तीनों विषयों पर ज्योतिष के कई प्रसिद्ध ग्रन्थ बनाये थे। वे न्यायशास्त्र, अलंकार, मीमांसा और वेदान्त आदि के ज्ञाता तथा महाराजाओं के महामान्य थे ॥ १ ॥ उनके पुत्र अनन्त नाम से प्रसिद्ध हुए। वे ज्योतिष विद्या के पढ़ाने में पृथ्वी पर सूर्य के समान प्रकाशित थे। ज्योतिषियों का समूह उनके चरणारविन्दों की वन्दना करता था। उन्होंने जन्मपद्धति की रचना करके ज्योतिष के अनभिज्ञ लोगों की अनभिज्ञता को नष्ट की और सज्जनों की प्रसन्नता के लिये कामधेनु नामक पंचांगबोधक गणित के उत्तम ग्रंथ पर टीका की ॥ २ ॥ अनन्त ज्योतिर्वित् के पुत्र और पण्डित नीलकण्ठ के छोटे भाई उदारबुद्धि राम नामक आचार्य ने श्रीगणेश जी के चरणों का स्मरण करके १५२२ शाके में श्रीकाशीजी में मुहूर्त्तचिन्तामणि की रचना की ॥ ३ ॥

